



पंडित सन्तलाल विरचित-

श्री सिद्धचक्र विधान

(हवन विधि सहित)



परस्परपग्रहो जीवानाम्

--: प्राप्ति स्थान :-

दिगम्बर जैन पुस्तकालय

खपाटिया चकला, गांधीचौक, सूरत-३.

टे. नं. (0261) 427621



मूल्य - ५०=००



पंडित सन्तलाल विरचित—

श्री सिद्धचक्र विधान

(हवन विधि सहित)



परस्परपद्महो जीवानाम्

मूल्य - ५०=००

प्रकाशक :

शैलेश डाह्याभाई कापड़िया

१०/२४३, खपाटिया चकला, गांधीचौक,
सूरत-३९५००३. टे.नं. (०२६१) ४२७६२१

प्राप्ति स्थान :

दिगम्बर जैन पुस्तकालय

१०/२४३, खपाटिया चकला, गांधीचौक,
सूरत-३९५००३. टे.नं. (०२६१) ४२७६२१

टाईप सेटिंग एवं ऑफसेट प्रिन्टींग

“जैन विजय लेसर प्रिन्ट्स”

सूरत-३.

सिद्धचक्र विधान की विधि

यह विधान अष्टाह्निका पर्वमें विशेष रूपसे किया जाता है। इस विधानकी विधिवत् करने से अनेकों कष्ट दूर होते हैं। यह विधान सती मैनासुन्दरीने किया था, जिसके प्रभावसे श्रीपाल तथा अन्य सातसौ कुष्ठ रोगियोंका रोग दूर हुआ था।

आचार्य

स्याद्वाद विद्यामें प्रवीण, दोषोंको जाननेवाला, आलस्य रहित, नीरोग, क्रियाकुशल, शीलवान, इन्द्रिय विजेता, देव-शास्त्र-गुरुको प्रमाण माननेवाला होना चाहिये।

विधान स्थान

मंदिरजीमें प्रशस्त स्थानमें हो। उस जगहको अच्छा सजाना चाहिये। घण्टा, पताका, तोरणोंसे युक्त हो। चारों कोनोंमें ४ (चार) कलश रखें, जहाँ पर स्त्रियाँ मङ्गल गीत गाती हों। भेरी, मृदङ्ग, झाँझ, मजीरा आदि बाजोंसे युक्त हो।

मांडना की विधि

मण्डल पूरने के लिए चौकी कमसे कम ९ फुट लम्बी-चौड़ी होनी चाहिये। चौकीके ऊपर साफ धुली चादर बिछाकर चौकीके चारों तरफ बाँध देनी चाहिये, जिसमें झूल न हो। मांडनाका नमूना ब्लॉकमें देखें।

इन ८ खानोंमें पाँच रङ्गमें रंगे हुए क्रमसे ८-१६-३२-६४-१२८-२५६-५१२-१०२४ पुञ्ज रखे जाने चाहिये या पुञ्जकी जगह पर 'श्री' लिखा जाये तो उत्तम है।

मांडने की चौकी पर कलश जिनमें पाँच-पाँच हल्दीकी गाँठ, पाँच-पाँच सुपारी, एक छोटी-सी चाँदीकी डली, पञ्चरत्न या नवरत्नकी एक-

एक पुड़िया, थोड़ा-थोड़ा मेवा, थोड़ी-सी दूब डालकर एक-एक नारियलको लाल कपड़ेसे लपेट कर चारों कलशों पर रख देना चाहिये, फिर कलावे (मौली) से एक कलशको दूसरे कलशसे, दूसरे को तीसरे से एवं तीसरेको चौथे तक तीन बार लपेट देना चाहिये यानी फेरा लगा कर बाँध दे।

बीचमें “ॐ” बनाकर उस पर चौकी रखे, चौकी पर सिंहासन रख कर “सिद्ध-यन्त्र” की स्थापना करे और ऊपर में छत्र लगावे। भगवानको उत्तर या पूर्व दिशामें बिराजमान करे। आगे में एक स्थापना (ठोना) रखकर बगलमें एक कलश रखें। वेदीके पासमें अखण्ड दीपक जलावे, उसकी ज्योति पाठकी समाप्ति तक रहे (अर्थात् दीपक हमेशा प्रज्वलित रहे)। दीपक जलाते समय मन्त्र पढ़े- “ॐ ह्रीं अज्ञान तिमिर हरं दीपकं संस्थापयामि।” वेदी पर शास्त्रजी और अष्ट मङ्गल द्रव्य रखे।

जप की विधि

जप कमसे कम ८००० हों। अगर कोई करना चाहे तो १ लाख करना चाहिये। इसमें १० या ११ आदमी जप करें तो उत्तम है। जप करनेवालेको ब्रह्मचर्यसे रहना चाहिये-साथ ही मर्यादित भोजन करना चाहिए एवं तख्त या जमीन पर सोना चाहिये। जप शाम-सुबह दोनों समय कर सकते हैं। जप करनेवाले की केशरिया धोती, दुपट्टा या बनियान प्रतिदिन की धुली होनी चाहिये।

जप करनेवालोंके बैठनेके लिये एक-एक आसन हों तथा उनके आगे आगे एक-एक पाटा हो। प्रत्येक पाटे पर घृतका दीपक जलता रहे और एक-एक धूपदान व एक-एक सूतकी माला (जिसके द्वारा मन्त्र जपा जाय) रखे रहें। पाटे पर लौंग गिन कर रख ले। १ माला पूर्ण होने पर १ लौंग अग्निमें डाल दे तथा जब उठे तब एक कापीमें लिख दे, ताकि मन्त्रकी गणनामें भूल न पड़े।

जल शुद्धि मन्त्र

जलको शुद्ध करते समय कलशों पर चन्दन छिड़के और यह मन्त्र पढ़े--

ॐ हां हीं हुं ह्रीं हः नमोऽर्हते भगवते पद्ममहापद्म-
तिगिंछकेसरिपुण्डरीकमहापुंडरीकगंगासिंधुरोहिद्रोहितास्या-
हरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्यकूला-
रक्तारक्तोदापयोधि शुद्धजलसुवर्णघटप्रक्षालितनवरत्नगन्धाक्षत-
पुष्पार्चितमामोदकं पवित्रं कुरु कुरु इं इं इ्रौं इ्रौं वं
वं हं हं सं सं तं तं पं पं द्वां द्वां द्रीं द्रीं हं सः स्वाहा ।

अंग शुद्धि

सौगंध्यसंगतमधुव्रतझंकृतेन संवण्यमानमिव गन्धमनिन्द्यमादौ ।
आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्द्यं पादारविन्दमभिवंद्य जिनोत्तमानाम् ॥

ॐ हीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणी अमृतं स्नावय स्नावय सं सं
क्लीं क्लीं ब्लूँ ब्लूँ द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय सं हं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा ।

ॐ हां हीं हूँ ह्रीं हः अ सि आ उ सा अस्य सर्वाङ्गशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ।

गन्धं आरोपयामि । (सब अपने शरीर पर हाथ फेरें)

वस्त्र शुद्धि

धौतान्तरीयं विधुकान्तिसूत्रैः सद्ग्रन्थितं धौतनवीनशुद्धम् ।

नग्नत्वलब्धिर्नभवेच्च यावतू संधार्यते भूषणमूरूभूम्याः ॥

संव्यानमंचददशया विभान्तमखडधौताभिनव मृदुत्वम् ।

संधार्यते पीतसितांशुवर्णमंशोपरिष्ठाद् धृतभूषणांकम् ॥

तिलक

पात्रेऽर्पितं चन्दनमौषधीशं शुभं सुगन्धाहतचञ्चरीकं ।

स्थाने नवांके तिलकाय चर्च्य न केवलं देहविकारहेतोः ॥

शिखा, ललाट, कंठ, हृदय, कान, भुजा, काँख, हाथ एवं नाभि
इस प्रकार नव तिलक करते समय यह मन्त्र पढ़े- ॐ हां हीं हूं हौं
हः अ सि आ उ सा म म सर्वाङ्गशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ।

रक्षा बन्धन

सम्यक् पिनद्धनवनिर्मलरत्नपंक्तिरौचर्बृहद्वलयजातबहुप्रकारं ।

कल्याणनिर्मितमहं कटकं जिनेशपूजाविधानललिते स्वकरे करोमि ॥

ॐ ह्रीं णमो अरहन्ताणं रक्ष रक्ष स्वाहा इति कंकणं अवधारयामि ।

यज्ञोपवीत धारण

पूर्वं पवित्रतरसूत्रविनिर्मितं यत् प्रीतः प्रजापतिरकल्पयदंगसंगि ।

सदभूषणं जिनमहे निजकंठधार्य यज्ञोपवीतमहमेष तदाऽतनोमि ॥

ॐ नमः परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकृतायार्ह रत्नत्रयस्वरूपं
यज्ञोपवीतं दधामि मम गात्रं पवित्रं भवतु अहं नमः स्वाहा ।

मुद्रिका धारण

प्रोत्फुल्लनीलकुलिशोत्पलपद्मरागनिर्जत्करप्रकरबन्धसुरेन्द्रचाप ।

जैनाभिषेकसमयेऽङ्गुलिपर्वमूले रत्नाङ्गुलीयकमहं विनिवेशयामि ॥

ॐ ह्रीं रत्नमुद्रिकां अवधारयामि स्वाहा ।

मुकुट धारण

पुन्नागचंपकयोरुहकिं करातजातिप्रसूननवकेशरकुन्दमाद्यम् ।

देव! त्वदीयपदपंकजसत्प्रसादात् मूर्ध्नि प्रणामवति शेखरकंदधेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं मुकुट अवधारयामि स्वाहा ।

कुण्डल धारण

एकत्र भास्वानपरत्र सोमः सेवां विधातुं जिनपश्य भक्त्या ।
रूपं परावृत्य च कुण्डलस्य मिषादवाप्ते इव कुण्डले द्वै ॥
ॐ ह्रीं कुण्डल अवधारयामि स्वाहा ।

हार धारण

मुक्तावलीगोस्तनचन्द्रमाला-विभूषणान्युत्तमनाकभाजां ।
यथार्हसंसर्गगतानि यज्ञलक्ष्मीसमालिंगनकृधेऽहम् ॥
ॐ ह्रीं हारं अवधारयामि स्वाहा ।

भूमि शुद्धि विधान

ॐ ह्रीं वायुकुमाराय सर्वविघ्नविनाशाय महीं पूतां कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा ।

इसके बाद डाभ पूले को जलमें भिगो कर भूमि पर छिड़के तब यह श्लोक मन्त्र पढ़े-

ये सन्ति केचिदिहि दिव्यकुलप्रसूता नागाः प्रभूतबलदर्पयुता विबोधा ।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्थ(जपनस्य) भूमिम्
ॐ झौं झीं झूं झौं झः ॐ ह्रीं मेघकुमाराय धरां प्रक्षालय अं हं
तं पं स्वं झं झं यं क्षः फट् स्वाहा ।

इसके बाद मण्डप रक्षार्थ चार प्रकार के देव तथा दिक्पालोंको आह्वान और पुष्पक्षेपण करे ।

चतुर्णिकायामरसंघ एष आगत्य यज्ञे विधिना नियोगम् ।
स्वीकृत्य भक्त्याहि यथार्हदेशे सुस्था भवंत्वाह्निककल्पनायाम् ॥

हे जिन-भक्त चतुर्णिकाय देवों । तुम हमारे इस यज्ञमें पधार कर यथायोग्य विधिपूर्वक अपने नियोगको अङ्गीकार कर तिष्ठो और अपनी जिन-भक्ति रूप सेवामें सावधान होवो । (यह पढ़ कर पुष्पक्षेपण करे)

फिर पवन कुमार जातिके देवोंको कहे और पुष्पक्षेपण करे।

आयात मारुतसुराः पवनोद्भटाशाः, संघट्टसंलसितनिर्मलतांतरीक्षाः ।
वात्यादिदोषपरिभूतवसुन्धरायां प्रत्यूहकर्मनिखिलं परिमार्जयन्तु ॥

हे पवन कुमार देवों! तुम अपनी उद्भट वायुके द्वारा दशों दिशाओं और आकाश तथा भूमिको निर्मल करनेवाले हो। हमारे इस यज्ञमें आओ और वायु सम्बन्धी समस्त दोषोंको दूर करो। हमारे यज्ञ-सम्बन्धी विघ्नोंका नाश करों।

फिर वास्तुकुमार जातिके देवोंको कहे और पुष्पक्षेपण करें।

आयात वास्तुविधिषूद्भटसन्निवेशा योग्यांशभागपरिपुष्टवपुः प्रदेशाः ।
अस्मिन्मखेरुचिरसुस्थिभूषणांकके सुस्था यथार्हविधिना जिनभक्तिभाजः ॥

हे वास्तुकुमार जातिके देवों! तुम अपने योग्य अंशको विभाग कर पुष्ट देह संयुक्त हमारे इस यज्ञ विधानमें सुन्दर भूषणोंसे सजित होकर जिनेन्द्रकी भक्तिपूर्वक पधारो, योग्य स्थानमें सन्निवेश कर तिष्ठो।

फिर मेघकुमार जातिके देवोंको कहे और पुष्पक्षेपण करे।

आयात निर्मलनभःकृतसन्निवेशा मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।
अस्मिन्मखे विकृतविक्रिययानितान्ते सुस्था भवन्तु जिनभक्तिमुदाहरन्तु ॥

हे मेघकुमार जातिके देवों! तुम निर्मल आकाशके धारणहारे हमारे इस यज्ञ विधानमें आओ और अपनी विक्रिया ऋद्धि तथा आनन्दसे युक्त हो जिनेन्द्रकी भक्तिमें सावधान हो तिष्ठो और मेघ सम्बन्धी विघ्न दूर करो।

फिर अग्निकुमार देवोंको कहे और पुष्पक्षेपण करे।

आयात पावकसुराः सुरराजपूज्य-संस्थापनाविधिषु संस्कृविक्रियाहर्हाः ।
स्थानेयथोचितकृते परिवद्धकक्षाः सन्तु श्रियंलभतपुण्यसमाजभाजां ॥

हे अग्निकुमार जातिके देवों! यह इन्द्रों द्वारा पूज्य जिनेन्द्रका यज्ञ विधान है, इसमें तुम आओ। तुम अपनी संस्कार रूप क्रियाके योग्य

हो, अतः अपने योग्य स्थानमें कटिबद्ध होवो और इस पुण्यशाली समाजकी शोभा बढ़ाओ तथा अग्नि सम्बन्धी सभी विघ्न दूर करो।

फिर नागकुमार देवोंको कहे और पुष्पक्षेपण करे।

नागाःसमाविशतभूतलसंनिवेशाःस्वां भक्तिमुल्लसितगात्रतया प्रकाश्य ।
आशीविषादिकृतविघ्नविनाशहेतोः स्वास्था भवन्तु निजयोग्यमहासनेषु

हे नागकुमार देवो! तुम यहां समावेश करो। तुम पृथ्वीतलमें रहनेवाले हो। तुम अपनी भक्तियुक्त विक्रियाको प्रकाशित करते हुए आशीविष (सर्प) कृत उपद्रवोंको दूर करो और अपने योग्य स्थान पर तिष्ठो।

फिर दशों दिक्पालोंके लिए पुष्पक्षेपण करे।

यह श्लोक पढ़े और दशों दिशाओं में पुष्पक्षेपण करे।

इन्द्राग्निदण्डधरनैऋतपाशपाणि-वायूत्तरेण शशिमौलिफणीन्द्रचन्द्राः ।
आगत्ययूयमिहसानुचराःस्त्रचिह्नाःस्वंस्वंप्रतीच्छतबलिंजिनाभिषेके ॥

ॐ इन्द्राय स्वाहा, ॐ अग्नये स्वाहा, ॐ यमाय स्वाहा, ॐ नैऋत्याय स्वाहा, ॐ वरुणाय स्वाहा, ॐ पवनाय स्वाहा, ॐ धनदाय स्वाहा, ॐ ईशानाय स्वाहा, ॐ धरणेन्द्राय स्वाहा, ॐ सोमाय स्वाहा।

इसके बाद इस मण्डलकी वेदीमें जिन भगवानकी प्रतिमा बिराजमान करनी हो, उन्हें (भगवान को) पुरानी वेदीसे लाकर एक संदली पर बिराजमान करे और उपर्युक्त प्रासुक जलसे प्रभुका न्हवन करे। तब यह आगे लिखा श्लोक पढ़े और भगवानके शीश पर जल धारा दे।

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटी-संलग्नरत्नकिरणच्छविधूसरांधिम् ।

प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टै र्भक्त्या जलैर्जिनपति बहुधाभिषिंचे ॥

ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशति-
तीर्थङ्कर परमदेवाभिषेकर ममे आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे
आर्यखण्डे..... देशे..... नाम्नि नगरे..... श्रीशुभसम्बत्सरे..... सम्बत्सरे.....

मासानामुत्तमे..... मासे..... पक्षे..... पर्वणि..... शुभदिने मुनिआर्यिकाश्रावक-
श्राविकाणां सकलकर्म क्षयार्थं जलेनाभिषिंचे नमः।

यह पढ़ता हुआ भगवानके सिर पर जल धारा दे-मङ्गल बोलने
हों तो बोले, अगर विशेष शान्तिधारा देनी हो तो अन्यत्र है, वहाँ से
पढ़े। फिर भगवानको वेदीमें बिराजमान करे।

इसके बाद सिद्ध यन्त्रका प्रक्षाल करे, तब यह मन्त्र पढ़े।

“ॐ भूर्भुवः स्वरिह एतद्विघ्नोघवारकं यन्त्रमहं परिषिंचयामि।”

इस प्रकार नहवन करके यंत्रको मांडलेके सिंहासन पर बिराजमान
कर दे। इसके बाद जप स्थानमें जाकर आचार्यके दिये हुए निम्नलिखत
मंत्रमें से किसी एक मंत्रकी एक-एक या दो-दो मालायें फेरे।

‘ॐ ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं हः असिआउसा सर्वशांति कुरु कुरु स्वाहा’ अथवा
‘ॐ ह्रीं अहं असिआउसा नमः।’ फिर भगवानके सामने नित्य पूजायें तथा
पाठका आरंभ करे, तब वह श्लोक पढ़कर भगवानसे प्रार्थना करे--

श्रीमन्मंदर मस्तके शुचिजलैधोतेसदर्भाक्षते,
पीठे मुक्तिवरंनिधाय रचितंत्वत्वादपुष्पस्त्रजं।

इन्द्रोहं निज भूषणार्थममलं यज्ञोपवीतं दधे,
मुद्राकंकणशेखरानपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे॥

हे भगवान! मैं शुद्ध जलसे प्रक्षालन किये हुए और दर्भ अक्षत
आदिसे सुशोभित तथा मेरु पर्वतके समान पवित्र सिंहासन पर आप
(भगवान अर्हन्तदेव) को स्थापित करता हूँ तथा आपके चरणकमलोंकी
पवित्र मालाको धारण कर अपने में इंद्रकी कल्पना करता हूँ। आपका
अभिषेक करने के समय इंद्रके समान अपने शरीरको सुशोभित करने
के लिए मुकुट, कंकण, कुण्डल, यज्ञोपवीत, तिलक आदि सब आभूषण
धारण करता हूँ। पश्चात् नित्य नियम, पञ्चमेरु, नन्दीश्वर आदि तथा वेदीमें

बिराजमान तीर्थङ्करकी पूजन करके यंत्रकी पूजा करे। इस प्रकार आठ दिन तक विधान करे, सुबह-शाम जप करे और भगवानकी आरती तथा गाना, बजाना आदि उत्सव करे। पूर्णमासीको या अन्य निश्चित तिथिको पाठ पूरा हो जाने पर शुभ मुहूर्तमें हवन करे।

यन्त्र पूजा

परमेष्ठिन् जगत्त्राणकरणे मङ्गलोत्तम।

शरणा इति तिष्ठतु मे सन्निहितोऽस्तु पावनाः ॥

ॐ ह्रीं अहं असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूताः! अत्रवतरतावतरते संवौषद् आह्वाननं। ॐ ह्रीं असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूताः! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं। ॐ ह्रीं अहं असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूता! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषद् सन्निधानं।

पंकेरुहायातपरागपुञ्ज सौगन्ध्यमद्भि सलिलै पवित्रैः।

अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

काश्मीरकर्पूरकृतद्रवेण, संसारतापपहतौ युतेन।

अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो सुगन्धं निर्व. स्वाहा।

शाल्यक्षतैरक्षतमूर्तिमाद्भिरब्जादिवासेन सुगन्धिमद्भिः।

अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कदम्बजात्यादिभवैः सुरद्रुमैर्जातैर्मनोजातविपाश दक्षैः।

अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पीयूषपिण्डैश्च शशांकान्तिस्पर्शद्विरिष्टैर्नयनप्रियैश्च ।

अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तान्धकारप्रसरैः सुदीपैर्घृतोद्भवै रत्नविनिर्मितैर्वा ।

अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वकीय धूमेन नभोवकाश-व्यापद्भिरुद्यैश्च सुगन्धधपः ।

अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

नारङ्गपगादिफलैरनर्घ्यैर्हन्मानसादिप्रियतर्पकैश्च ।

अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अम्भश्चन्दननन्दनाक्षतरूद्भूतैर्निवेद्यैर्वरैः ।

दीपार्धूपफलोत्तमैः समुदितैरेभिः सुवर्णास्थितैः ॥

अर्हत्सिद्धसुसूरिपाठकमुनीन्, लोकोत्तमान्मङ्गलान् ।

प्रत्यहोघनिवृत्तये शुभकृतः, सेव्ये शरण्यानहम् ॥

ॐ ह्रीं मङ्गलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ प्रत्येक पूजनम्

कल्याणपञ्चककृतोदयमासमीश-मर्हतमच्युतचतुष्टयभासुरांगम् ।

स्याद्वादवागमृतसिन्धुशशांककोटि-मर्चं जलादिभिरनन्तगुणालयं तम् ॥

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयसमवशरणादिलक्ष्मीविभ्रते अर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्व ।

कर्माष्टकेध्ववयमुत्पथमाशु हुत्वा सद्ध्यानवह्निविसरे स्वयमात्मवन्तम् ।

निःश्रेयसामृतसरस्यथ संनिनाय, तं सिद्धमुच्चपददं परिपूजयामि ॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मकाष्ठगणभस्मीकृते सिद्धपरमेष्ठिने अर्घं निर्व. स्वाहा ।

स्वचारषञ्चकमपिस्वयमाचरन्ति, ह्याचारयन्ति भविकान्निजशुद्धिभाजः

तानर्चयामि विविधैः शललादिभिश्च प्रत्यूहनाशनविधौ निपुणान् पवित्रैः

ॐ ह्रीं पञ्चाचारपरायणाय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंगांगवाह्यपरिपाठनलालसाना-मष्टांज्ञानपरिशीलनभावितानाम् ।

पादारबिन्दयुगलं खलु पाठकानां शुद्धैजलादिवसुभिः परिपूजयामि ॥

ॐ ह्रीं द्वादशांगपठनपाठनोद्यताय उपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्व. स्वाहा ।

आराधनासुखविलासमहेश्वराणां सद्धर्मलक्षणमयात्मविकस्वराणां ।

स्तोतुंगुणान् गिरिवनादिनिवासिनां वैष्णोऽद्य तच्चरणपीठभुवं नमामि

ॐ ह्रीं त्रयोदशप्रकारचारित्राराधकसाधुपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अहंन्मंगलमर्चामि जगन्मंगलदायकम् ।

प्रारब्धकर्मविघ्नौघप्रलयाय पयोमुखम् ॥

ॐ ह्रीं अहंनुज्जलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चिदानन्दलसद्बीचिमालिनं गुणशालिनम् ।

सिद्धमंगलमर्चेहं सलिलादिभिरुज्ज्वलैः ॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

बुद्धिक्रियारसतपोविक्रियौषधिमुख्यकाः ।

ऋद्धयो यं न मोहन्ति साधुमंगलर्चये ॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

लोकालोकस्वरूपं च प्रज्ञप्तं धर्ममंगलम् ।

अर्चे वादित्रनिर्घोषगीतनृत्यैः वनादिभिः ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्ममंगलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

लोकोत्तमोऽर्हन् जगतां भवबाधाविनाशकः ।

अर्च्येतेऽर्घेण स मया कुकर्मगणहानये ॥

ॐ ह्रीं लोकोत्तमाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

विश्वाग्रशिखर स्थायी सिद्धलोकोत्तमो मया ।

मह्यते महसामन्दचिदानन्दसुमेदुरः ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

रागद्वेषपरित्यागी साम्यभावबोधकः ।

साधुलोकोत्तमोर्घेण पूज्यते सलिलाक्षतैः ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमा अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्तमक्षमया भास्वान् सद्धर्मो विष्टपोत्तमः ।

अनन्तसुखसंस्थाने यज्यतेऽभ्योऽक्षतादिभिः ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसधर्मलोकोत्तमाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सदाहन् शरणं मन्ये नान्यथा शरणं मम ।

इति भावविशुद्ध्यर्थमर्हयामि जलादिभिः ॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छरणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

व्रजामि सिद्धशरणं परावर्तनपञ्चकं ।

भित्वा स्वसुखसन्दोहसम्पन्नमिति पूजये ॥

ॐ ह्रीं सिद्धशरणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

आश्रये साधुशरणं सिद्धान्तप्रतिपादनैः ।

न्यक्कृताज्ञानतिमिरमिति शुद्ध्यया यजामि तम् ॥

ॐ ह्रीं साधुशरणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

धर्म एव सदा बन्धुः स एव शरणं मम ।

इह वान्यत्र संसारे इति तं पूजयेऽधुना ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसधर्मशरणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

संसारदुःखहननेनिपुणं जनानां, नाद्यन्तचक्रमिति सप्तदशप्रमाणम्
संपूजयेविविधभक्तिभरावनम्रः शान्तिप्रदं भुवनमुख्यपदार्थसार्थैः

ॐ ह्रीं अर्हदादिसप्तदशमन्त्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला

विघ्नप्रणाशनविधौ सुरमस्यमाथा, अग्रेसरं जिनवदन्ति भवन्तमिष्टम् ।
नाद्यन्तचक्रयुगवर्तिनमत्र कार्ये, गार्हस्थ्यधर्मविहितेऽहमपि स्मरामि ॥
गणानां मुनीनामधीशत्वतस्ते, गणेशाख्यया ये भवन्तं स्तुवन्ति ।
सदा विघ्नसन्दोहशान्तिर्जनानां करे संलुठत्यायतश्रेयसानाम् ॥
कलेः प्रभावात्कलुषाशयस्य, जनेषु मिथ्यामदवासितेषु ।
प्रवर्तितोऽन्यो गणराजनाम्ना, लम्बोदरो दन्तिमुखो गणेशः ॥
रुद्रेण कामज्वलितेन गौर्या, विनोदभारान्मलमुत्क्षिपित्वा ।
कृत्वा पुराणेष्विति वाचयित्वा सन्मंगलं तं कथमुदगिरन्ति ॥
यतस्त्वमेवासि विनायको मे इष्टेष्टयोगानवरुद्धभाषः ।
त्वन्नाममात्रेण पराभवन्ति विघ्नारयस्तर्हि किमत्र चित्रम् ॥

जय जय जिनराज त्वद्गुणान्को व्यनक्ति,

यदि सुरगुरुरिद्रः कोटिवर्षप्रमाणम् ।

वदितुमभिलषेद्वा पारमाप्नोति नो चेत्,

कतिथ इह मनुष्यः स्वल्पबुद्धया समेतः ॥

ॐ ह्रीं अर्हदादिसप्तदशमन्त्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रियं बुद्धिमनाकुल्यं धर्मप्रीतिविवर्धनं ।

गृहिधर्मे स्थितिर्भूयात् श्रेयसं मे दिशत्वरम् ॥

इत्याशीर्वादः ।

हवन सामग्री

हवनके लिए निम्नलिखित वस्तुओंको अच्छी तरह शोध कर कूट लेना चाहिये ।

बादामपिस्ताखर्जूरा मज्जा वै नारिकेलजा ।

दुग्धं प्रचुरसर्पिश्च शर्कराद्राक्षयान्विता ॥

लवंगकर्पूरसुमिश्रितानां, चूर्णं सुतैलादिसुगन्धजातैः ।

युक्तं जिनेन्द्रस्य मते प्रशस्तं, होमार्हणे द्रव्यकदंबकं वै ॥

अर्थात्-- बादाम, पिस्ता, छुहारा, नारियलका खोपरा, दाख, लोंग, कपूर, सफेद चन्दन, लाल चन्दन तथा चिरोंजी, सुगन्धवाला देवदारु, अगर, तगर, बालछड़, पानड़ी, कपूरकचरी, नागरमोथा, छार छबीला इत्यादि सुगन्धित द्रव्योंका चूर्ण तथा धान, तिल, मूँग, उड़द, गेहूँ, जौ, चना इन्हें भी खरलमें कूट कर मिला लेना चाहिये ।

इसी में घी तथा बूरा मिला सामग्री ठीक कर लेनी चाहिये तथा आहुतिके लिए अलग बर्तनमें घी रखना चाहिये । घी की आहुतिके लिए काठके चमचे भी होने चाहिये ।

जितने मंत्र जपे हो उनकी दशांग आहुतियाँ उसी मंत्रकी दी जाती हैं, उनके सिवाय पीठिका आदि मंत्रोंकी आहुतियाँ दी जाती है । इन सब आहुतियोंके अनुसार हवन सामग्री तैयार करनी चाहिये तथा आक, ढाक, आम, पीपल, बड़, सफेद चंदन तथा लाल चंदनकी सूखी छोटी पतली लकड़ियाँ भी रखनी चाहिये ।

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्य ॥

श्री सिद्धचक्र विधान

कविवर पं. सन्तलालजी कृत

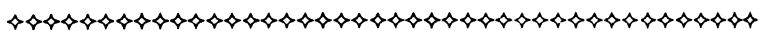
मंगलाचरण

दोहा

जिनाधीश शिवईश नमि, सहसगुणित विस्तार।
सिद्धचक्र पूजा रचों, शुद्ध त्रियोग सम्भार ॥१॥
नित्याश्रित धनपति सुधी शीलादिक गुण खान।
जिनपद अम्बुज भ्रमर मन, सो प्रशस्त यजमान ॥२॥
देश काल विधि निपुणमति, निर्मल भाव उदार।
मधुर बैन नयना सुधर, सो याजक निराधार ॥३॥
रत्नत्रयमण्डित महा, विषय कषाय नहिं लेश।
संशय हरण सुहित करण, करत सुगुरु उपदेश ॥४॥

छप्पय छन्द

निर्मल मण्डप भूमि दरव-मंगल करि सोहत।
सुरभि सरस शुभ पुष्प-जाल मण्डित मन मोहत ॥
यथायोग्य सुन्दर मनोज्ञ, चित्राम अनूपा।
दीरघ मोल सुडोल, वसन झ्रखझोल सरूपा ॥



हो वित्तसार प्रासुक दरब, सरव अंग मन को हरै।
सो महाभाग आनन्द सहित, जो जिनेन्द्र अर्चा करै ॥५॥

यन्त्र स्थापना - दोहा

सुर मुनि मन आनन्द कर, ज्ञान सुधारस धार।
सिद्धचक्र सो थापहुँ, विधि-द्व-जल उनहार ॥६॥

अडिल्ल-अर्ह शब्द प्रसिद्ध अर्द्ध मात्रिक कहा।
अकारादि स्वर मण्डित अति शोभा लहा ॥
अति पवित्र अष्टांग अर्घ करि लायके।
पूरवदिशि पूजो अष्टांग नमायके ॥७॥

ॐ ह्रीं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ए ऐ ओ औ अं अः पूर्वदिशि
अनाहत पराक्रमाय सिद्धाधिपतये नमः पूर्वदिशि अर्ध्य निर्वपामीति स्वाहा।
सोरठा- वर्ण कवर्ग महान, अष्ट पूर्वविधि अर्घ ले।
भक्ति भाव उर ठान, पूजों हो आग्नेय दिशि ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्ह क ख ग घ ङ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये
आग्नेयदिशि अर्ध्य निर्वपामीति स्वाहा।
वर्ण चवर्ग प्रसिद्ध, वसुविधि अर्घ उतारिके।
मिलि है वसुविधि ऋद्धि, दक्षिण दिशि पूजा करौं ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्ह च छ ज झ अ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये
दक्षिणदिशि अर्ध्य निर्वपामीति स्वाहा।
वर्ण टवर्ग प्रशस्त, जलफलादि शुभ अर्घ ले।
पाऊँ सब विधि स्वस्ति, नैऋत्य दिशि अर्चा करों ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्ह ट ठ ड ढ ण अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये
नैऋत्यदिशि अर्ध्य निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण तवर्ग मनोग, यथायोग्य कर अर्घ धरि।

मिलि है सब शुभ योग, पूजन करि पश्चिम दिशा ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं त थ द ध न अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये
पश्चिमदिशि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण पवर्ग सुभाग, करूँ आरती अर्घ ले।

सब विधि आरति त्याग वायव दिशि पूजा करों ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं प फ ब भ म अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये
वायव्यदिशि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण यवर्गी सार, दर्व, अर्घ वसु द्रव्य करि।

भाव अर्घ उर धार, उत्तर दिशि पूजा करों ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं य र ल व अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये उत्तरदिशि
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेष वर्ण चउ अन्त, उत्तम अर्घ बनाइकें।

नशें कर्म वसु भन्त, पूजों हो ईशान दिशि ॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श ष स ह अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये ईशानदिशि
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छप्पय छन्द

ऊरध अधो सुरेफ बिन्दु हकार विराजे।

अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे ॥

वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधि धर।

अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर ॥



फैली दीपन की जोति, अति परकाश करै,
जिम स्याद्वाद उद्योत संशय तिमिर हरै ।



अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री समत्तणाण-
दंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह अष्टगुणसंयुक्ताय दीपं निर्व. स्वाहा ॥६॥

धरि अग्नि धूप के ढेर, गन्ध उड़ावत हूँ,
कर्मों की धूप बखेर, ठोंक जरावत हूँ।
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्री समत्तणाण-
दंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह अष्टगुणसंयुक्तभ्यो
अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

जिन-धर्म वृक्ष की डाल शिवफल सोहत हैं,
इम धरि फल कंचन थाल भविमन मोहत हैं।
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्री समत्तणाण-
दंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह अष्टगुणसंयुक्ताय मोक्ष
फल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

करि दर्व अर्घ वसु जात यातैं ध्यावत हूँ,
अष्टांग सुगुण विख्यात तुम ढिंग पावत हूँ।
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं,
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्री समत्तणाण-
दंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह अष्टगुणसंयुक्ताय
अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥



गीता छन्द

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकरनित रमैं, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ॥
वर दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्म दलसवब दल भले ॥१॥
ते कर्मवर्त नशाय युगपति, ज्ञान निर्मल रूप हैं ।
दुःख जन्म टाल अपार गुण, सूक्ष्म सरूप अनूप हैं ॥
कर्माष्ट्र विन त्रैलोक्य पूज्य, अदज शिव कमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अभेय चहुँगुण गेह, द्यो हम शुभमती ॥२॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्योनमः श्री समतबाणदंसणवीर्य
सुहम त्तेहव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह अष्टगुणसंयुक्ताय अनर्घपदप्राप्तये
महार्घ्यं निर्वपामोति. स्वाहा ॥२॥

अष्टगुण अर्घ - चौपाई

मिथ्या त्रय चउ आदि कषाया, मोहनाश छायक गुण पाया ।
निज अनुभव प्रत्यक्ष सरुपा, नमूं सिद्ध समकित गुणभूपा ॥
ॐ ह्रीं संप्यक्त्वाय नमः अर्घ्य ॥११॥

सकल त्रिधा षट् द्रव्य, अनन्ता, युगपत् जानत हैं भगवन्ता ।
निर आवरण विशद स्वाधीना, ज्ञानानन्द परम रस लीना ॥
ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्य ॥२॥

चक्षु अचक्षु अवधि विधि नाशी, केवल दर्श जोति परकाशी ।
सकल ज्ञेय युगपत अवलोका, उत्तम दर्श नमूं सिद्धोका ॥
ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्ध्य ॥३॥

अन्तराय विधि प्रकृति अपारा, जीवशक्ति घाते निरधारा ।
ते सब घात अतुल बल स्वामी, लसत अखेद सिद्ध प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्य ॥४॥

रुपातीत मन इन्द्रिय नाहीं, मनपर्यय हू जानत नाहीं ।
अलख अनूप अमित अधिकारी, नमूं सिद्ध सूक्ष्म गुणधारी ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मत्वाय नमः अर्घ्य ॥५॥

एक क्षेत्र अवगाह स्वरूपा, भिन्न-भिन्न राजें चिद्रूपा ।
निज परघात विभाव विडारा, नमूं सुहित अवगाह अपारा ॥

ॐ ह्रीं परमअवगाहनत्वाय नमः अर्घ्य ॥६॥

परकृत ऊँच नीच पद नाहीं, रमत निरंतर निज पद माहीं ।
उत्तम अगुरुलघुगुण भोगी, सिद्धचक्र ध्यावै नितयोगी ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्वात्मकजिनाय नमः अर्घ्य ॥७॥

नित्यनिरामय भव भय भञ्जन, अचल निरन्तर शुद्ध निरञ्जन ।
अव्याबाध सोई गुण जानो, सिद्धचक्र पूजन मन मानो ॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधत्वाय नमः अर्घ्य ॥८॥

जयमाला - दोहा

जग आरत भारत महा, गारत करि जय पाय ।

विजय आरती तिन कहूँ, पुरुषारथ गुणगाय ॥१॥

पद्धड़ी छन्द

जय करण कृपाण सु प्रथमवार, मिथ्यात सुभट कीनो प्रहार ।
दृढ़कोट विपर्यय मति उलंघ, पायो समकित थलथिर अभंग ॥

निज पर विवेक अन्तर पुनीत, आतम रुचि वरती राजनीत ।
जगविभवविभावअसातएह, स्वातम, सुखरसविपरीतदेह ॥२॥
तिन नाशन लीनो दृढ़ संभार, शुद्धपयोग चित चरण सार ।
निर्ग्रथ कठिन मारग अनूप, हिंसादिक टारण सुलभ रूप ॥३॥
द्वयवीस परीषह सहन वीर, बहिरन्तर संयम धरण धीर ।
द्वादश भावन दशभेद धर्म, विधि नाशन बारह तप सुपर्म ॥४॥
शुभ दयाहेत धरि समिति सार, मन शुद्धकरण त्रयगुप्ति धार ।
एकाकी निर्भय निःसहाय, विचरो प्रमत्त नाशन उपाय ॥५॥
लखि मोहशत्रु परचण्ड जोर, तिस हनन शुक्ल दल ध्यान जोर ।
आनन्द वीररस हिये छाये, क्षायक श्रेणी आरम्भ थाय ॥६॥
बरम गुण थाजक ताहि नाश, तेरम पायो निजपद प्रकाश ।
नव केवललब्धि विराजमान, दैदीप्यमान सोहें सुभान ॥७॥
तिस मोह दुष्ट आज्ञा एकांत, थी कुमति स्वरूप अनेक भांति ।
जिनवाणी करि ताको विहण्ड, करि स्याद्वाद आज्ञा प्रचण्ड ॥८॥
बरतायो जग में सुमति रूप, भविजन पायो आनन्द अनूप ।
थे मोह नृपति उपकरण शेष, चारो अघातिया विधि विशेष ॥९॥
है नृपति सनातन रीति एह, अरि विमुख न राखें नाम तेह ।
यो तिन नाशन उद्यम सुठानि, आरंभ्यो परम शुक्ल सुध्यान ॥१०॥
तिस बलकरि तिनकी तिथि विनाश, पायो निर्भय सुखनिधि निवास ।
यह अक्षय जोति लई अवाधि, पुनि अंश न व्यापो शत्रु व्याध ॥११॥



शाश्वत स्वश्रित सुख श्रेय स्वामी, है शान्ति सन्त तुम कर प्रणाम ।

अन्तिम पुरुषारथ फल विशाल, तुम विलसौ सुखसौं अमित काल ॥१२

ॐ ह्रीं समत्तणाणादि अष्टगुणसंयुक्तसिद्धेभ्यो महाधर्यं निर्वपामीति
स्वाहा ॥१२॥

घत्ता

परसमय विदरित पूरित, निजसूख समयसार चेतनरूपा ।

नाना प्रकार परका विकार, सब टार लसैं सब गुण भूपा ॥

ते निरावर्ण निर्देह निरूपम, सिद्धचक्र परसिद्ध जजूं ।

सुर मुनि नित ध्यावैं आनन्द पावैं पूजत भरभार तजूं ॥

यहाँ १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उं सा नमः' मंत्र का जाप करें ।

इति प्रथम पूजा सम्पूर्णम् ।



द्वितीय पूजा

छप्पय छन्द

उरध अधो सरेफ विन्दु हकार विराजे ।

अकारादि स्वर्लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे ॥

वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर ।

अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर ॥

फुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम सुर, ध्यावत अरिनागको ।

हैं केहरिसम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥



दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।

सिद्धचक्र सो थाप हूँ, मिटैं उपद्रव योग ॥२॥

ॐ ह्रीं नमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः षोडशगुणसंयुक्तसिद्ध
सिद्धपरमेष्ठिः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः
ठः स्थापनः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं !

अथाष्टकं - गीता छन्द

हिमशैल धवल महान कठिन पाषाण तूम जस रासते ।

शरमाय अरु सकुचाय द्रव्य है वही गंगा तासतैं ॥

सम्बन्ध योग चितार चित्त भेंटार्थ झारी में भरूँ ।

षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो अन्यावाहं सिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री समत्तण्णदंसणवीर्यं सुहमं त्तेहव
अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं षोडशगुणसंयुक्ताय जलं निर्व्वं स्वाहा ॥१॥

काश्मीर चन्दन आदि अन्तर बाह्य बहुविधि तप है।

यह कार्य कारण लिख निमित्त मम भाव बहु उद्यध करै ॥

मैं हूँ दुःखी भवताप से घसि मलय चरनन ढिंग धरूँ ।

षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धांशु श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री समत्तणाणदमसवीर्य सुहम
तहेव अवगहण अगुरुलघुअव्वाह षोडशगुणसयुंक्ताय चंदनं निर्व. स्वाहा ॥२॥

सौरभि चमक जिस सह न सकि अम्बुज वसै सरताल में ।
शशि गगन बसि नित होत कृश अहिनिश भ्रमै इस ख्याल में ॥



सो अक्षतौध अखण्ड अनुपम पुञ्ज करि सन्मुख धरूँ ।
 षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ ॥ अक्षतं ॥
 जग प्रगट काम सुभट विकट कर हट करत जिय घट जगा ।
 तुम शील कटक सुघट निकट सरचाप पटक सुभट भगा ॥
 इम पुष्पराशि सुवाम तुम ढिंग कर सुयश बहु उच्चरूँ ।
 षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धांण श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री समत्तणाणदसणवीर्य सुहम
 त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वाह सोलहगुणसयुंक्ताय पुष्पं निर्वं स्वाहा ॥२॥

जीवन सतावन नहिं अघावत क्षुधा डाइन-सी बनी ।
 सो तुम हनी तुम ढिंग न आवत न जान यह विधि हम ठनी ॥
 नैवेद्य के संकेत करि निज क्षुधानाशन विधि वरूँ ।
 षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ ॥ नैवेद्यं ॥५॥
 मैं मोह अन्ध अशक्त अरू यह विषम भववन है महा ।
 ऐसे रुलेको ज्ञानदुति बिन पार निवारण हो कहा ॥
 सो ज्ञान चक्षु उधार स्वामी दीप ले पाइन परूँ ।
 षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ ॥ दीपं ॥६॥
 प्रासुक सुगन्धित द्रव्य सुन्दर दिव्य घ्राण सुहावनो ।
 धरि अग्नि दश दिस वास पूरित ललित धूप सुहावनो ॥
 तुम भक्ति भाव उमंग करत प्रसंग धूप सु विस्तरूँ ।
 षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ ॥ धूपं ॥७॥
 चित हरन अचित सुरंग रसपूरित विविध फल सोहने ।
 रसना लुभावन कल्पतरु के सुर असुर मन मोहने ॥



भरि थाल कञ्चन भेंट धरि संसार फल तृष्णा हरूँ ।
 षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ ॥फलं॥ ॥८॥
 शुभ नीर वर काश्मीर चन्दन धवल अक्षत युत अनी ।
 वर पुष्पमाल विशाल चरू सुरमाल दीपक दुति मनी ॥
 वर धूप पक्व मधुर सुफल लै अर्घ अठ विधि संचरूँ ।
 षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ ॥अर्घ॥ ॥९॥

गीता छन्द

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमै चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्मवर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुःख जन्म टाल अपार गुण सूक्ष्म सरूप अनूप हैं ॥
कर्माष्ट्र बिन त्रैलोक्य पूज्य अदूज शिव कमलापति,
मुनि ध्येय सेय अभेय चहुँगुण,गेह द्यो हम शुभमती ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः समत्तणाणदि अट्टगुणाणं महार्घं
निर्वपामीति स्वाहा।

अथ सोलह गुण सहित अर्घ

त्रोटक छन्द

दर्शन आवर्णी प्रकृति हनी, अथिता अवलोक सुभाव बनी ।
इक साथ समान लखो सबही, नमूं सिद्ध अनन्त दृगण अबही ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं ॥१॥

विधि ज्ञानवर्णविनाश कियो, निज ज्ञान स्वभाव विकास लियो ।
समयान्तर सर्व विशेष जनों, नमूं ज्ञान अनन्त सु सिद्ध तनों ॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥२॥

सुख अमृत पीवत स्वेद न हो, निज भाव विराजन खेद न हो ।
असमानमहाबल धारत हैं, हम पूजत पाप बिडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अतुलवीर्याय नमः अर्घ्यं ॥३॥

विपरीत सभीत पराश्रितता, अतिरिक्त धरें न, करैं थिरता ।
पर की अभिलाष न सेवत है, निज भाविक आनन्द बेवत हैं ॥

ॐ ह्रीं अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं ॥४॥

निज आत्मविकाशक बोध लह्यो, भ्रम को परवेश न लेश कह्यो ।
निजरूप सुधारस मग्न भये, हम सिद्धन शुद्ध प्रतीति नये ॥

ॐ ह्रीं अनन्तसम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं ॥५॥

निज भाव विठार विभाव न हो, गमनादिक भेद विकार न हो ।
निजथाननिरूपम नित्य बसैं, नमूं सिद्ध अनाचल रूप लसैं ॥

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं ॥६॥

चोपाई

गुणपर्यय, परणति के भेद, अतिसूक्ष्म असमान अक्षेद ।
ज्ञान गहें, न कहैं जड़ बैन, नमों सिद्ध सूक्ष्म गुण ऐन ॥७॥

ॐ ह्रीं अनन्तसूक्ष्मत्वाय नमः अर्घ्यं ॥७॥

जन्म-मरण युत धरें न काय, रोगादिक संक्लेश न पाय ।
नित्य निरंजन निर विकार, अव्याबाध नमों सुखकार ॥८॥

ॐ ह्रीं अव्यबाधाय नमः अर्घ्यं ॥८॥

ॐ ह्रीं अभेदाय नमः अर्घ्यं ॥१५॥

निजानन्दरसस्वादमेंलीनाअन्ता, मगनहोरहैं राजवर्जितनिरन्ता ।
कहाँलो कहूँ आपको पारनाहीं, धरों आपको आपही आपमाहीं ॥

ॐ ह्रीं अविलीनाय नमः अर्घ्य ॥१६॥

अथ जयमाला - दोहा

पंच परम परमात्मा, रहित कर्म के फन्द ।

जगत प्रपंच रहित सदा, नमों सिद्ध सुखकन्द ॥

त्रोटक छन्द

दुःखकारन द्वेष विडारन हो, वश डारन राग निवारन हो ।
भवितारण पूरणकारण हो, सब सिद्ध नमों सुखकारण हो ॥
समयामृत पूरीत देव महौ, पर-आकृत मूरति लेश नहीं ।
विपरीत विभाव निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारण हो ॥
अखिनाअभिनाअछिनासुपरा,अभिदाअखिदाअविनाशवरा ।
यजमान जरादुःखजारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारण हो ॥
निरआश्रितस्वाश्रितवासितहो, परकाश्रितखेदविनाशितहो ।
विधि हारन पारन धारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारण हो ॥
अमुधाअछुधाअद्विधाअविधं, अकुधासुसुधासुबुधासुसिधं ।
विधि कानन दहन हुताशन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारण हो ॥
शरनं चरनं मरनं करनं, धरनं डरनं मरनं हरनं ।
तरनं भव वारिधि तारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारण हो ॥
भववास तरास विनाशन हो, दुःखरास विनास हुताशन हो ।
निज दासन त्रास निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारण हो ॥

तुम ध्यावत शाश्वत व्याधि दहै, तुम पूजत ही पद पूजि लहै ।
शरणागत सन्त उभारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारण हो ॥

दोहा

सिद्धवर्ग गुण अगम है, शेष न पावैं पार ।
हम किंह विधि वरणन करैं भक्ति भाव उर धार ॥९॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनज्ञानादि षोडशगुणसंयुक्तसिद्धेभ्यो महार्घ्यं । इति
द्वितीय पूजा सम्पूर्णम् ।

'ॐ ह्रीं अहं अ सि आ उ सा नमः' मंत्र का यहाँ १०८ बार
जाप करें ।



अथ तृतीय पूजा बत्तीस गुण सहित

छप्पयछन्द

ऊरध अधो सुरेफ हिन्दु हकार बिराजे ।
अकरादि स्वर लिप्तकर्णिका अन्त सु छाजे ॥
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिवर ।
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अंत ह्रीं वेड्यो परम सुर, ध्यावत अरिनागको ।
केहरिसम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिनः बत्तीस गुणसहित विराजमान
अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।



दोहा

सूक्ष्मादि गुण रहित हैं , कर्म रहित नीरोग ।
सकल सिद्ध सो थापहूँ , मिटैं उपद्रव योग ॥२॥

इति यन्त्र स्थापनं

अथाष्टकं

तुम पूजोरे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम पूजोरे भाई ।
भवत्रासित आकुलित रहैं, भवि कठिन मिटन दुःखताई ॥
विमल चरण तुम सलिल धारदे, पायो सहज उपाई ॥ तुम पूजोरे.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री समत्तणाणदंसणवीर्यं
सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह बत्तीसगुणसंयुक्तेभ्यो
जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

जगवन्दन परसत पदचन्दन, महाभाग उपजाई ।
हरिहर आदि लोकवर उत्तम, कर धर शीश चढ़ाई ॥ तुम पूजोरे.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री समत्तणाणदंसणवीर्यं
सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह बत्तीसगुणसंयुक्तेभ्यो
संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

शिवनायक पूजन लाडक है, यह महिमा अधिकाई ।
अक्षयपद दायक अक्षत यह, सांचों नाम धराई ॥ पूजोरे.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री समत्तणाणदंसणवीर्यं
सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह बत्तीसगुणसंयुक्तेभ्यो
अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

आप श्राप कर पुष्पचाप धर मम डर शरण उपाई ।

यह निश्चय करि पुष्प भेंट धरि मांगू वर शिवराई । तुम पूजोरे.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्री समत्तणाण-
दंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह बतीसगुणसंयुक्तेभ्यो
कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

चरुवर प्रचुर क्षुधा नहीं मेटत, पूर परौ इन ताई ।

भेंट करत तुम इनहूँ न भेटूँ, रहूँ चिरकाल अघाई । तुम पूजोरे.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्री समत्तणाण-
दंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह बतीसगुणसंयुक्तेभ्यो
क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

दिव्य रत्न इस देश काल में, कहै कौन हैं नाहीं ।

तुम पद भेटें दीप प्रगट यह, चिन्तामणि पद पाई । तुम पूजोरे.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्री समत्तणाण-
दंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह बतीसगुणसंयुक्तेभ्यो
मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

धूप हुताशन वासन में धर, दसदिस वास वसाई ।

तुम पद पूजत या विधिवसु विधि, ईधन जर हो छाई । तुम पूजोरे.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्री समत्तणाण-
दंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह बतीसगुणसंयुक्तेभ्यो
अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

सर्वोत्तम फल द्रव्य ठान मन, पूजूँ हूँ तुम पाई ।

जासौं जजें मुक्तिपद पड़ये, सर्वोत्तम फलदाई । तुम पूजोरे.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री समत्तणाणदंसणवीर्यं
सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह बतीसगुणसंयुक्तेभ्यो
मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥



वसुविधि अर्घ देऊँ तुम मम द्यौ, वसुविधि गुण सुखदाई ।

जासु पाय वसु त्रास न पाऊँ, सन्त कहे हर्षाई । तुम पूजोरे.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री समत्तणाणदंसणवीर्यं
सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह बतीसगुणसंयुक्तेभ्यो
अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

गीता छन्द

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नितरमें चरू प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्म प्रकृति नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुःख जन्म टाल अपार गुण सूक्ष्म स्वरूप अनूप हैं ।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अभेय चहुँगुण, गेह द्यो हम शुभमती ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः समत्तणाणादि अष्टगुणाणं महार्घं
निर्वपामीति स्वाहा ।

(नामवली प्रत्येक अर्घ)

अथ बत्तीस गुण सहित अर्घ

पद्मड़ी छन्द

चेतन विभाव पुद्गल विकार, हैं शुद्ध बुद्ध तिस निमित्त टार ।

दृग्बोध सुरूप सुभाव एह, नमूं शुद्ध चेतना सिद्ध देह ॥१॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्ध चेतनाय नमः अर्घ्यं ॥१॥



मति आदि भेद विच्छेद कीन, छायाक विशुद्ध निज भावलीन ।
निरपेक्ष निरन्तर निर्विकार, नमूं शुद्ध ज्ञानमय सिद्ध सार ॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्धज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥२॥

सर्वांग चेतना व्याप्तरूप, तुम हो चेतन व्यापक सरूप ।
परलेश न निज परदेश मांहि, नमूं सिद्ध शुद्ध चिद्रूप ताहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धचिद्रूपाय नमः अर्घ्यं ॥३॥

अन्तर विधि उदय विपाकटार, तुम जाति भेद वाहिज बिडार ।
निज परिणति में नहीं लेश शेष, नमूं शुद्धरूप गुणगण विशेष ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥४॥

रागादिक परिणतिकी विध्वंस, आकुलित भावराखौ न अंश ।
पायौ निज शुद्ध स्वरूप भाव, नमूं सिद्धवर्ग धर हिये चाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमशुद्धस्वरूपभावाय नमः अर्घ्यं ॥५॥

दोहा

तिहूँ काल में ना डिगें, रहूँ निजानन्द थान।
नमूं शुद्ध दृढ़ गुण सहित, सिद्धराज भगवान ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धद्वय नमः अर्घ्यं ॥६॥

निज आवर्तक में बसें, नित ज्यों जलधि कलोल ।
नमूं शुद्ध आवर्तकी, करि निज हिये अडोल ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धआवर्तकाय नमः अर्घ्यं ॥७॥

परकृत कर उपज्यो नहीं, ज्ञानादिक निज भाव ।
नमों सिद्ध निज अमलपद, पायो सहज सुभाव ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धस्वयंभवे नमः अर्घ्यं ॥८॥



पद्धड़ी छन्द

निजसिद्ध अनन्त चतुष्टय पाय, निजशुद्ध चेतना पुञ्जकाय ।

निजशुद्ध सबै पायो संयोग, तुम सिद्धराज स्वशुद्ध जोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धयोगाय नमः अर्घ्यं ॥९॥

एकेन्द्रिय आदिक जातभेद, हीनाधिक नाम प्रकृति छेद ।

सम्पूरण लब्धि विशुद्ध जात हम, पूजैं हैं पद जोर हाथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धजाताय नमः अर्घ्यं ॥१०॥

दोहा

महातेज आनन्दधन, महातेज परताप ।

नमों सिद्ध निजगुण सहित, दिपै अनूपम आप ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धतपसे नमः अर्घ्यं ॥११॥

पद्धड़ी छन्द

वर्णादिक को अधिकार नाहिं, संस्थान आदि आकार नाहिं ।

अति तेजपिण्ड चेतन अखण्ड, नमूं शुद्ध मर्तिक कर्म खण्ड ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धमूर्तये नमः अर्घ्यं ॥१२॥

वाहिज पदार्थ को इष्ट मान, महिं रमत ममत तासों जु ठान ।

निज अनुभवरसमें सदा लीन, तुम शुद्ध सुखी हम नमन कीन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धसुखाय नमः अर्घ्यं ॥१३॥

दोहा

धर्म अर्थ अरु काम बिन, अन्तिम पौरुष साध ।

भये शुद्ध पुरुषारथी, नमूं सिद्ध निरबाध ॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धपौरुषाय नमः अर्घ्यं ॥१४॥

पुद्गल निरमापित वर्ण युक्त, विधि नाम रचित तासों विमुक्त ।
पुरुषांकित चेतनमय प्रदेश, तु शुद्ध शरीर नमूं हमेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धशरीराय नमः अर्घ्यं ॥१५॥

दोहा

पूरण केवल ज्ञानगम, तुम स्वरूप निर्बाध ।
और ज्ञान जानैं नहीं, नमों सिद्ध तन आध ॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धप्रमेयाय नमः अर्घ्यं ॥१६॥

दरशन ज्ञान सुभेद हैं चेतन लक्षण योग ।
पूरण भई विशुद्धता, नमों शुद्ध उपयोग ॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धपयोगाय नमः अर्घ्यं ॥१७॥

परद्रव्य जनित भोगोपभोग, ते खेदरूप प्रत्यक्ष योग ।
निजरस स्वादन है भोगसार, सो भोगो तुम हम नमस्कार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धभोगाय नमः अर्घ्यं ॥१८॥

दोहा

निर्ममत्व युगपद लखो, तुम सब लोकालोक ।
शुद्ध ज्ञान तुमको लखो, नमों शुद्ध अवलोक ॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धवल्लोकाय नमः अर्घ्यं ॥१९॥

निरङ्गुल मन वेदी महान, प्रज्वलित अग्नि है शुक्लध्यान ।
निर्भेद अर्घ दे मुनि महान, तुमही पूजत अर्हन्त जान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धप्रज्वलितशुक्लध्यानाग्निजिनाय नमः अर्घ्यं ॥२०॥

दोहा

आदि अन्त वर्जित महा, शुद्ध द्रव्य की जात ।
स्वयं सिद्ध परमात्मा, प्रणमूं शुद्ध निपात ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धनिपाताय नमः अर्घ्यं ॥२१॥



लोकालोक अनन्तवें, भाग बसो तुम आन ।

ये तुम सों अति भिन्न हैं, शुद्ध गर्भ यह जान ॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धगर्भाय नमः अर्घ्यं ॥२२॥

लोकशिखर शुभ थान है, तथा निजातम वास ।

शुद्ध वास परमात्मा, नमों सुगुण की रास ॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धवासाय नमः अर्घ्यं ॥२३॥

अति विशुद्ध निज धर्म में, वसत नशत सब खेद ।

परम वास नमि सिद्ध को, वासी वास अभेद ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं विशुद्धपरमवासाय नमः अर्घ्यं ॥२४॥

बहिरन्तर द्वै विधि रहित, परमातम पद पाय ।

निरविकार परमात्मा, नमूं नमूं सुखदाय ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धपरमात्मने नमः अर्घ्यं ॥२५॥

हीन अधिक इक देशको, विकल विभाव उछेद ।

शुद्ध अनन्त दशा लई, नमूं सिद्ध निरभेद ॥२६॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धअनन्ताय नमः अर्घ्यं ॥२६॥

त्रोटक छन्द

तुम राग विरोध विनाश कियो, निज ज्ञान सुधारस स्वाद लियो ।

तुम पूरण शान्ति विशुद्ध धरो, हमको इक देश विशुद्ध करो ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धशान्ताय नमः अर्घ्यं ॥२७॥

विद पण्डित नाम कहावत हैं विद अन्तु जु अन्तहि पावत हैं ।

निज ज्ञान प्रकाश सुअन्त लहो, कुछ अंश न जानन मां हिरहो ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धविदन्ताय नमः अर्घ्यं ॥२८॥

वरणादिक भेद विडारन हो, परिणाम कषाय निवारन हो ।
मन इन्द्रिय ज्ञान न पावत हो, अति शुद्ध निरूपम ज्योति मही ॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्धज्योतिर्जिनाय नमः अर्घ्यं ॥२९॥

जन्मादिक व्याधि न फेरि धरो, मरणादिक आपद नाहिं वरो ।
निर्वाण महान विशुद्ध अहो, जिन शासन में परसिद्ध कहो ॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्धनिर्वाणाय नमः अर्घ्यं ॥३०॥

करि अन्त न गर्भ लियो फिरकें, जनमे शिववास जनम धरके ।
जिनको फिर गर्भ न हो कबहूँ, शिवराज कहाय नमूं अबहूँ ॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्धसंदर्भगर्भाय नमः अर्घ्यं ॥३१॥

जगजीवन पाप नशायक हो, तुम आप महा सुखनायक हो ।
तुम मंगल मूरति शांति सही, सब पाप नशैंतुम पूजत ही ॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्धशान्ताय नमः अर्घ्यं ॥३२॥

जयमाला - दोहा

पञ्च परमपद ईश हैं, पञ्चमगति जगशीश ।
जगत प्रपञ्च रहित बसे, नमूं सिद्ध जग ईश ॥३३॥
परम ब्रह्मा परमात्मा, परम ज्योति शिवथान ।
परमात्म पद पाईयो, नमों सिद्ध भगवान ॥१॥

छन्द - कामिनी मोहन, मात्रा २०

जन्म मरण कष्ट को टारि अमरा भये,
जरादि रोग व्याधि परिहार अजरा भये ।
जय द्विविध कर्ममल जार अमला भये,
जय दुविधि टार संसार जयमाला भये ॥



जय जगत वास तज जगत स्वामी भये,
 जय विनाशनाम थित परम नामी भये ।
 जय कुबुधि रूप तजि सुबुधि रूपा भये,
 जय निषध दोष तज सुगुण भूपा भये ॥
 कर्मरिपु नाश कर परम जय पाईए,
 लोकत्रयपूरि तुम सुजस घन छाईये ।
 इन्द्र नागेन्द्र धरसीस तुम पद जजें,
 महा वैराग रस पाग मुनिगण भजें ॥
 विघन वन दहन दौ अघन घन पौन हो,
 सघन गुण रासके, बासको भौन हो ।
 शिव तिय वसकरन मोहिनी मन्त्र हो,
 कर्म छयकार वैताल के यन्त्र हो ॥
 कोटि थित क्लेशको मेटि शिवकर रहो,
 उपलकी नकल हो अचल इकथल रहो ।
 स्वप्न में हू निज अर्थ को पावहीं,
 जे महा खलन तुम ध्यान धरि ध्यावही ॥
 आपके जाप बिन पाप सब भेंट ही,
 पाप की ताप को पाप कब मेंटही ।
 सन्त निज दास को आस पूरी करो,
 जगत से काढ निज चरण में ले धरो ॥



जय अमल अनूपं शुद्ध स्वरूपं,
निखिल निरूपं धर्म धरा ।
जय विघन नशायक मंगलदायक,
तिहूँ जगनायक परमपरा ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः मंत्र का यहाँ १०८ बार जाप देना है।



चतुर्थ पूजा चौषटि गुण सहित

चतुःषष्टि दलोपरि चतुर्थ पूजा उच्यते

छप्पय छन्द

उरध अधो सुरेफ बिन्दु हकार विराजे ।
अकारादि स्वर लिप्तकर्णिका अन्त सु छाजे ॥
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिवर ।
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अंत ह्रीं बेढयो परम सुर, ध्यावत अरिनागको ।
हैं केहरिसम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिनः अत्र अवतर अवतर
संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो
भव भव घषट् सन्निधिकरणं ! परिपुष्पांजलि क्षिपेत् ।



दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग ।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटैं उपद्रव योग ॥२॥

इति यन्त्र स्थापनं

अथाष्टकं

चाल लावनी

सिद्धगण पूजो हरखाई, चौसठि सगुणनामा विधिमाला ।
सुमरों सुखदाई, सिद्धगण पूजोरे भाई ॥ आंचली ॥
त्रिभुवन उपमा वास लखैं, तुम पद अम्बुज के माई ।
निर्मल जल की धार देहु, अवशेष करणताई ॥ सिद्ध ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौसठिगुण सहित श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह
जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

तुम पद अम्बुज वास लेन मनु, चन्दन मन भाई ।
निजसों गुणाधिक्य संगति को, लहिय न हरषाई ॥ सिद्ध ॥

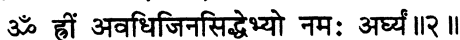
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौसठिगुण सहित श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह
संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

क्षीरज धान सुवासित नीरज, करसों छरलाई ।
अंगुल से तन्दुलसों पूजत, अक्षय पद पाई ॥ सिद्ध ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौसठिगुण सहित श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह
अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥



ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौसठिगुण सहित श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वावाह
मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥





निर्मल चारित्र समाया, परमावधि पटल उधारा।
केवल पायो तिस कारण, नमूं सिद्ध भये जग तारण ॥

ॐ ह्रीं परमावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥३॥

वर्द्धमान विशद परिणामी, सर्वावधि के हो स्वामी ।
अन्तिम वसुकर्म नसाया, नमूं सिद्ध भये सुखदाया ॥

ॐ ह्रीं सर्वावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥४॥

जिस अन्त अवधिको नहीं, तुम उपजायो पद तार्हीं ।
निर्मल अवधि गुणधारी, सब सिद्ध नमं सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं अनन्तावधिजिनसिद्धेश्व्यो नमः अर्घ्यं ॥५॥

तप बल महिमा अधिकाई, बुद्धि कोष्ठ रिद्धि उपजाई ।
श्रुत ज्ञान कोष्ठ भंडारी, नमूं सिद्ध भये अविकारी ॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥६॥

ज्यों बीज फले बहुरासी, त्यों छिनही बहु अभ्यासी ।
यह पावत ही योगीशा, भये सिद्ध नमं शिव ईशा ॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥७॥

पदमात्र समस्त चितारे, है रिद्धि पाद अनुसारे ।
यह पाय यतीश्वर ज्ञानी भये सिद्ध नमूं शिवथानी ॥

ॐ ह्रीं पादनुसारिणीऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥८॥

जो भिन्न-भिन्न इक लारैं, शब्दन सुन अर्थ विचारैं ।
यह ऋद्धि पाय सुखदाता, नमं सिद्ध भये जगन्नाता ॥

ॐ ह्रीं संभिन्नश्रोतऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥९॥

मति श्रुत अर अवधि अनूपा, बिन गुरु के सहज सरूपा ।
भयो स्वयं बुद्ध निज ज्ञानी, नमं सिद्ध भये सुखदानी ॥

ॐ ह्रीं स्वयंबुद्धणरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१०॥



जो पाय न पर उपदेशा, जानें तप ज्ञान विशेषा ।
प्रत्येक बुद्ध गुण धारी, भये सिद्ध नमूं हितकारी ॥

ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्धऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥११॥

गणधर से समकित धारी, तुम दिव्यध्वनि अनुसारी ।
ज्ञानिनी सिरताज कहाये, भये सिद्ध सुजस हम गाये ॥

ॐ ह्रीं अर्ह बोधबुद्धेणं नमः अर्घ्यं ॥१२॥

मन योग सरलता धारै, तिस अन्तर भेद उधारैं ।
यों होय ऋजुमति ज्ञानी, नमूं सिद्ध भये सुखदानी ॥

ॐ ह्रीं ऋजुमतिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३॥

बांके मन के सब वाता, जानों सो विपुल कहाता ।
तुम पाय भये शिवधामी, नमूं सिद्धराज अभिरामी ॥

ॐ ह्रीं विपुलमतिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४॥

सुर विद्या को नहीं चाहैं, निज चारित विरद निवाहैं ।
दस पूर्व ऋद्धि यह पायो, भये सिद्ध मुनिन गुण गायो ॥

ॐ ह्रीं दसपूर्वरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१५॥

चौदह पूरव श्रुतज्ञानी, जानें परोक्ष परमानी ।
प्रत्यक्ष लखो तिस सारूं, भये सिद्ध हरों अर्थ म्हारूं ॥

ॐ ह्रीं चौदहपूर्वरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१६॥

सुन्दरी छन्द

ज्योतिषादिक लक्षण जानकैं,

शुभ अशुभ फल कहत बखानिकैं ।

निमित्त ऋद्धि प्रभाव न अन्यथा,

होय सिद्ध भये प्रणमूं यथा ॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्ह अष्टांगनिमित्तरिद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१७॥

बहु विधि अणिमादिक सिद्ध जू,
तप प्रबाव भई तिन सिद्ध जू।
निष्प्रयोजन निजपद लीन है,
नमूं सिद्ध भये स्वाधीन है ॥१८॥

ॐ ह्रीं अहं विवर्णरिद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१८॥
भूमि जल तंतु जिया ना हरें,
नमूं ते मुनि शिव कामिनी वरें।
नेक नहीं बाधा परिहार हो,
नमूं सिद्ध सभी सुखकार हो ॥१९॥

ॐ ह्रीं अहं विज्जाहरणरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१९॥
जंघपर दो हाथ लगावहीं,
अन्तरीक्षा पवनवत जावहीं।
पाय ऋद्धि महामुनि चारणी,
यथायोग्य विशुद्ध विहारिणी ॥२०॥

ॐ ह्रीं अहं चारणरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२०॥
खग समान चलैं आकाश में,
लीन नित निज धर्म प्रकाश में।
शुद्ध चरण करि निज सिद्धता,
पाइयो हम नमन करैं यथा ॥२१॥

ॐ ह्रीं अहं आकाशगामिनीरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२१॥
वाद विद्या फुरत प्रमानही,
वज्रसम परमतगिरि हानही।



सब कुपक्षी दोष प्रगट करें,
स्यादवाद महादुति को धरें ॥२२॥

ॐ ह्रीं अहं परामर्शरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२२॥

विषम जहर मिला भोजन करें,
लेत ग्रासहिं तिस शक्ति हरें ।

ते महामुनि जग सुखदाय जू,
हम नमें तिन शिवपद पाय जू ॥२३॥

ॐ ह्रीं अहं आशीविषरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२३॥

जो महाविष अति परचण्ड हो,
दृष्टि करि तिन कीने खण्ड हो ।

सो यतीश्वर कर्म विडारकैं,
भये सिद्ध नमूं उर धारकैं ॥२४॥

ॐ ह्रीं अहं दृष्टिविषरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२४॥

अनशनादिक नित प्रति साधना,
मरणकाल तई न विराधना ।

उग्र तप करि वसुविधि नासतैं,
हम नमें शिवलोक प्रकाशतैं ॥२५॥

ॐ ह्रीं अहं उग्रतपपरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२५॥

बढति नित प्रति सहज प्रभावना,
उग्र तप करि क्लेश न पावना ।

दीप्ति तप करि कर्म जरायकैं,
भये सिद्ध वमूं सिर नायकैं ॥२६॥

ॐ ह्रीं अहं दीप्ततपपरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२६॥



अन्तराय भये उत्सव बढै,
बाल चन्द्र समान कला चढै ।
वृद्धि तप की ऋद्धि लहैं यती,
सिद्ध नमत सुख हो अति ॥२७॥

ॐ ह्रीं अर्हं तपोवृद्धिरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२७॥

सिंह क्रीडित आदि विधानते,
नित बढावत तप विधि मानतें।
महामुनीश्वर तप परकाशतें,
नमूं मुक्ति भये जगवासतें ॥२८॥

ॐ ह्रीं अर्हं महातपोरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२८॥

शिखिरगिरि ग्रीष्म, हिम सरतटैं,
तरु निकट पावस निजपद रटैं ।
घोर परिषह करि नाहीं हठैं,
भये सिद्ध नमत हम दुःख कटैं ॥२९॥

ॐ ह्रीं अर्हं घोरतपोरिद्धिसिद्धेश्व्यो नमः अर्घ्यं ॥२९॥

महाभयङ्कर निमित्त मिलै जहाँ,
निर्विकार यती तिष्ठैं तहाँ।
महा पराक्रम गुण की खान हैं,
नमो सिद्ध जगत सुखदान हैं ॥३०॥

ॐ ह्रीं अर्हं घोरगुणरिद्धिसिद्धेश्व्यो नमः अर्घ्यं ॥३०॥

सघन गुण की रास महायती,
रत्नराशि समान दिपै अती।

शेष जिन वर्णन करि थकि रहैं,

नमूं सिद्ध महापद को लहैं ॥३१॥

ॐ ह्रीं अहं घोरगुणवरिक्रमाणरिद्धि नमः अर्घ्य ॥३१॥

अतुल वीर्य धनी हन काम को,

चलत मन न लखत सुर बाम को।

बालब्रह्मचारी योगीश्वरा,

नमूं सिद्ध भये वसुविधि हरा ॥३२॥

ॐ ह्रीं अहं ब्रह्मचर्यरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥३२॥

सकल रोग मिटैं संस्पर्शते,

महायतीश्वर के आमर्शते।

औषधी यह ऋद्धि प्रभावना,

भये सिद्ध नमत सुख पावना ॥३३॥

ॐ ह्रीं अहं आमर्षरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥३३॥

मूत्र में अमृत अतिशय वसै,

जा परसतैं सब व्याधि नसै।

औषधी यह ऋद्धि प्रभावना,

भये सिद्ध नमत सुख पावना ॥३४॥

ॐ ह्रीं अहं आमोसियऔषधिरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥३४॥

तन पसीजत जलकन लगत ही,

रोग व्याधि सर्व जन भगत ही।

औषधी यह ऋद्धि प्रभावना,

भये सिद्ध नमत सुध पावना ॥३५॥

ॐ ह्रीं अहं जलोसियरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥३५॥

हस्त पादादिक नखकेश में,
सर्व औषधि हैं सब देश में।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना,
भये सिद्ध नमत सुख पावना ॥३६॥
ॐ ह्रीं अहं सर्वोसिय औषधिरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥३६॥

अडिल्ल

मन सम्बन्धी वीर्य बड़े अतिशय महा,
एक महूरत अन्तर श्रुत चिंतन लहा।
मनोबली यह ऋद्धि भई सुखदाइ जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांयजू॥३७॥
ॐ ह्रीं अर्ह मनोबलीरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य॥३७॥
भिन्न-भिन्न अति सुद्ध उच्च स्वर उच्चरैं,
एक महूरत अन्तर श्रुत वर्णन करैं।
वचनबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू॥३८॥
ॐ ह्रीं अर्ह वचनबलरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य॥३८॥
खड्गासन इक अंग मासछै मास लों,
अचलरूप धिर रहैं छिनक खेदित न हों।
कायबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू॥३९॥
ॐ ह्रीं अर्ह कायबलरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य॥३९॥



अति अरस चरू क्षीर होयकर धरत ही,

वचन खिरतपर श्रवण तुष्टता करत ही।

क्षीरस्त्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,

भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥४०॥

ॐ ह्रीं अर्ह क्षीरस्त्रावीरिद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥४०॥

रूखे भोजन से कर में घृत रस स्त्रवै,

वचन सुनत परको घृत सम्वादित हवै।

घृतस्त्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,

भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥४१॥

ॐ ह्रीं अर्ह घृतस्त्रावीरिद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥४१॥

हस्तकमल अन्न मधुर रस देत हैं,

मधुकर सम जिय वचन गंगको लेत हैं।

मधुस्त्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,

भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥४२॥

ॐ ह्रीं अर्ह मधुस्त्रावीरिद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥४२॥

अमृतसम आहार होय कर आयके,

वचनामृत दे सुक्ख श्रवण में जायके।

आमियरस यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,

भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥४३॥

ॐ ह्रीं अर्ह अमृतरसऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥४३॥

जिस वासन जिस थान आहार करें यती,
 चक्री सेना खाय अखे होवे अती।
 अक्षीण रसी यह ऋद्धि भई सुखदायजू,
 भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥४४॥
 ॐ ह्रीं अहं अक्षीणरसऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥४४॥

सोरठा

सिद्धरास सुखदाय, वर्धमान नितप्रति लसे।
 नमूं ताहि सिर नाय, वृद्ध रूप गुण अगम हैं ॥४५॥
 ॐ ह्रीं अहं वर्धमानसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥४५॥
 रागादिक परिणाम, अन्तर के अरि नास के।
 लहि अरहन्त सु नाम, नमों सिद्धपद पाइया ॥४६॥
 ॐ ह्रीं अरहन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥४६॥

दो अन्तिम गुण थान, भाव सिद्ध इस लोक में।
 तथा द्रव्य शिव थान, सर्व सिद्ध प्रणमूं सदा ॥४७॥
 ॐ ह्रीं लोएसव्वसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥४७॥

शत्रु व्याधि भय नाहिं, महावीर श्रीरज धनी।
 नमूं सिद्ध जिननाथ, संतनिके भव भयहरैं ॥४८॥
 ॐ ह्रीं भयविध्वंसकभगवते महावीरवडढमाणाय नमः अर्घ्य ॥४८॥
 क्षपकश्रेणी आरूढ, निजभावी योगी यथा।
 निश्चय दर्श अमूढ, सिद्धयोग सबही जजों ॥४९॥
 ॐ ह्रीं योगसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥४९॥



वीतराग परधान, ध्यान करें तिनको सदा।

सोई ध्येय महान, नमो सिद्ध हम अघ हरो ॥५०॥

ॐ ह्रीं ध्येयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥५०॥

लोक शिखर शिवधान, अचल विराजत सिद्ध जिन।

लोकवास सर्वान, भये सिद्ध प्रणमूं सदा ॥५१॥

ॐ ह्रीं सव्वसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥५१॥

औरन करत कल्याण, आप सर्व कल्याणमय।

सोई सिद्ध महान, मंगल हेतु नमूं सदा ॥५२॥

ॐ ह्रीं स्वस्तिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥५२॥

तीन लोक के पूज, सर्वोत्तम सुखदाय हैं।

जिन सम और न दूज, तिनपद पूजों भाव युत ॥५३॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥५३॥

लोकोत्तम परधान, तिन पद पूजत हैं सदा।

तातैं सिद्ध महान, सर्व-पूज्यके पूज्य हो ॥५४॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥५४॥

परम धरम निज साध, परमात्म पद पाइयो।

सोई धर्म अबाध, पूजत पद हम दीजिये ॥५५॥

ॐ ह्रीं परमात्मसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥५५॥

सर्व ऋद्धि नव निद्ध, सिद्ध भये नहिं सिद्ध हों।

निजपद साधत सिद्ध, होत सही तिनको नमो ॥५६॥

ॐ ह्रीं परमसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्य ॥५६॥



ॐ ह्रीं अनादिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥६४॥



दोहा

सिद्धन के जु अनन्त गुण, कहि न सकैं गणराय ।
तिन सिद्धन को में जजूं, पूरण अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानन्त गुणात्मक सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः अर्घ्य ।

जयमाला - दोहा

तीर्थङ्कर त्रिभुवन धनी, जा पद करत प्रणाम ।
हम किह मुख वर्णन करें, तिन महिमा अभिराम ॥

चौपाई

जयभविकुमुदनमोदनचन्दा, जयजिनन्दत्रिभुवनअरविन्दा ।
भवतपहरणशरणरसकूपा, मदज्वरवह्निहरणघनरूपा ॥
अकथित महिमा अमित अथाई, निरउपमेय सरसता नाई ।
भावलिङ्गबिनकर्मखिपाई, द्रव्यलिङ्गबिनशिवपदपाई ॥
नयविभागबिनवस्तुप्रमाणा, दयाभावबिननहिंकल्याणा ।
पंगुसुमेरुचूलिकापरसैं, गूंगज्ञानआरम्भेस्वरसै ॥
योअजोगकारजनिहोई, तुमगुनकथनकठिनहैसोई ।
सर्वजैनशासनजिनमाहीं, भागअनन्तधरैंतुमनाहीं ॥
गोखुरमेंनहींसिन्धुसमावे, वायसलोकअन्तनहींपावै ।
तातैंकेवलभक्तिभावतुम, पावनकरोअपावनउरहम ॥
जेतुमयशनिजमुखउच्चारैं, तेतिहूँलोकसुजसविस्तरैं ।
तुमगुणगानमात्रकरप्रानी, पावैंसुगुणमहासुखदानी ॥
जिनचितध्यानसलिलतुमधारा, तेमुनितीरथहैंनिरधारा ।
तुमगुणहंसतुम्हींसरवासी, वचनजालमेलेतनफांसी ॥

जगत बन्धु गुणसिन्धु दयानिधि, बीजभूत कल्याण सर्वसिधि ।
अक्षय शिव स्वरूप श्रिय स्वामी, पूरण निजानन्द विश्रामी ॥
शरणागत स्वस्व सुहितकर, जन्म-मरण दुःख आधि व्याधि हर ।
सन्त भक्ति तुम हो अनुरागी, निश्चै अजर अमर पद भागी ॥

घटानन्द छन्द

जय जय सुखसागर सुजस उजागर,
गुणगण आगर तारण हो ।
जय सन्त उधारण विपति विडारण,
सुख विस्तारण कारण हो ॥
तुम गुण गान परम फलदान,
सो मन्त्र प्रमाण विधान करूँ ।
जहरी कर्मनि बैरी कहरी,
असहैरी भव की व्याधि हरूँ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुःषष्टिदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः महार्घं निर्वपामीति
स्वाहा ।

इत्याशीर्वादः । इति चतुर्थ पूजा सम्पूर्णम् ।

यहाँ पर ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः मंत्र का १०८
बार जाप देना चाहिये ।





पञ्चमी पूजा

छप्पय छन्द

ऊरध अधो सुरेफ बिन्दु हंकार बिराजे ।
 अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्तु सु छाजे ॥
 वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिवर ।
 अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
 फुनि अंत है बेडयो परम सुर, ध्यावत अरिनागको ।
 केहरिसम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिनः अष्टविंशत्यधिकशत गुण
 सहित विराजमान अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ
 तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।
 दोहा- सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग ।

सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटैं उपद्रव योग ॥२॥

इति यन्त्र स्थापनं

अथाष्टकं - चाल बारमासा छन्द

चन्द्रवर्णं लखि चन्द्रकान्तमणि, मनतें स्रवै सुधारा हो ।
 कंज सुवासित प्रासुक जलसों, पूजूं पद अनुसारा हो ॥
 लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उरधारा हो ।
 चौसठि दुगुण सुगुण मणि सुमिरन सुमिरत ही भवपारा हो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने एकसौ अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय
 श्री समत्तपाणदंसणवीर्य सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वाह
 जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

सुरगण मणिधर जास वास लहि, मद तजि गन्ध लुभावत हैं ।
सो चन्दन नन्दन वन भूषण, तुम पद कमल चढ़ावत हैं ॥ लोका.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने एकसौ अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय
श्री समत्तणाणदंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वाह
संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

चंपक ही के भ्रम भ्रमरावलि, भ्रमत चकित चकराज भए ।
शशिमण्डलजानो सो अक्षत, पुञ्जधारपदकञ्चनये ॥ लोका.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने एकसौ अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय
श्री समत्तणाणदंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वाह
अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

मदन वदन दुतिहरन वरन रति, लोचन अलिगण छाय रहे ।
पुष्पमाल वासित विशाल सो, भेंट धरत उर काम दहे ॥ लोका.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने एकसौ अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय
श्री समत्तणाणदंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वाह
कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

चितवत मन वरणत रसना रस, स्वाद लेत ही तूत थये ।
जन्मान्तर हू क्षुधा निवारैं, सो नेवज तुम भेंट धरे ॥ लोका.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने एकसौ अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय
श्री समत्तणाणदंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वाह
क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

लवमणिप्रभा अनूपम सुर निज, शीश धरण की रास करै ।
याविन तुच्छ विभव निज जानें, सो दीपक तुम भेंट धरैं ॥ लोका

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने एकसौ अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय
श्री समत्तणाणदंसणवीर्यं सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वाह
मोहान्धकारनिवाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

नीलाज्जना सुरी नभ में ज्यों, ऋषभ भक्ति कर नृत्य कियो ।
सोतुमसन्मुख धूप उडावत, तिसछविको नहीं भावलियो ॥ लो

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने एकसौ अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय
श्री समत्तणाणदंसणवीर्य सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वाह
अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

सेव रंगीले अनार रसीले, केला की ले डाल फली ।
डाली हूं नृपमाली हू, नातर प्रासुकता की रीति भली ॥ लोका.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने एकसौ अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय
श्री समत्तणाणदंसणवीर्य सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वाह
मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

एकसौ एक अधिक सोहत वसु, जाति अर्घ करि चरण नमूं ।
आनन्द आरति आरत तजिकैं, परमारथहित कुमति बमूं ॥ लोका.

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने एकसौ अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय
श्री समत्तणाणदंसणवीर्य सुहम त्तेव अवग्गहण अगुरुलघुअव्वाह
अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

गीता छन्द

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें चरू प्रचूर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपाइन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्मवर्त न शाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुःख जन्म टाल अपार गुण सूक्ष्म स्वरूप अनूप हैं ।

कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अभेय चहुँगूण, गेह द्यो हम शुभमती ॥

ॐ ह्रीं अहं अष्टाविंशति अधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

एकसौ अट्ठाईस गुण सहित अर्घ

त्रोटक छन्द

निरबाध सु तत्त्व स्वरूप लखो, इक लेश विशेष न शेष रखो ।
अति शुद्ध सुभाविक छायाक है, नमूं दर्श महासुखदायक है ॥

ॐ ह्रीं अहं सम्यग्दर्शनाय नमः अर्घ्यं ॥१॥

निरमोह अकोह अबाधित हो, परभाव थकी न बिराधित हो ।
निरसंस चराचर जानत हैं, हम सिद्ध सु ज्ञान प्रमानत है ॥

ॐ ह्रीं अहं सम्यग्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥२॥

सब राग विरोध निवारन है, निज भाव थकी निज धारन है ।
पर में न कभू निज भाव वहै, अति सम्यक् चारित्र नाम यहै ॥

ॐ ह्रीं अहं सम्यक्चारित्राय नमः अर्घ्यं ॥३॥

उतपाद विनाश न बाध धरैं, परनाम सुभाव नहीं निसरैं ।
तुम धारत हो यह धर्म महा, हम पूजत हैं पद शीश यहां ॥

ॐ ह्रीं अहं अस्तित्वधर्माय नमः अर्घ्यं ॥४॥

निज भावनतैं व्यतिरिक्त न हो, प्रणामों गुणरूप गुणातम हो ।
यह वस्तु सुभाव सदा विलसो, हम पूजत हैं सब पाप नसो ॥

ॐ ह्रीं अहं वस्तुत्वधर्माय नमः अर्घ्यं ॥५॥



परिमाण न जानत हैं तिनको, छिन रोग न आवत हैं जिनको ।
अप्रमेय महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्ह अप्रेयधर्माय नमः अर्घ्य ॥६॥

गुणपर्य प्रमाण दशा नत ही, निजरूप न छांडत हैं कित ही ।
जिन वैन प्रमाण सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्ह अगुरुलघुत्वधर्माय नमः अर्घ्य ॥७॥

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब चित्त स्वरूप सुजान तिसैं ।
मुख चेतनता गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्ह चेतनत्वधर्माय नमः अर्घ्य ॥८॥

निज अंग-उपांग शरीर नहीं, जिन रंग-प्रसंग सु तीर नहीं ।
नभसार अमूरति धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्ह अमूर्तित्वधर्माय नमः अर्घ्य ॥९॥

परको न कदाचित धर्म गहैं, निज-धर्म स्वरूप न छांडत हैं ।
अति उत्तम धर्म सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्ह सम्यक्त्वधर्माय नमः अर्घ्य ॥१०॥

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब ज्ञान स्वरूप सुजान तिसैं ।
सुख ज्ञानमई गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्ह ज्ञानधर्माय नमः अर्घ्य ॥११॥

चिन्मय चिन्मूरति जीव सही, अति पूरणता विन भेद कही ।
निज जीव सुभाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्ह जीवत्वधर्माय नमः अर्घ्य ॥१२॥

मन को नहीं बेग लखावत हैं, जिस बैन नहीं बतलावत हैं ।
अति सूक्ष्म भाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मत्वधर्माय नमः अर्घ्यं ॥१३॥

परघातन आप न घात करें, इक खेद समूह अनन्त वरें ।
अवगाह सरूप सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवगाहनत्वधर्माय नमः अर्घ्यं ॥१४॥

अविनाश सुभाव विराजत हैं, बिन व्याधि स्वरूप सु छाजत हैं ।
यह धर्म महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अव्याबाधत्वधर्माय नमः अर्घ्यं ॥१५॥

निजसों निज की अनुभूति करें, अपनो परसिद्ध सुभाव वरें ।
निज ज्ञान प्रतीत सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वसंवेदनज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥१६॥

निज ज्योति स्वरूप उद्योतमई, तिसमें परदीप्त रहें नित ही ।
यह ताप स्वरूप उधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वरूपतापतपसे नमः अर्घ्यं ॥१७॥

निजऽनन्त चतुष्टय राजत हैं, दृग ज्ञान बलासुख छाजत हैं ।
यह आप महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तचतुष्टयात्मकाय नमः अर्घ्यं ॥१८॥

सुखसमकित आदिमहागुण हो, तुम साधित सिद्ध भए अब हो ।
यह उत्तम भाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सम्यक्त्वादिगुणात्मकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१९॥

दोहा- निश्चय पञ्चाचार सब, भेद रहित तुम साध ।
चेतन की अति शक्ति में, सूक्ष्म सब निरबाध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चाराचार्येभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२०॥



चौपाई

सब विकल्प तजिभेद स्वरूपी, निज अनुभूति मग्न चिद्रूपी ।
निश्चय रत्नत्रय परकासो, पूजूं भाव भेद हम नासो ॥

ॐ ह्रीं अहं रत्नत्रयप्रकाशाय नमः अर्घ्यं ॥२१॥

कारण भेद रत्नत्रय धारी, कर्म भेद निज भाव सम्भारी ।
करता भेद आप परिणामी भेदाभेद रूप प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं अहं स्वरूपसाधकसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२२॥

मनोयोग कृत जिय संसारी, क्रोधारम्भ करत दुःखकारी ।
तासों रहित सिद्ध भगवाना, अन्तर शुद्ध करूँ तिन ध्याना ॥

ॐ ह्रीं अहं अकृतमनःक्रोधसंरम्भमनोगुप्तये नमः अर्घ्यं ॥२३॥

पर के मन क्रोधी संरम्भा, करत मूढ़ नाना आरम्भा ।
सिद्धराज प्रणमूं तिस त्यागी, निर्विकल्प निजगुण के भागी ॥

ॐ ह्रीं अहं अकारितमनःक्रोधसंरम्भनिर्विकल्पधर्माय नमः अर्घ्यं ॥२४॥

भुजङ्गप्रयात छन्द

मनोयोग रम्भा प्रशंसीक क्रोधा, निजानन्द को मान ठाने अबोध ।
महानिन्दनीभावकोत्यागदीना, निजानन्दकोस्वादही आपलीना ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधसंरम्भसानन्दधर्माय नमः अर्घ्यं ॥२५॥

मनोयोग क्रोधी समारम्भ धारी, सदा जीव भोगे महाखेद भारी ।
महानन्दआख्यातकोभावपायो, नमों सिद्धसोदोषनाहीं उपायो ॥

ॐ ह्रीं अहं अकृतमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥२६॥

दोहा

समारम्भ क्रोधित सुमन, परकारित दुःख नाहिं ।
परमात्म पद पाइयो, नमूं सिद्ध गुण ताहिं ॥

ॐ ह्रीं अहं अकारितमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥२७॥



अडिल्ल छन्द

समारंभ परिवर्तमान युत मन धरे,
विकलपमई उपकरण विविध इकठे करे।

महा कष्ट को हेत भाव यह ना गहो,
प्रणमूं सिद्ध अनन्त सुखातम गुण लहो ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमातसमारम्भसुखात्मगुणाय नमः अर्घ्य ॥३५॥

मान सहित मनयोग द्वार चिंतवन करैं,
समारंभ पर-कृत्य करावन विधि वरैं।

तहाँ कष्ट को हेत भात यह ना गहो,
प्रणमूं सिद्ध अनन्य गुणातम पद लहौ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसमारम्भअनन्यगताय नमः अर्घ्य ॥३६॥

जोडे चित न समाज विविध जिस काज में,
समारंभ तिस नामसो मति जिनराज में।

माने मानी मन आनन्द सु निमित्त से,
नमूं सिद्ध हैं अतुल वीर्य त्यागत तिसे ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानसमारम्भअनन्तवीर्याय नमः अर्घ्य ॥३७॥

अशुभ काज परिवर्त नाम आरंभ को,
मान सहित मन द्वार तास उद्यम गहो।

जगवासी जिय नितप्रति पाप उपाय हैं,
णमो सिद्ध या रहित अतुल सुखराय हैं ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानारम्भअनन्तसुखाय नमः अर्घ्य ॥३८॥



दोहा

मनो मान आरम्भ के, भये अकारित आप।

अतुल ज्ञान धारी भये, नमत नसैं सब पाप॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानारम्भअनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥३९॥

मनो मान आरम्भ में, नानुमोदि भगवन्त।

गुण अनन्त युत सिद्ध पद, पूजत हैं नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानआरम्भअनन्तगुणाय नमः अर्घ्य ॥४०॥

गीतां छन्द

जो अशुभ काज विकल्प हो, संरम्भ मनयुत कुटिलता।

कर कर अनादित रंकजिय, बहु भाँति पाप उपावता ॥

सो त्याग सकल विभाव यह तुम, सिद्ध ब्रह्मस्वरूप हो।

हम पूजि हैं नित भक्ति युत, भक्ति वत्सलरूप हो ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासंरम्भब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥४१॥

दोहा

मायावी मनतें नहीं, कबहुँ आरम्भ कराय।

सिद्ध चेतना गुण सहित, नमूं सदा मन लाय ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायासंरम्भचैतन्यभावाय नमः अर्घ्यं ॥४२॥

मायावी मनतें कभी, रम्भानन्द न होय।

सिद्ध अनन्य सुभाव युत, नमूं सदा मद खोय ॥

ॐ ह्रीं नानुमौदितमनोमायासंरम्भअनन्यसवभावाय नमः अर्घ्यं ॥४३॥

पद्मडि छन्द

मायावी मनतैं समारम्भ, नहिंकरत सदा ही अचल खम्भ ।

तुम स्वानुभूति रमणीय संग, नित नमन करों धरि मन उमंग ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासमारम्भस्वानुभूतिरताय नमः अर्घ्यं ॥४४॥

मन वक्र द्वार उपकर्ण ठान, विधि समारम्भको नहिं करान ।
निज साम्य धर्म में रहो लिप्त, तुम सिद्ध नमों पद धार चित्त ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायासमारम्भसाम्यधर्माय नमः अर्घ्य ॥४५॥

दोहा

मायावी मन में नहीं, समारम्भ आनन्द ।
नमों सिद्ध पद परम गुरु, पाऊँ पद सुख वृन्द ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासमारम्भगुरुवरे नमः अर्घ्य ॥४६॥

पद्धड़ी छन्द

बहु विधिकर जोडै अशुभ काज, आरम्भ नाम हिंसा समाज ।
मायावी मन द्वारै करेय, तुम सिद्ध नमूं यह विधि हरेय ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायारम्भपरमशान्ताय नमः अर्घ्य ॥४७॥

पूर्वोक्त अकारित विधि सरूप, पायो निर-आकुल सुख अनूप ।
सर्वोत्तम पद पायो महान, हम पूजत हैं उर भक्ति ठान ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायारम्भनिराकुलाय नमः अर्घ्य ॥४८॥

दोहा

मायावी आरम्भ करि, मन में आनन्द मान ।
सो तुम त्यागो भाव यह, भये परम सुख खान ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमायारम्भअनन्तसुखाय नमः अर्घ्य ॥४९॥

लोभी मन द्वारे नहीं, करैं सदा समरम्भ ।
हम अनन्तदृग सिद्धपद, पूजत हैं मनथम्भ ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसंरम्भअनन्तदृगाय नमः अर्घ्य ॥५०॥

लोभी मन समरम्भ को, परसों नहीं कराय ।
दृगानन्द भावतमा, सिद्ध नमूं मन लाय ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनःलोभसंरम्भदृगानन्दभावाय नमः अर्घ्य ॥५१॥



ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभारम्भस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥५८॥



अडिल्ल छन्द

क्रोधित जिय वचयोग द्वार उपयोग को,
 रचना विधि संकल्प नाम समरम्भ सो ।
 तामें करें प्रवृत्ति पाप उपजावते,
 नमूं सिद्ध या बिन वचगुप्ति उपावते ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसंरम्भवागुप्ताय नमः अर्घ्यं ॥५९॥

क्रोध अग्नि करि निज उपयोग जरा वहीं,
 वचन योग करि विधि संरम्भ करावहीं ।
 सो तुम त्याग विभाव सुभाव सरूप हो,
 नमूं उरानन्द धार चिदानन्द रूप हों ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसंरम्भस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥६०॥

सोरठा

क्रोधित निज वच द्वार, मोदित हो संरम्भ में ।
 सो तुम भाव विडार, नमूं स्वानुभव लब्धियुत ॥
 ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसंरम्भस्वानुभवबंधये नमः अर्घ्यं ॥६१॥

दोहा

क्रोध सहित वाणी नहीं, समारम्भ परवृत्त ।
 स्वानुभूति रमणी रमण, नमूं सिद्ध कृतकृत्य ॥
 ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसमारम्भस्वानुभूतिरमणाय नमः अर्घ्यं ॥६२॥
 समारम्भ क्रोधित जिये, प्रेरित पर वच द्वार ।
 नमूं सिद्ध इस कर्म बिन, धर्मधरा साधार ॥
 ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसमारम्भसाधारणधर्माय नमः अर्घ्यं ॥६३॥



समारम्भ मन वचन करि, हर्षित हों युत क्रोध ।

नमूं सिद्ध या विन लहो, परम शांति सुख बोध ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसमारम्भपरमशान्ताय नमः अर्घ्यं ॥६४॥

छन्द मोतियादाम

वैर वच योग धरें जिय रोष, करैं विधि भेद अरम्भ सदोष ।

तजो यह सिद्ध भये सुखकार, नमूं परमामृत तुष्ट अवार ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधारम्भपरमामृततुष्टाय नमः अर्घ्यं ॥६५॥

अकारित वैन सदा युत क्रोध, महादुःखकार अरम्भ अबोध ।

भये समरूप महारस धार, नमें हम सिद्ध लहैं भवपार ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधारम्भसमरसाय नमः अर्घ्यं ॥६६॥

दोहा

नानुमोद आरम्भ में, क्रोध सहित वच द्वार ।

परम प्रीति निज आत्मरति, नमूं सिद्ध सुखकार ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधारम्भपरमप्रीतये नमः अर्घ्यं ॥६७॥

अडिल्ल

वचन द्वार संरम्भ मानयुत जे करैं,

जोड़ करन उपकरण मानसों उच्चरैं ।

नाना विधि दुःख भोग निजातमको,

नमूं सिद्ध या विन अविनश्वर पद धरैं ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसंरम्भअविनश्वरधर्माय नमः अर्घ्यं ॥६८॥

मान प्रकृति करि उदै करावें ना कदा,

वचन न करि संरम्भ भेद वरणूं यदा ।



मन इन्द्रिय अव्यक्त स्वरूप अनूप हो,

नमूं सिद्ध गुण सागर स्वातम रूप हो ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानसंरम्भअव्यक्तस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥६९॥

सोरठा

नानुमोद वच योग, मान सहित संरम्भमय ।

दुर्लभ इन्द्री भोग, परम सिद्ध प्रणमूं यदा ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानसंरम्भदुर्लभाय नमः अर्घ्यं ॥७०॥

चौपाई

समारम्भ जिन वैन न द्वार, करत नहीं हैं मान संभार ।

ज्ञान सहित चिन्मूरति सार, परम गम्य हैं निर-आकार ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसमारम्भपरमगम्यनिराकाराय नमः अर्घ्यं ॥७१॥

वचन प्रवृत्ति मानयुत ठान, समारम्भ विधि नाहिं करान ।

शुद्ध स्वभाव परम सुखकार, नमूं सिद्ध उर आनन्द धार ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानसमारम्भपरमस्वभावाय नमः अर्घ्यं ॥७२॥

वचन प्रवृत्ति मानयुत होय, समारम्भ मय हर्षित सोय ।

त्यागत एक रूप ठहराय, नमूं एकत्व गती सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानसमारम्भएकत्वगताय नमः अर्घ्यं ॥७३॥

मानी जिय निज वचन उचार, वरतत हैं आरम्भ मँझार ।

परमातम हो तजि यह भाव, नमूं धर्मपति धर्म स्वभाव ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानारम्भपरमात्मधर्मस्वभावाय नमः अर्घ्यं ॥७४॥

सोरठा

मानी बोले बैन, परप्रेरण आरम्भ में ।

सो त्यागो तुम ऐन, शाश्वत सुख आतम नमूं ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानारम्भशाश्वतानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥७५॥



हर्षित वचन उच्चार, मान सहित आरम्भमय।

सो तुम भाव विडार, निजानन्द रस घन नमूं॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानारम्भममृतपूरणाय नमः अर्घ्यं ॥७६॥

ધરિ કુટિલ ભાવ જો કહત બૈન, સંરમ્ભ રૂપ પાપિષ્ઠ એન ।

तुम धन्य-धन्य यह रीति त्याग, हो बेहद धर्मस्वरूप भाग ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासंरम्भअनन्तधर्मेकरूपाय नमः अर्घ्यं ॥७७॥

मायायुत वचनन को प्रयोग, संरम्भ करावत अशुभ योग ।

तुम यह कलङ्क नहिं धरो लेश, हो अमृत शशि पूजूं हमेश ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासंरम्भममृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं ॥७८॥

वचमायायुत संरम्भ कीन, सो पापरूप भाषो मलीन।

तिस त्याग अनेक गुणात्म रूप, राजत अनेक मूरत अनूप ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायासंरम्भअनेकमूर्तये नमः अर्घ्यं ॥७९॥

तुम समारम्भ की विधि विधान, नहीं करत कुटिलता भेद ठान ।

हो नित्य निरञ्जन भाव युक्त, मैं नमूं सदा संशय विमुक्त ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासमारम्भनित्यनिरञ्जनस्वभावाय नमः अर्घ्यं ॥८०॥

दोहा

मायायुत निज बैनतैं, समारम्भ के हेत।

नहिं प्रेरित पर को नमूं, निजगुण धर्म समेत ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासमारम्भआत्मैकधर्माय नमः अर्घ्यं ॥८१॥

मायाकरि बोलत नहीं, समारम्भ हर्षाय ।

सूक्ष्म अतीन्द्रिय वृष नमूं, नमूं सिद्ध मन लाय ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायासमारम्भपरमसूक्ष्माय नमः अर्घ्यं ॥८२॥



मायायुत आरम्भ की, वचन प्रवृत्ति नशाय ।

नमि अनन्त अवकाश गुण, ज्ञान द्वार सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायारम्भअनन्तावकाशाय नमः अर्घ्यं ॥८३॥

मायायुत आरम्भमय, मेढ वचन उपदेश ।

भये अमल गुण ते नमूं, रागद्वेष नहीं लेश ॥

ॐ ह्रीं अहं अकारितवचनमायारम्भअमलगुणणाय नमः अर्घ्यं ॥८४॥

मायायुत आरम्भमय, मैठ वचन आनन्द ।

भये अनन्त सुखी नमूं, सिद्ध सदा सुखवृन्द ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायारम्भनिरवधिसुखाय नमः अर्घ्यं ॥८५॥

जो परिग्रह को चाह लोभसो मानिये,

विधि विधान ठानत संरम्भ बखानिये ।

वचन द्वार नहीं करें नमूं परमातमा,

सब प्रत्यक्ष लखें व्यापक धर्मातमा ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसंरम्भव्यापकधर्माय नमः अर्घ्यं ॥८६॥

वर्तावन संरम्भ हेत पर के तई,

लोभ उदै करि वचन कहैं हिंसामई ।

नमूं सिद्ध पद यह विपरीत सु जिन हरो,

सकल चराचर ईश व्यापक गुण वरो ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसंरम्भव्यापकगुणाय नमः अर्घ्यं ॥८७॥

लोभी वच संरम्भ हर्ष परकाशनं,

नाना विधि सञ्चरें पाप दुःख कारनं ।

सो तुम नाशत शाश्वत ध्रुवपद पाइयो,

नमूं अचल गुण सहित सिद्ध मन भाइयो ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसंरम्भअचलाय नमः अर्घ्यं ॥८८॥

सोरठा

समारम्भ के बैन, लोभ सहित पर आसरें ।

तज निरलम्बी ऐन, नमूं सिद्ध उपर धारिकें ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसमारम्भनिरालंबाय नमः अर्घ्यं ॥८९॥

समारम्भ उपदेश, लोभ उदै थिति मेटिकें ।

पायो अचल स्वदेश, नमूं निराश्रय सिद्ध गुण ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसमारम्भनिराश्रयाय नमः अर्घ्यं ॥९०॥

नानुमोद वच लोभ, समारम्भ परवृत्त में ।

नमूं तिन्हें तजि क्षोभ, नित्य अखण्ड विराजते ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसमारम्भअखण्डाय नमः अर्घ्यं ॥९१॥

दोहा

लोभ सहित आरम्भ को, करत नहीं व्याख्यान ।

नूतन पञ्चम गति लहो, नमूं सिद्ध भगवान ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभारम्भविपरीतावस्थाय नमः अर्घ्यं ॥९२॥

लोभ वचन आरम्भ को, कहत न पर के हेत ।

समयसार परमात्मा, नमत सदा सुख देत ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभारम्भसमयसाराय नमः अर्घ्यं ॥९३॥

सोरठा

नानुमोद वच द्वार, लोभ सहित आरंभमय ।

अजर अमर सुखकार, नमूं निरन्तर सिद्धपद ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभारम्भनिरन्तराय नमः अर्घ्यं ॥९४॥



अडिल्ल

क्रोधित रूप भयङ्कर हस्तादिक तनी,
करत समस्या संरम्भ प्रकाशनी ।
सो तुम नाशो कायगुप्ति निंद्य करि यह तदा,
दृष्टि अगोचर कायगुप्ति प्रणमूं सदा ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसंरम्भकायगुप्तये नमः अर्घ्यं ॥९५॥

सोरठा

पर प्रेरण निज काय, क्रोध सहित संरम्भ तज ।
चेतन मूरति पाय, शुद्ध काय प्रणमूं सदा ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसंरम्भशुद्धकायाय नमः अर्घ्यं ॥९६॥

हर्षित शीश हिलाय, क्रोध उदय समरम्भ में ।
त्यागत भये अकाय, नमूं सिद्ध पद भावयुत ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसंरम्भअकायाय नमः अर्घ्यं ॥९७॥

समारम्भ विधि मेटि, कायिक चेष्टा क्रोध की ।
स्वै गुणपर्य समेत, भक्ति सहित प्रणमूं सदा ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसमारम्भस्वान्वयगुणाय नमः अर्घ्यं ॥९८॥

दोहा

समारम्भ विधि क्रोध युत, तनसों नहीं कराय ।
नित प्रति रति निजभाव में, बन्दूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसमारम्भभाववरतये नमः अर्घ्यं ॥९९॥

समारम्भ सो कायसो, क्रोध सहित परसंस ।
निज अभिन्न पद पाइयो, नमूं त्याग सरवंस ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसमारम्भसान्वयधर्माय नमः अर्घ्यं ॥१००॥



क्रोधित कायारम्भ तजि, परसों रहित स्वभाव ।

शुद्ध द्रव्य में रत नमूं, निज सुख सहज उपाव ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधारम्भशुद्धद्रव्यरताय नमः अर्घ्य ॥१०१॥

क्रोधित कायारम्भ नहीं, रञ्च प्रपञ्च कराय ।

पञ्चरूप संसार हनि, नमूं पञ्चमगति राय ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधारम्भसंसारछेदनाय नमः अर्घ्य ॥१०२॥

क्रोधित कायारम्भ में, हर्ष विषाद विडार ।

अनेकान्त वस्तुत्व गुण, धरें नमो पद सार ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधारम्भजैनधर्माय नमः अर्घ्य ॥१०३॥

मान सहित संरम्भ को, तनसों रचना त्याग ।

पर-प्रवेश विन रूप जिन, लियो नमूं बड़भाग ॥

ॐ ह्रीं अकृतमानकायसंरम्भस्वरूपायगुप्तये नमः अर्घ्य ॥१०४॥

मान उदय संरम्भ विधि, तनसों नहीं कराय ।

निज कृत पर उपकार जिन, लियो नमूं तिन पाय ॥

ॐ ह्रीं अकारितमानकायसंरम्भनिजकृतये नमः अर्घ्य ॥१०५॥

मान उदय संरम्भ में, तनसों हर्ष न लेश ।

ध्यान योग निज ध्येय पद, भावित नमूं अशेष ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमानकायसंरम्भध्येयभावाय नमः अर्घ्य ॥१०६॥

मदयुत ततसों रञ्च भी, समारम्भ विधि नाहि ।

परमाराधन योगपद, पायो प्रणमूं ताहि ॥

ॐ ह्रीं अकृतमानकायसमारम्भपरमाराधनाय नमः अर्घ्य ॥१०७॥

समारम्भ निज कायसों, मदयुत नहीं कराय ।

ज्ञानानन्द सुभाव युत, प्रणमूं शीश नवाय ॥

ॐ ह्रीं अकारितमानकायसमारम्भअनन्तगुणाय नमः अर्घ्य ॥१०८॥



समारम्भ मय विधि सहित, तनसों हर्ष न होय।

निजानन्द नन्दित तिन्हैं, नमूं सदा मद खोय॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमानकायसमारम्भस्वनन्दिताय नमः अर्घ्यं ॥१०९॥

चौपाई

अकृत मानारम्भ शरीर, पर अनिन्द्य बन्दू धर धीर।

सिद्ध बसैं जु लोक के अन्त, नमों करौ हमरी भव अन्त॥

ॐ ह्रीं अकृतमानकायारम्भसन्तोषाय नमः अर्घ्यं ॥११०॥

कायारम्भ अकारित मान, स्वस्वरूपरत बन्दूं तान।

सिद्ध बसैं जु लोक के अन्त, नमों करौ हमरी भव अन्त॥

ॐ ह्रीं अकारितमानकायारम्भस्वरूपरताय नमः अर्घ्यं ॥१११॥

मानारम्भ आनन्दित काय, प्रणमूं विमल शुद्ध पर्याय।

शुद्ध आत्मा त्रय जग ईश, तिनको सदा नवाऊं शीश॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमानकायारम्भशुद्धपर्यायाय नमः अर्घ्यं ॥११२॥

दोहा

मायायुत संरम्भ विधि, तनसों करत न आप।

गुप्त निजामृत रस लहैं, नमूं तिन्हैं तज पाप॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासंरम्भअमृतगर्भाय नमः अर्घ्यं ॥११३॥

मायायुत संरम्भ विधि, तनसों नहीं कराय।

मुख्य धर्म चैतन्यता, विनवै प्रणमूं पाय॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासंरम्भचैतन्याय नमः अर्घ्यं ॥११४॥

मायायुत संरम्भ मय, नानुमोद युत काय।

वीतराग आनन्द पद, समरस भावन भाय॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासंरम्भसमरसीमावाय नमः अर्घ्यं ॥११५॥

समारम्भ माया सहित, अकृत तन विच्छेद ।

बन्ध दशा निज पर द्विविधि, नमत ससैं भव खेद ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासमारम्भभवेदकाय नमः अर्घ्यं ॥११६॥

समारम्भ तन कुटिलसों, भए अकारित स्वामि ।

निज परिणतिसों परणये, गुण स्वातन्त्र नमामि ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासमारम्भस्वतन्त्रधर्माय नमः अर्घ्यं ॥११७॥

नानुमोदी तन कुटिलता, समारम्भ विधि देव ।

गुण अनन्त युत परिणामूं, धर्म समूही एव ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासमारम्भधर्मसमूहाय नमः अर्घ्यं ॥११८॥

मायायुत निज देहसों, नहीं आरम्भ करेह ।

परमात्म सुख छय बिना, पायो बन्दूं तेह ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायारम्भपरमात्मसुखाय नमः अर्घ्यं ॥११९॥

मायारम्भ शरीर करि, परसों नहीं करान ।

निष्ठातम स्वस्थित नमूं, सिद्धराज गुणखान ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायारम्भनिष्ठात्मने नमः अर्घ्यं ॥१२०॥

मायारम्भ शरीरसों, नानुमोद भगवन्त ।

दर्शज्ञानमय चेतना, सहित नमें नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायारम्भचेतनाय नमः अर्घ्यं ॥१२१॥

पद्धडि छन्द

संरम्भ चाह नहिं काययोग, चित परिणति नमि शुद्धपयोग ।

धारक सिद्धन को धरूं ध्यान, तुम मेटो मेरो सब अज्ञान ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसंरम्भपरमचितपरिणताय नमः अर्घ्यं ॥१२२॥



संरम्भ अकारित लोभ देह, निज आतम रत स्वयमेव तेह ।

धारक सिद्धान को धरूँ ध्यान, तुम मेटो मेरो सब अज्ञान ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसंरम्भस्वसमरताय नमः अर्घ्य ॥१२३॥

संरम्भ लोभी हर्ष नाश, नमि व्यक्त धर्म केवल प्रकाश ।

धारक सिद्धान को धरूँ ध्यान, तुम मेटो मेरो सब अज्ञान ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसंरम्भव्यक्तधर्माय नमः अर्घ्य ॥१२४॥

सोरठा

लोभी योग शरीर, समारम्भ विधि नाशकें ।

ध्रुव आनन्द अतीव, पायो पूजूँ सिद्धपद ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसमारम्भनित्यसुखाय नमः अर्घ्य ॥१२५॥

लोभ अकारित काय, समारम्भ निज कर्म हनि ।

पायो पद अकषाय, सिद्ध-वर्ग पूजूँ सदा ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसमारम्भअकषाय नमः अर्घ्य ॥१२६॥

पूर्ववर्त आनन्द, परिग्रह इच्छा मेटिकें ।

पायो शौच स्वच्छन्द, नमूँ सिद्धपद भक्ति युत ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसमारम्भशौचगुणाय नमः अर्घ्य ॥१२७॥

दोहा

काय द्वार आरम्भ को, लोभ उदय विधि नाश ।

नमों चिदात्म पद लियो, शुद्ध ज्ञान प्रकाश ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभारम्भचिदात्मने नमः अर्घ्य ॥१२८॥

काय द्वार आरम्भ विधि, लोभ उदय न कराय ।

निज अवलम्बित पद लियो, नमूँ सदा तिन पाय ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभारम्भनिरालंबाय नमः अर्घ्य ॥१२९॥



निज परिणति सों अति ही अभिन्न।



अत्यन्त विमल सब ही विशेष,
 मल लेश शोध राखो न शेष ॥२॥
 मणि दीप सार निर्विघ्न ज्योति,
 स्वाभाविक नित्य उद्योत होत ।
 त्रैलोक्य शिखर राजत अखण्ड,
 सम्पूरण द्युति प्रगटी प्रचण्ड ॥३॥
 मुनि मन मंदिर को अन्धकार,
 तिस ही प्रकाशसौं नशत सार ।
 सो सुलभ रूप पायो न अर्थ,
 जिस कारण भव भव भ्रमें व्यर्थ ॥४॥
 जो कल्प काल में होत सिद्ध,
 तुम छिन ध्यावत लहिये प्रसिद्ध ।
 भवि पतितन को उद्धार हेत,
 हस्तावलम्ब तुम नाम देत ॥५॥
 तुम गुण सुमिरण सागर अथाह,
 गणधर शरीख नहीं पार पाह ।
 जो भवदधि पार अभव्य रास,
 पावे न वृथा उद्यम प्रयास ॥६॥
 जिन मुख द्रहसों निकसी अभंग,
 अति वेग रूप सिद्धान्त गंग ।
 नय सप्त भंग कल्लोल मान,
 तिहुँ लोक बही धारा प्रमान ॥७॥

सो द्वादशांग वाणी विशाल,
 ता सुनत पढ़त आनन्द विशाल।
 यातें जग में तीरथ सुधाम,
 कहिलायो है सत्यार्थ नाम ॥८॥
 सो तुमहीसो हैं शोभनीक,
 नातर जल सम जड़ वहै सु ठीक।
 निजपर आतम हित आत्म भूत,
 जबसे है जब उतपत्ति सूत ॥९॥
 ज्यों महाशीत हो हिम प्रवाह,
 है मेटन समरथ अग्नि दाह।
 त्यों आप महामंगल स्वरूप,
 पर विघन विनाशन सहज रूप ॥१०॥
 हूँ सन्त दीन तुम भक्ति लीन,
 सो निश्चय पावैं पद प्रवीण।
 तातैं मन-वच-तन भाव धार,
 तुम सिद्ध नमूं मम नमस्कार ॥११॥

दोहा

जो तुम ध्यावें भावसों, ते पावें निज भाव।
 अग्नि पाक संयोग करि, शुद्ध सुवर्ण उपाय ॥
 ॐ ह्रीं अष्टाविंशत्यधिकशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं।
 “ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः” मंत्र का १०८ बार जाप देना चाहिये।
 इत्याशीर्वादः। इति पञ्चमी पूजा सम्पूर्णम्।

श्री षष्ठी पूजा २५६ गुण सहित

छप्पय छन्द

ऊरध अधो सुरेफ बिन्दु हंकार बिराजे ।

अकारादि स्वर लिप्तकर्णिका अन्त सु छाजे ॥

वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर ।

अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर ॥

फुनि अन्त हों बेड्यो परम, सुर ध्यावत अरिनागको ।

हैं केहरिसम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित बिराजमान अत्र अवतर
अवतर संवौषद् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम
सन्निहितो भव भव वषद् सन्निधिकरणं ।

दोहा- सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग ।

सकल सिद्ध सो थाप हूँ, मिटैं उपद्रव योग ॥२॥

इति यन्त्र स्थापनं

अथाष्टकं, गीता छन्द

अति नम्रता तिहुँ योग में जिन भक्ति निर्मल भावहीं ।

यह गुप्त जल प्रत्यक्ष निर्मल सलिल तीरथ लावहीं ॥

यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं ।

द्वै अर्द्धशत षट् अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहिताय बिराजमान श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं जन्मजरा-
मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

अति वास विषयन वासनायुत मलय शील सु भावहीं ।
अरु चन्दनादि सुगन्ध द्रव्य मनोज्ञ प्राशुक लावहीं ॥ यह. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहिताय बिराजमान श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं संसारताप-
विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

परिणाम धवल सुवर्ण अक्षत मलिन मन न लगावहीं ।
तिस सार अक्षत अखय स्वच्छ सुवास पुञ्ज बनावहीं ॥ यह. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहिताय बिराजमान श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं अक्षयपद-
प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

मन पाग भक्त्यनुराग आनन्द तान माल पुरावहीं ।
तिस भाग कुसुम सुहाग अर सुर नागवास सु लावहीं ॥ यह. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहिताय बिराजमान श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं कामबाण-
विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

जिन भक्ति रस में तृप्तता मन आन स्वाद न चावहीं ।
अन्तर चरु बाहिज मनोहर रसिक नेवज लावहीं ॥ यह. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहिताय बिराजमान श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं क्षुधारोग-
विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

सरधान दीप प्रदीप्त अन्तर मोह तिमिर नशावहीं ।
मणिदीप जगमग ज्योति तेज सुभास भेंट धरावहीं ॥ यह. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहिताय बिराजमान श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं मोहान्धकार-
विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

आनन्द धर्म प्रभावना मन घटा धूम्र सु छावहीं ।
गन्धित दरव शुभ घ्राण प्रिय अति अग्नि संगजरावहीं । यह ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहिताय बिराजमान श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं अष्टकर्म-
दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

शुभ चिन्तवन फल विविध रस युत भक्ति तरु उपजावहीं ।
रसना लुभावन कल्पतरु के सुर असुर मन भावहीं ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहिताय बिराजमान श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं मोक्षफल-
प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

समकित विमल वसु अंग युत करि अर्घ अन्तर भावहीं ।
वसु दरव अर्घ बनाय उत्तम देहु हर्ष उपावहीं ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहिताय बिराजमान श्री
समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं अनर्घ्यपद-
प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

गीता छन्द

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्म प्रकृति नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुःख जन्म टाल अपार गुण सूक्ष्म सरूप अनूप हैं ।

मुखसों लार बहै अति भारी, हस्त पाद कम्पत दुःखकारी ।
प्रचला-प्रचला कर्म विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं प्रचलाप्रचलाकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१५॥

सोता हुआ करै सब काजा, प्रगटावै प्राकर्म समाजा ।
यह स्त्यानगृद्धि विधि नाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धिकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१६॥

जो पदार्थ हैं इन्द्रिय योग, ते सब वेदे जिय निज जोग ।
सोई नाम वेदनी होई, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोई ॥

ॐ ह्रीं वेदनीकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१७॥

रति के उदय भोग सुखकार, भोगै जिय शुभ विविध प्रकार ।
साता भेद वेदनी होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥

ॐ ह्रीं सातावेदनीकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१८॥

अरति उदय जिय इन्द्री द्वार, विषय भोग वेदे दुःखकार ।
एही भेद असाता होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥

ॐ ह्रीं असातावेदनीयकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९॥

ज्यों असावधानी मदपान, करत मोह विधितों सो जान ।
ता विधिकरि निज लाभ न होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥

ॐ ह्रीं मोहकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२०॥

जाके उदय तत्त्व परतीत, सत्य रूप नहीं हो विपरीत ।
पञ्च भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं मिथ्याकर्मविनाशकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२१॥

प्रथमोपशम समकित जब गले, मिथ्या समकित दोनों मिले ।
मिश्र भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्मिथ्यात्वकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२॥



दर्शन में कुछ मल उपजाय, करै सकल नहिं मूल नसाय ।

सम्यक् प्रकृति मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्वरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३॥

धर्म मार्ग में उपजे रोष, उदय भये मिथ्यात सदोष ।

यह अनन्त अनुबन्ध निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीक्रोधकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४॥

देव धर्म गुरुसों अभिमान, उदय भये मिथ्या सरधान ।

यह अनन्त अनुबन्ध निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीमानकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५॥

छलसों धर्म रीति दलमलै, उदय होय मिथ्या जब चलै ।

यह अनन्त अनुबन्ध निवार, प्रणमूं सिद्ध महासुखकार ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीमायाकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२६॥

लोभ उदय निर्मालय दर्व, भक्षे महानिन्द मति सर्व ।

यह अनन्त अनुबन्ध निवार, भये सिद्ध प्रणमूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीलोभकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२७॥

सुन्दरी छन्द

क्रोधकरिअणुव्रतनहिंलीजिये, चरितमोहप्रकृतिसुभनीजिए ।

है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणक्रोधकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२८॥

मान करि अणुव्रत न हो कदा, रहे अव्रत युत दर्शन सदा ।

है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमानरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२९॥



देशव्रती श्रावक नहीं होत है, वक्रता को जहँ उद्योत है ।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥३०॥

मोहलोभचरित जे जिय वसै, देशव्रत श्रावक नहीं तै लसै ।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥३१॥

अडिल्ल छन्द

प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरैं,
देशव्रती सो सकल व्रत नाही धरैं ।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥

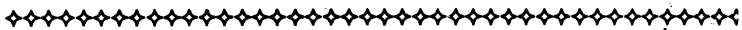
ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणक्रोधविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥३२॥

प्रत्याख्यानाभिमान महान न शक्ति है,
जास उदय पूरण संयम अव्यक्त है ।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमानरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥३३॥

प्रत्याख्यानो माया मुनि षडकों हतै,
श्रावक व्रत पूरण नहीं खण्डे जासतैं ।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमायारहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥३४॥



श्रावक पद में जास लोभ को वास है,
 प्रत्याख्यानी श्रुत में संज्ञा सात है ।
 चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
 नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणलोभरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥३५॥

भुजङ्गप्रयात छन्द

यथाख्यात चारित को नाशकारा,
 महाव्रत को जास में हो उजारा ।
 यही संज्वलन क्रोध सिद्धान्त गाया,
 नमूं सिद्ध के चरण ताको नसाया ॥

ॐ ह्रीं संज्वलनक्रोधरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥३६॥

रहै संज्वलन रूप उद्योत जेते,
 न हो सर्वथा शुद्धता भाव तेते ।
 यही संज्वलन मान सिद्धान्त गाया,
 नमूं सिद्ध के चरण ताको नसाया ॥

ॐ ह्रीं संज्वलनमानरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥३७॥

बहै संज्वलन की जहाँ मन्द धारा,
 लहै हैं तहाँ शुक्लध्यानी उभारा ।
 यही संज्वलन वक्र सिद्धान्त गाया,
 नमूं सिद्ध के चरण ताको नसाया ॥

ॐ ह्रीं संज्वलनमायारहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥३८॥

जहाँ संज्वलन लोभ है रञ्ज नहीं,
 निजानन्द को वास होवे तहाँ ही ।



यही संज्वलन लोभ सिद्धान्त गाया,

नमूं सिद्ध के चरण ताको नसाया ॥

ॐ ह्रीं संज्वलनलोभरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥३९॥

मोदक छन्द

जा करि हास्य भाव जत होतहिं, हास्य कियें पर की यह पातहिं ।

सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूं तुमको धरि हाथहिं ॥

ॐ ह्रीं हास्यकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४०॥

प्रीति करै परसों रति मानहिं, सो रति भेद विधी तिस जानहिं ।

सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूं तुमको धरि हाथहिं ॥

ॐ ह्रीं रतिकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४१॥

जो परसों परसन्न न हो मन, आरति रूप रहै निज आनन ।

सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूं तुमको धरि हाथहिं ॥

ॐ ह्रीं आरतिकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४२॥

जा करि पावत इष्ट वियोगहिं, खेदमई परिणाम सुशोगहिं ।

सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूं तुमको धरि हाथहिं ॥

ॐ ह्रीं शोककर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४३॥

हो उद्वेग उच्चाटन रूपहिं, मन तन कम्पित होत अरूपहिं ।

सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूं तुमको धरि हाथहिं ॥

ॐ ह्रीं भयकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४४॥

सवैया

जो पर को अपराध उधारत, जो अपनो कछु दोष न जाने ।

जो पर के गुण औगुण जानत, जो अपने गुण को प्रगटाने ॥

सो जिनराज बखान जुगुप्सित, है जियनो विधि के वश ऐसो ।
हे भगवन्त! नमूं तुमको तुम, जीति लियो छिन में अरि तैसो ॥

ॐ ह्रीं जुगुप्साकर्म्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४५॥

जो नर-नारि रमावन की, जिनसों अभिलाष धरै मनमाहीं ।
सो अति ही परकाश हिये नित, काम की दाह मिटै छिन माहीं ॥
सो जिनराज बखान नपुंसक, वेद हनो विधि के वश ऐसो ।
हे भगवन्त! नमूं तुमको तुम, जीति लियो छिन में अरि तैसो ॥

ॐ ह्रीं नपुंसकवेदरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४६॥

जो तिय संग रमें विधि यो मन, औरन से कछु आनन्द माने ।
किंचित् काम जगे उर में नित, शान्ति सुभावन की शुधि ठाने ॥
सो जिनराज बखानत हैं नर, वेद हनो विधि के वश ऐसो ।
हे भगवन्त! नमूं तुमको तुम, जीत लियो छिन में अरि तैसो ॥

ॐ ह्रीं पुरुषवेदरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४७॥

जो नर संग रमें सुख मानत, अन्तर गूढ न जानत कोई ।
हाव विलास हि लाज धरै मन, आतुरता करि तृप्त न होई ॥
सो जिनराज बखानत हैं तिय, वेद हनो विधि के वश ऐसो ।
हे भगवन्त! नमूं तुमको तुम, जीत लियो छिन में अरि तैसो ॥

ॐ ह्रीं स्त्रीवेदरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४८॥

वसन्ततिलका छन्द

आखु प्रमाण दृढ़ बन्धन और नाहीं,

गत्यानुसार स्थिति पूरण कर्ण नाहीं ।

सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
बन्दूं तुम्हैं तरण तारण जोर हाथा ॥

ॐ ह्रीं आयुकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४९॥

जो है कलेश अवधी सब होत जासो,
तैंतीस सागर रहै थिति नर्क तासो ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
बन्दूं तुम्हैं तरण तारण जोर हाथा ॥

ॐ ह्रीं नरकायुरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥५०॥

जासों करै त्रिजग की थिति आयु पूरी,
सोई कहो त्रिजग आयु महालघूरी ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
बन्दूं तुम्हैं तरण तारण जोर हाथा ॥

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चायुरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥५१॥

जेते नरायु विधि दे रस आप जाको,
ते-ते प्रजाय नर रूप भुगाय ताको ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
बन्दूं तुम्हैं तरण तारण जोर हाथा ॥

ॐ ह्रीं मनुष्यायुरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥५२॥

याही प्रकार जितने दिन देव देही,
नासै अकाल नहिं जे सुर आयु से ही ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
बन्दूं तुम्हैं तरण तारण जोर हाथा ॥

ॐ ह्रीं देवायुरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥५३॥



पद्मडि छन्द

जो करे जीव को बहु प्रकार, ज्यों चित्रकार चित्राम सार ।
सो नाम कर्म तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ॥

ॐ ह्रीं नामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥५४॥

जा उदय नारकी देह पाय, नाना दुःख भोगे नर्क जाय ।
सो नरकगति तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ॥

ॐ ह्रीं नरकगतिरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥५५॥

जासों उपजे तिर्यञ्च जीव, रहै ज्ञान हीन मलयुत सदीव ।
सो तिर्यञ्चगति तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ॥

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चगतिरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥५६॥

जा उदय भये मानुष्य होत, लहै नीच ऊँच ताको उद्योत ।
सो मानुष गति तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ॥

ॐ ह्रीं मनुष्यगतिरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥५७॥

चउ विधि सुरपद जासों लहाय, विषयातुर नित भोगे उपाय ।
सो देवगति तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ॥

ॐ ह्रीं देवगतिरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥५८॥

कामिनीमोहन छन्द

एकही भावसामान्यका पावना, जीवकी जातिका भेदसो गावना ।
होत जो थावरा एक इन्द्री कहो, पूजहुँ सिद्ध के चरण ताको दहो ॥

ॐ ह्रीं एकइन्द्रीजातिरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥५९॥

स्पर्शके साथमें जीभजो आमिलें, पायसों आपने-आप भूपर चलें
गामिनी कर्मसो दोय इन्द्री कहो, पूजहुँ सिद्ध के चरण ताको दहो ॥

ॐ ह्रीं दोइन्द्रीजातिरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥६०॥

नाक हो और दो आदि के जोड़ में, हो उदय चालना योग सों लोड़ में ।
गामिनी कर्म सो तीन इन्द्री कहो, पूजहुँ सिद्ध के चरण ताकी दहो ॥

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजातिरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥६१॥

आँख हो नाक हो जीभ हो स्पर्श हो, कान के शब्द का ज्ञान जामें न हो ।
गामिनी कर्म सो चार इन्द्री कहो, पूजहुँ सिद्ध के चरण ताको दहो ॥

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियजातिरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥६२॥

कान भी आ मिलै जीव जाजाति में, हो असंज्ञी सुसंज्ञी यह दो भाँति में ।
गामिनी कर्म सो पञ्च इन्द्री कहो, पूजहुँ सिद्ध के चरण ताको दहो ॥

ॐ ह्रीं पंचेन्द्रियजातिरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥६३॥

छन्द लावनी

हो उदार जो प्रगट उदारिक, नाम कर्म की प्रकृति भनी ।
लहै औदारिक देह जीव तिस, कर्म प्रकृति के उदय तनी ॥
भए अकाय अमूरति आनन्द, पुञ्च चिदात्म ज्योति घनी ।
नमूं तुम्हें कर जोर युगल तुम, सकल रोग थल काय हनी ॥

ॐ ह्रीं औदारिकशरीरविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥६४॥

निज शरीर को अणिमादिक करि, बहु प्रकार प्रणमाय वरै ।
वैक्रिय तन कहलावै है यह, देव नारकी मूल धरै ॥ भए ॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकशरीरविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥६५॥

धवल वर्ण शुभ योगी, संशय-हरण आहारक का पुतला ।
जो प्रमत्त गुणनाथक मुनि के, देह औदारिक सों निकला ॥ भए ॥

ॐ ह्रीं आहारकशरीररहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥६६॥

पुद्गलीक तन कर्म वर्गणा, कारमाण परदीप्त करण ।
तैजस नाम शरीर शास्त्र में, गावत हैं नहिं तेज वरण ॥ भए ॥

ॐ ह्रीं तैजसशरीररहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥६७॥

पूद्गलीक वरगणा जीवसों, एक क्षेत्र अवगाही हैं ।
नूतन कारणकरणमूलतन, कारमाणतिस नाम कहैं ॥ भए ॥

ॐ ह्रीं कर्माणशरीररहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥६८॥

इन्द्रवज्रा छन्द

जेते प्रदेश तन बीच आवैं, सारे मिलैं जोड़ न छिद्र पावैं ।
संघातनामा जिस देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो ॥

ॐ ह्रीं औदारिकसंघातरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥६९॥

वैक्रिय के जोड़ जो होत नाहीं, संघातनामा जिन बैन माहीं ।
संघातनामा जिस देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो ॥

ॐ ह्रीं वैक्रियकसंघातरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥७०॥

ऐसे प्रकारा तन में अहारा, संघी मिलाया करचेत सारा ।
संघातनामा जिस देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो ॥

ॐ ह्रीं आहारकसंघातरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥७१॥

तेजस के अंग उपंग सारे, संघी मिलाया तिस मांहि धारे ।
संघातनामा जिस देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो ॥

ॐ ह्रीं तैजससंघातरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥७२॥

ज्ञानादि आवर्ण जो कर्म काया, ताको मिलाया श्रुत मांहि गाया ।
संघातनामा जिस देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो ॥

ॐ ह्रीं कार्माणसंघातरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥७३॥

चौबोला छन्द

पूद्गलीक वर्गणा जोग तैं, जब जित करत आहारा ।
प्रणवावे तिनको एकत्र करि, बन्ध उदय अनुसारा ॥

यही औदारिक बन्धन तुमने, छेद किये निरधारा ।
भए अबन्ध अकाय अनुपम, जजूं भक्ति उर धारा ॥

ॐ ह्रीं औदारिकबन्धनरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥७४॥

वैक्रियिक तनु परमाणु मिल, परस्पर अनिवारा ।
हो स्कन्ध रूप पर्यायी, यह बन्धन परकारा ॥
वैक्रियिक तनु बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा ।
भए अबन्ध अकाय अनुपम, जजूं भक्ति उर धारा ॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकबन्धनछेदकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥७५॥

मुनि शरीरसों वाहिज निसरे, संशय नाशन हारा ।
ताके मिले प्रदेश परस्पर, हो सम्बन्ध अवारा ॥
यही आहारक बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा ।
भए अबन्ध अकाय अनुपम, जजूं भक्ति उर धारा ॥

ॐ ह्रीं आहारकबन्धनछेदकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥७६॥

दीप्त जोति जो कारमाण की, रहै निरन्तर लारा ।
जहाँ-तहाँ नहिं बिखरैं कन ज्यों, बहै एक ही धारा ॥
तैजस नामा बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा ।
भए अबन्ध अकाय अनुपम, जजूं भक्ति उर धारा ॥

ॐ ह्रीं तैजसबन्धनरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥७७॥

द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादिक, पुद्गल जातीय सारा ।
एक क्षेत्र अवगाही जिय को, दुविधि भाव करतारा ॥
कारमाण यह बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा ॥
भए अबन्ध अकाय अनुपम, जजूं भक्ति उर धारा ॥

ॐ ह्रीं कार्माणबन्धनरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥७८॥

छन्द रोला

तन अकृति संस्थान आदि, समचतुरस्र बखानो ।
 ऊपर तले समान, यथाविधि सुन्दर जानो ॥
 यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद ।
 बीजभूत कल्याण नमूं, भव्यनि प्रति सुखप्रद ॥

ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थानविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥७९॥

ऊपर से हो थूल तले हो, न्यून देह जिस ।
 परिमण्डलनिग्रोध नाम, वरणो सिद्धान्त तिस ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥८०॥

नीचे से हो थूल न्यून होवे उपराहीं ।
 बंमड़ सम वाल्मीकि देह जिन आज्ञा माहीं ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं वाल्मीकसंस्थानरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥८१॥

जो कूबड़ आकार रूप पावे तन प्राणी ।
 कुब्ज नाम संस्थान ताहि वरणों जिनवाणी ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं कुब्जकनामसंस्थानरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥८२॥

लघुसों ठिगना रूप एम तन होवे जाको ।
 वामन है परसिद्ध लोक में कहिवे ताको ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं वामनसंस्थानरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥८३॥

जिततित बहु आकार कहीं नहिं हो यक सारूं ।
 हुंडक अति असुहावन पाप फल प्रगट उधारूं ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं हुण्डकसंस्थानरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥८४॥



लक्ष्मीधरा छन्द

जीव आप भावसों जुकर्म की क्रिया करेत,
अंग वा उपंगसो शरीर के उदय समेत ।

सो औदारिकी शरीर अंग वा उपंगनाश,
सिद्धरूप हो नमो सुपाईयो अबाधवास ॥

ॐ ह्रीं औदारिकअङ्गोपाङ्गसहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥८५॥
देव नारकी शरीर माँस रक्त से न होत,
तासको अनेक भाँति आप दे सकै उद्योत ।

वैक्रियिक सो शरीर अंग वा उपंगनाश,
सिद्धरूप हो नमो सु पाईयो अबाधवास ॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकअङ्गोपाङ्गाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥८६॥
साधु के शरीर मूलतें कढ़े प्रशंस योग,
संशय को विध्यंसवार केवलो सुलेत भोग ।

आहार कसो शरीर अंग वा उपंगनाश,
सिद्धरूप हो नमो सु पाईयो अबाधवास ॥

ॐ ह्रीं आहारकअङ्गोपाङ्गरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥८७॥

गीता छन्द

संहनन बन्धन हाड होय अभेद वज्र सो नाम है,
नाराच कीली वृषभ डोरी बाँधने की ठाम है ।
है आदि को संहनन जो जिस वज्र सब परकार हो,
यह त्याग बन्धन अबन्ध निवसो परम आनन्द धार हो ॥

ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराचसंहननरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥८८॥

ज्यों वज्र की कीली ठुकी हो हाड सन्धी में जहाँ,
 सामान वृषभ जु जेवरी ताकरि बँधाई हो तहाँ ।
 है दूसरा संहनन यह नाराच वज्र प्रकार हो ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं वज्रनाराचसंहननरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥८९॥
 नहिं वज्र का हो वृषभ अरु नाराच भी नहीं वज्र हो,
 सामान कीली करि ठुकी सब हाड वज्र समान हो ।
 है तीसरा संहनन जो नाराच ही परकार हो ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं नाराचसंहननरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥९०॥
 हो जडित छोटी कीलिका, सो सन्धि हाडों की जबै,
 कछु ना विशेषण वज्र के, सामान्य हो होवे सबै ।
 है चौथवाँ संहनन जो, नाराच अर्द्ध परकार हो ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं अर्द्धनाराचसंहननरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥९१॥
 जो परस्पर जडित होवे, सन्धि हाडन की जहाँ,
 नहीं कीलिका सो ठुकी होवे, साल सन्धी के तहाँ ।
 है पाँचवाँ संहनन कीलक, नाम यह परकार हो ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं कीलिकसंहननरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥९२॥
 कछु छिद्र कछुक मिलाप होंवे, सन्धि हाडोंमय सही,
 केवल नसासों होय बेढ़ी, माससों लतपत रही ।
 अन्तिम स्फटिक संहनन, यह हीन शक्ति असार हो ॥ यह ॥

ॐ ह्रीं असंप्राप्तासृपाटिकासंहननरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥९३॥
 दोहा- वर्ण विशेष न स्वेत है, नामकर्म तन धार ।
 स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं श्वेतनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥९४॥



वर्ण विशेष न पीत है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं पीतनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥९५॥

वर्ण विशेष न रक्त है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं रक्तनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥९६॥

वर्ण विशेष न हरित है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं हरितनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥९७॥

वर्ण विशेष न कृष्ण है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं कृष्णनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥९८॥

गन्ध विशेष न शुभ कहो, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं सुगन्धनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥९९॥

गन्ध विशेष न अशुभ है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं दुर्गन्धनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१००॥

स्वाद विशेष न तिक्त है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं तित्तरसरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१०१॥

स्वाद विशेष न कटुक है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं कटुकरसरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१०२॥

स्वाद विशेष न आम्ल है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं आम्लरसरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१०३॥

स्वाद विशेष न मधुर है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं मधुररसरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१०४॥

स्वाद विशेष न कषाय है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं कषायरसरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१०५॥

फर्स विशेष न कर्म है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं मृदुत्वस्पर्शरसरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१०६॥

फर्स विशेष न कठिन है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं कठिनस्पर्शरसरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१०७॥

फर्स विशेष न भार है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं गुरुस्पर्शरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१०८॥

फर्स विशेष न अगुर है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं लघुस्पर्शरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१०९॥

फर्स विशेष न शीत है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं शीतस्पर्शरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥११०॥



फर्स विशेष न उष्ण है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज दार॥

ॐ ह्रीं उष्णस्पर्शरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१११॥

फर्स विशेष न चिकण है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं स्निग्धस्पर्शरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥११२॥

फर्स विशेष न रुक्ष है, नामकर्म तन धार।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार॥

ॐ ह्रीं रुक्षस्पर्शरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥११३॥

छन्द मरहटा

हो जो प्रजास वर पणइन्द्रीधर जाय नर्क निरधार,
विग्रहसों चाल में अन्तराल में धरै पूर्व आकार।
सो नर्क नामकरि गावत सणधर आनुपूर्वी सार,
तुम ताहि नशायो शिखगति पायो नमत लहूँ भवपार॥

ॐ ह्रीं नरकगत्यानुपूर्वीछेदकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥११४॥

निज काय छाँड करि अन्त समय मरि होय पशु अवतार ।
विग्रहसों चाल में अन्तराल में धरैं पूर्व आकार ॥ सो तिर्यच.

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥११५॥

हो मिश्र प्रणामी वा शिवगामी वरै मनुष्यगति सार ।
विग्रहसों चाल में अन्तराल में धरै पूर्व आकार ॥ सो मनुष्य.

ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥११६॥

समकितसों वा कलेश करि धरहि देवगति चार ।
विग्रहसों चाल में अन्तराल में धौं पर्व आकार ॥ सो देव.

ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥११७॥



छन्द त्रोटक

तनभार भए निज घात ठने, तिसकी कछु विधि ऐसी जु बने ।
अपघात सु कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं अपघातकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥११८॥

विष आदि अनेक उपाधि धरै, पर प्राणनि को निर्मूल करै ।
परघाति सु कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं परघातकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥११९॥

अति तेजमई परदीप्त महा, रवि बिम्ब विषैं जिय भूमि लहा ।
यह आतप कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं अतितेजमयीआतापनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१२०॥

परकासमई जिम बिम्ब शशी, पृथिवी जिय पावत देह इसी ।
द्युति नाम सुकर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं उद्योतनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१२१॥

तन की थिति कारण श्वास गहै, स्वर अन्तर बाहर भेद वहै ।
यह श्वास सुकर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं श्वासकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१२२॥

शुभ चाल चलैं अपनी जिसतें, शशि ज्यों नभ सोहत हैं तिसतें ।
नभ में गति कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं विहायोगतिनामकर्मविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१२३॥

इक इन्द्रिय जात विरोध मई, चतुरान्ति सुभावक प्राप्त भई ।
त्रस नाम सु कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं त्रसनामकर्मविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१२४॥

इक इन्द्री जातहि पावत हैं, अरु शेष न ताहि धरावत हैं ।
यह थावर कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं थावरनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१२५॥

पर में परवेश न आप करैं, पर को निज में नहिं थाप धरैं ।
यह बादर कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं बादरनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१२६॥

जलसों दवसों नहीं आप मरै, सब ठौर रहै पर की न हरै ।
यह सूक्ष्म कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१२७॥

जिसतें परिपूरणता करि है, निज शक्ति समान उदय धरि है ।
पर्याप्त सु कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं पर्याप्तकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१२८॥

परिपूरणता नहिं धार सके, यह होत सभी साधारण के ।
अपर्याप्ति कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं अपर्याप्तकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१२९॥

जिम लोह न भार धरै तन में, जम आकन फूल उड़े वन में ।
अगुरु लघु कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१३०॥

इक देह विषैं इक जीव रहै, इकलो जिसको सब भोग लहै ।
परतेक सु कर्म सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं प्रत्येकनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१३१॥

इक देह विषैं बहु जीव रहैं, इक साथ सभी तिस भोग लहैं ।
इह भेद निगोद सिद्धान्त भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ॥

ॐ ह्रीं साधारणनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१३२॥



उपेन्द्रवज्रा छन्द

चले न जो धातु तज न वासा, यथाविधि आप धरें निवासा ।
यही प्रकारा थिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥

ॐ ह्रीं स्थिरनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१३३॥

अनेक थानं मुख गौण घातं, चलन्ति धारं निजवास घातं ।
यही प्रकारा थिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥

ॐ ह्रीं अस्थिरनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१३४॥

यथाविधी देह विशाल सोहै, मुखारविन्दादिक सर्व मोहै ।
यही प्रकारा शुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥

ॐ ह्रीं शुभनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१३५॥

असुन्दराकार शरीर माहीं, लखों जहासों विडरूप ताहीं ।
यही प्रकारा अशुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥

ॐ ह्रीं अशुभनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१३६॥

अनेक लोकोत्तम भावधारी, करैं सभी तापर प्रीति भारी ।
यही सुभगता को भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥

ॐ ह्रीं सुभगनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१३७॥

धरें अनेका गुणती न जासों, करैं कभी प्रीति न कोइ तासों ।
दुर्भाग ताको, यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥

ॐ ह्रीं दुर्भगनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१३८॥

पद्मडि छन्द

ध्वनिबीन भाँति ज्यों मधुरवैर, निसरै पिक आदिक सुरस दैन ।
यह सुस्वर नाम प्रकृति कहाय, तुम हनों नमूं जिन शीस लाय ॥

ॐ ह्रीं सुस्वरनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१३९॥

गर्दभ स्वर जैसो कहो भास, तैसोरव अशुभ कहो सु भास ।
यह सुस्वर नाम प्रकृति कहाय, तुम हनों नमूं निज शीस लाय ॥

ॐ ह्रीं दुस्वरनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१४०॥

अडिल छन्द

होत प्रभा मई कान्ति महारमणीक जू,
जग जनमन भावन माने यह ठीक जू ।
यह आदेय सु प्रकृति नाश निजपद लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो ॥

ॐ ह्रीं आदेयनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१४१॥

रूखो मुख को वरण लेश नहिं कान्ति को,
रूखे केश नखाकृति तन बढ भाँति को ।
अनादेय यह प्रकृति नाश निजपद लहो ॥ ध्यावत हैं ॥

ॐ ह्रीं अनादेयनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१४२॥

होत गुप्त गुण तौ भी जग में विस्तरें,
जगजन सुजस उचारत ताकी थुति करें ।
यह जस प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो ॥ ध्यावत हैं ॥

ॐ ह्रीं यशःप्रकृतिछेदकायरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१४३॥

जासु गुणन को औगुण कर सबही ग्रहें,
करत काज परशंसित पण निन्दित कहें ।
अपयश प्रकृति विनाश सुभावी पद लहो ॥ ध्यावत हैं ॥

ॐ ह्रीं अपयशःनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१४४॥

यो धान नेत्रादिक ज्यों के त्यों बनें,
रचित चतुर कारीगर करते हैं तनें ।
यह निर्माण विनाश सुभावी पद लहो ॥ ध्यावत हैं ॥

ॐ ह्रीं निर्माणनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१४५॥

पञ्चकल्याणक चौतिस अतिशय राज ही,
प्रातिहार्य अठ समोशरण द्युति छाज ही।
तीर्थङ्कर विधि विभव नाश निज पद लहो ॥ ध्यावत हैं ॥

ॐ ह्रीं तीर्थङ्करप्रकृतिरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१४६॥

चाल छन्द

जो कुम्भकार की नाई, छिन घट छिन करत सुराई।
सो गोत्र कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं गोत्रकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१४७॥

लोकनि में पूज्य प्रधाना, सब करत विनय सनमाना।
यह ऊँच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं ऊँचगोत्रकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१४८॥

जिसको सब कहत कमीना, आचरण धरे अति हीना।
यह नीच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं नीचगोत्रकर्मविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१४९॥

ज्यों दे न सके भण्डारी, परधन की हो रखवारी।
यह अन्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं अन्तरायकर्मविमुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१५०॥

दो दान देन को भावा, दे सके न कोटि उपावा।
दानान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं दानान्तरायरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१५१॥

मनो दान लेन के भावे, दातार प्रसंग न पावै।
लाभान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं लाभान्तरायकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१५२॥

पुष्पादिक चाहै भोगा, पर पाये न अवसर योगा ।
भोगान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं भोगान्तरायकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१५३॥

तिय आदिक बारम्बारा, नहीं भोग सके हितकारा ।
उपभोगान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं उपभोगान्तरायकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१५४॥

चेतन निज बल प्रगटावे, यह योग कभू नहीं पावे ।
वीर्यान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं वीर्यान्तरायकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१५५॥

ज्ञानावरणादिक नामी, निज भाग उदय परिणामी ।
अठ भेद कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१५६॥

इकसो अड़ताल प्रकारी, उत्तर विधि सत्ता धारी ।
सब प्रकृति कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं एकशताष्टचत्वारिंशत्परहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१५७॥

परिणाम भेद संख्याता, जो वचन योग में आता ।
संख्यात कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

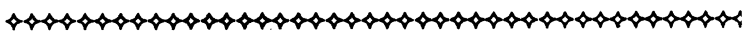
ॐ ह्रीं संख्यातकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१५८॥

है वचननसों अधिकाई, परिणाम भेद दुःखदाई ।
विधि असंख्यात परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं असंख्यातकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१५९॥

अविभाग प्रछेद अनन्ता, जो केवलज्ञान लहन्ता ।
यह कर्म अनन्त परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१६०॥



सब भाग अनन्तानन्ता, यह सूक्ष्म भाव धारन्ता ।
विधि नन्तानन्त परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानन्तकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१६१॥

मोतियादाम छन्द

न हो परिणाम विषै कछु खेद, सदा इकसा प्रणवै बिन भेद ।
निजाश्रित भावरमै सुखधाम, करूँतिस आनन्द को परिणाम ॥

ॐ ह्रीं आनन्दस्वभावायरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१६२॥

धरैँ जितने परिणाम भेद, विशेषन ते सब ही बिन खेद ।
पराश्रितता बिन आनन्द धर्म, नमूं तिन पाय लहूँ पद शर्म ॥

ॐ ह्रीं आनन्दधर्मात्मकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१६३॥

न हो परयोग निमित्त विभाव, सदा निवसें निज आनन्द भाव ।
यही वरणे परमानन्द धर्म, नमूं तिन पाय लहूँ पद शर्म ॥

ॐ ह्रीं परमानन्दधर्मात्मकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१६४॥

कभूं परसों कछु द्वेष न होत, कभूं फुनि हर्ष विशेष न होत ।
रहैँ नित हो निज भावन लीन, नमूं पद साम्य सुभाव सुलीन ॥

ॐ ह्रीं साम्यस्वभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१६५॥

निजाकृति में नहीं लेश कषाय, अमूरति शान्तिमयी सुखदाय ।
अनाकुलता बिन साम्य स्वरूप, नमूं तिनको नित आनन्द रूप ॥

ॐ ह्रीं साम्यस्वरूपाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१६६॥

अनन्त गुणात्म द्रव्य पर्याय, यही विधि आप धरैँ बहु भाय ।
सभी कुमतिकरि हो अलखाय, नमूं जिनबैन भली विधि गाय ॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणात्मकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१६७॥

अनन्त गुणातम रूप कहाय, गुणी गुण भेद सदा प्रणमाय ।
महागुण स्वच्छमयी तुम रूप, नमूं तिनको पद पाइ अनूप ॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणस्वरूपाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१६८॥

अभेद सुभेद अनेक सु एक, धरो इन आनिक धर्म अनेक ।
विरोधितभावनसों अविबुद्ध, नमूं जिन आगमकी विधि शुद्ध ॥

ॐ ह्रीं अनन्तधर्मात्मकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१६९॥

रहैं धर्मी नित धर्म सरूप, न हो परदेशनसों अणुरूप ।
चिदातम धर्म सभी निजरूप, धरों प्रणमूं मन भक्ति स्वरूप ॥

ॐ ह्रीं अनन्तधर्मस्वरूपाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१७०॥

चौपाई

हीनाधिक नहीं भाव विशेष, आतमीक आनन्द हमेश ।
सम स्वभाव सोई सुखराज, प्रणमूं सिद्ध मिटैं भववास ॥

ॐ ह्रीं समस्वभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१७१॥

इष्टानिष्ट मिटो भ्रम जाल, पायो निज आनन्द विशाल ।
साम्य सुधारस को नित भोग, नमूं सिद्ध सन्तुष्ट मनोग ॥

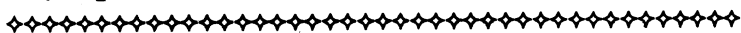
ॐ ह्रीं सन्तुष्टाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१७२॥

पर पदार्थ की इच्छुक नाहि, सदा सुखी स्वातम पदमाहि ।
मेटो सकल राग अरु दोष, प्रणमूं राजत सम सन्तोष ॥

ॐ ह्रीं समसन्तोषाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१७३॥

मोह उदय सब भाव नसाय, मेटो पुद्गलीक पर्याय ।
शुद्ध निरञ्जन समगुण लहों, नमूं सिद्ध परकृत दुःख दहों ॥

ॐ ह्रीं साम्यगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१७४॥



निजपदसों थिरता नहीं तजैं, स्वानुभूत अनुभव नित भजैं ।
निराबाध तिष्ठैं अविकार, साम्य स्थायी गुण भण्डार ॥

ॐ ह्रीं साम्यस्थाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१७५॥

भव सम्बन्धी काज निवार, अचल रूप तिष्ठैं समधार ।
कृत्याकृत्य साम्य गुण पाइयो, भक्ति सहित हम सिर नाइयो ॥

ॐ ह्रीं अनन्यशरणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१७६॥

छन्द झूलना

भूल नहीं भय करें क्षोभ नाही धरैं,
गैर की आस की त्रास नाही धरैं ।
शरण काकी चाहैं सबन को शरण हैं,
अन्य की शरण बिन नमूं ताही वरैं ॥

ॐ ह्रीं अनन्यशरणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१७७॥

द्रव्य षट् में नहीं आप गुण आप ही,
आप में राजते सहज नीको सही ।
स्वगुण अस्तित्वता वस्तु की वस्तुता,
धरत हो मैं नमूं आप ही को स्वता ॥

ॐ ह्रीं अनन्यगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१७८॥

गैर से गैर हो आप में रमाइयो,
स्वचतुष्टय खेत में वास तिन पाइयो ।
धर्म समुदाय हो परमपद पाइयो,
मैं तुम्हें भक्तियुत शीश निज नाइयो ॥

ॐ ह्रीं अनन्यधर्माय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१७९॥

अन्य रूप सों अन्य रहैं सदा, पर निमित्त विभा न हो कदा ।
कहत हैं मुनि शुद्ध सुभावजी, नमूं सिद्ध सदा तिन पायजी ॥
ॐ ह्रीं शुद्धस्वभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१८४॥
परपरिणामनसों नहिं मिलत हैं, निजपरिणामनसों नहिं चलत हैं ।
शुद्ध परिणामी तुम पद नमूं, नमत तुम पद सब अघ को दमूं ॥
ॐ ह्रीं शुद्धपरिणामकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्य ॥१८५॥



वस्तुता व्यवहार नहीं ग्रहें, उपस्वरूप असत्यारथ कहें ।
शुद्ध स्वरूप न ताकरि साध्य हैं, निर्विकल्प समाधि आराध्य हैं ॥

ॐ ह्रीं अशुद्धरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१८६॥

द्रव्य पर्यायार्थिक नय दोऊ, स्वानुभवमें विकल्प नहीं कोऊ ।
सिद्ध शुद्धाशुद्ध अतीत हो, नमत तुम तिनपद परतीत हो ॥

ॐ ह्रीं शुद्धाशुद्धरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१८७॥

चौपाई

क्षय उपशम अवलोकन टारो, निज गुण क्षायक रूप उघारो ।
युगपत सकल चराचर देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृगानन्दस्वभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१८८॥

जब पूरण अवलोकन पायो, तब पूरण आनन्द उपायो ।
अविनाभाव स्वयं पद देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृगानन्दस्वभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१८९॥

नाश सु पूर्वक हो उतपादा, सत लक्षण परिणति मरजादा ।
क्षय उपशम तन क्षायक पेखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृगुत्पादकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९०॥

नित्य रूप निज चित पद मांही, अन्य रूप पलटन हो नाहीं ।
द्रव्य-दृष्टि में यह गुण देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तध्रुवाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९१॥

कर्म नाश जो स्वापद पावै, रञ्ज मात्र फिर अन्त न आवै ।
यह अव्यय गुण तुममें देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा ॥

ॐ ह्रीं अव्ययभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९२॥

पर नहीं व्यापै तुमपद मांही, पर में रमण भाव तुम नाहीं ।
निज करि निजमें निज लय देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तनिलयाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९३॥

शंखनारी छन्द

अनन्ताभिधानो, गुणकार जानो, धरो आपसोई, नमूं मान खोई ॥

ॐ ह्रीं अनन्ताकाराय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९४॥

अनन्तास्वभावा, विशेषन उपावा, धरो आपसोई, नमूं मान खोई ॥

ॐ ह्रीं अनन्तस्वभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९५॥

बिनाकाररूपा, चिन्मयस्वरूपा, धरो आपसोई, नमूं मान खोई ॥

ॐ ह्रीं चिन्मयस्वरूपाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९६॥

सदा चेतना में, न हो अन्यता में, धरो आपसोई, नमूं मान खोई ॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपस्वरूपाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९७॥

दोहा

जो कछु भाव विशेष हैं, सब चिद्रूपी धर्म ।

असाधारण पूरण भये, नमत नशें सब कर्म ॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९८॥

परकृति व्याधि विनाश के, निज अनुभव की प्राप्त ।

भई, नमूं तिनको, लहूँ यह जगवास समाप्त ॥

ॐ ह्रीं स्वानुभवोफलब्धिरमाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥१९९॥

निरावरण निज ज्ञान करि, निज अनुभव की डोर ।

गहो लहो थिरता रहो, रमण ठौर नहीं और ॥

ॐ ह्रीं स्वानुभूतिरताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२००॥



सरवोत्तम लौकिक रस, सुधा कुरस सब त्याग।

निज पद परमामृत रसिक, नमूं चरण बड़भाग॥

ॐ ह्रीं परमामृतरताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं॥२०१॥

विषयामृत विषसम अरुचि, अरस अशुभ असुहान।

जान निजानन्द परमसम, तुष्ट सिद्ध भगवान॥

ॐ ह्रीं परमामृततुष्टाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं॥२०२॥

शङ्कातीत अतीतसो, धरें प्रीति निज मांहि।

अमल हिये सन्तनि प्रिये, परम प्रीति नमूं ताहि॥

ॐ ह्रीं परमप्रीताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं॥२०३॥

अक्षय आनन्द भाव युत, निज हितकार मनोग।

सज्जन चित वल्लभ परन, दुर्जन दुर्लभ योग॥

ॐ ह्रीं परमवल्लभयोगाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं॥२०४॥

शब्द गन्धरसफरस नहिं, नहीं वरण आकार।

बुद्धि गहै नहिं पार तुम, गुप्त भाव निरधार॥

ॐ ह्रीं अव्यक्तभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं॥२०५॥

सर्व दर्वसों भिन्न हैं, नहिं अभिन्न तिहुं काल।

नमूं सदा परकाश धर, एकहिं रूप विशाल॥

ॐ ह्रीं एकत्वस्वरूपाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं॥२०६॥

सर्व दर्वतें भिन्नता, जिन गुण निज में वास।

नमूं अखण्ड परमात्मा, सदा सुगुण की राश॥

ॐ ह्रीं एकत्वगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं॥२०७॥

सर्व दर्व परिणामसों, मिलैं न निज परिणाम।

नमूं निजानन्द ज्योति धन, नित्य उदय अभिराम॥

ॐ ह्रीं एकत्वभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं॥२०८॥



चौपाई

पर संयोग तथा समवाय, यह सम्बाद न हो द्वै भाय ।

नित्य अभेद एकता धरो, प्रणमूं द्वैत भाव हम हरो ॥

ॐ ह्रीं द्वैतभावविनाशकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२०९॥

पूर्व पर्याय नासियो सोई, जाको फिर उत्पात न होई।

अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं शाश्वताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२१०॥

निर्विकार निर्मल निजभाव, नित्य प्रकाश अमन्द प्रभाव।

अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं शाश्वतप्रकाशाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२११॥

निरावरण रवि बिम्ब समान, नित्य उद्योत धरो निज ज्ञान ।

अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं शाश्वतोद्योताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२१२॥

ज्ञानानन्द सुधारक चन्द्र, सोहत पूरण ज्योति अमन्द।

अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं शाश्वतामृतचन्द्राय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२१३॥

ज्ञानानन्द सुधारस धार, निरविच्छेद अभेद अपार।

अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं शाश्वतअमृतमूर्तये सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२१४॥

पद्धती छन्द

मन इन्द्रिय ज्ञान न पाय जेह, है सूक्ष्म नाम सरूप तेह ।

मनःपर्यय जाकं नहिं पाय, परम सूक्ष्म-सा सुगुण नमाय ॥

ॐ ह्रीं परमसूक्ष्माय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२१५॥

बहु रास नभोदर में समाय, प्रत्यक्ष स्थूल ताकों न पाय ।
इकसों इककों बाधा न होहि, सूक्ष्म अविनाशी नमों सोहि ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मावकाशाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२१६॥

नभगुणध्वनिहोयहजोगनाहिं, होजिसोगुणीगणतिसोताहि ।
सो राजत हो सूक्ष्म स्वरूप, नमहूँ तुम सूक्ष्म गुण अनूप ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२१७॥

तुम त्याग द्वैतता को प्रसंग, पायौ एकाकी छवि अभंग ।
जाको कबहूँ अनुभव न होय, नमूं परम रूप है गुप्त सोय ॥

ॐ ह्रीं परमरूपगुप्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२१८॥

छन्द त्रोटक

सर्वार्थ विमानिक देव तथा, मन इन्द्रिय भोगन शक्ति यथा ।
इनके सुख की इक सीम सही, तुम आनन्द को पर अन्त नहीं ॥

ॐ ह्रीं निरवधिसुखाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२१९॥

जगजीवनिको नहिं भाग्ययहै, निजशक्ति उदयकरिव्यक्तिलहै ।
तुम पूरण क्षायक भाव लहो, इम अन्त बिना गुणरास गहो ॥

ॐ ह्रीं निरवधिगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२०॥

भवि-जीव सदा यह रीत धरें, नित नूतन पर्य विभाव धरें ।
तिस कारणको सब व्याधि दहो, तुम पाय सुरूप जु अन्त नहो ॥

ॐ ह्रीं निरवधिगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२१॥

अवधि मनःपर्यय सु ज्ञान महा, द्रव्यादि विषैं मरजाद लहा ।
तुम ताहि उलंघ सुभावमई, निजबोध लहो जिस अन्त नहीं ॥

ॐ ह्रीं अतुलज्ञानाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२२॥

ॐ ह्रीं अतुलसुखाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२३॥

सर्व जीव राश के सुभाव आप जान हो,
आप के सुभाव अंश और कौन ज्ञान हो।

सो विशुद्ध भाव पाय जासकौ न अन्त हो,
राज हो सदीव देव चरण दास सन्त हो ॥

ॐ ह्रीं अतुलभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२४॥

आप की गुणौघ वेलि फैलि है अलोकलों।

शेष से भ्रमाय पत्र की न पाय नोकलों ॥ सो विशुद्ध ॥

ॐ ह्रीं अतुलगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२५॥

सूर्य को प्रकाश एक देश वस्तु भास ही।

आप को सुज्ञान भान सर्वथा प्रकाश ही ॥ सो विशुद्ध ॥

ॐ ह्रीं अतुलप्रकाशाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२६॥

तास रूप को गहो न फेरि जास नाश हो।

स्वात्मवास में विलास आस त्रास नाश हो ॥ सो विशुद्ध. ॥

ॐ ह्रीं आत्मवासजिनाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२७॥

सोरठा

मोहादिक रिपु जीति, निजगुण निधि सहजें लहो।

विलसो सदा पुनीति, अचल रूप बन्दों सदा ॥

ॐ ह्रीं अचलगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२८॥



उत्तम क्षायक भाव, क्षय उपशम सब गड़ विनशि।

पायो सहज सुभाव, अचल रूप बन्दों सदा ॥

ॐ ह्रीं अचलस्वभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२२९॥

अथिर रूप संसार, त्याग सुथिर निज रूप गहि।

रहो सदा अविकार, अचल रूप बन्दों सदा ॥

ॐ ह्रीं अचलस्वरूपाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३०॥

मोतियादाम छन्द

निराश्रित स्वाश्रित आनन्द धाम, परैं परसों न परै कछु काम।

अबिन्दु अबन्धु अबन्ध अमन्द, करूँ पद गन्द रहूँ सुखवृन्द ॥

ॐ ह्रीं निरालम्बाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३१॥

अरोग अदोष अशोक अभोग, अनिष्ट संयोग न इष्ट वियोग।

अबिन्दु अबन्धु अबन्ध अमन्द, करूँ पद गन्द रहूँ सुखवृन्द ॥

ॐ ह्रीं आम्लबरहिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३२॥

अजीव न जीव न धर्म अधर्म, न काल अकाश लहैं तिस धर्म।

अबिन्दु अबन्धु अबन्ध अमन्द, करूँ पद गन्द रहूँ सुखवृन्द ॥

ॐ ह्रीं निर्लेपाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३३॥

अवर्ण अकर्व अरूप अकाय, अयोग असंयमता अकषाय।

अबिन्दु अबन्धु अबन्ध अमन्द, करूँ पद गन्द रहूँ सुखवृन्द ॥

ॐ ह्रीं निष्कषायाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३४॥

न हो परसों रूप राग विभाव, निजातम में लवलीन स्वभाव।

अबिन्दु अबन्धु अबन्ध अमन्द, करूँ पद गन्द रहूँ सुखवृन्द ॥

ॐ ह्रीं आत्मरतये सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३५॥



दोहा

निज स्वरूप में लीनता, ज्यों जल पुतली वार।

गुप्त स्वरूप नमूं सदा, लहूं भवार्णव पार ॥

ॐ ह्रीं स्वरूपगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३६॥

जोहै सोहै और नहिं, कछु निश्चय व्यवहार।

शुद्ध द्रव्य परमात्मा, नमूं शुद्धता धार ॥

ॐ ह्रीं शुद्धद्रव्याय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३७॥

पूर्वोत्तर सन्तति तनी, भव भव छेद कराय।

असंसार पद को नमूं, यह भव वास नशाय ॥

ॐ ह्रीं असंसाराय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३८॥

अर्द्धनाराच छन्द

हरो सहाय कर्ण को, सु भोगता विवर्ण को।

निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही ॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२३९॥

न हो विभावता कदा, स्वभाव में सुखी सदा ॥

निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही ॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४०॥

अछेद रूप सर्वथा, उपाधि की नहीं व्यथा।

निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही ॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दस्वरूपाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४१॥

दुभेदता न वेद ही, सचेतना अभेद ही।

निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही ॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४२॥



न अन्य की प्रवाह है, अचाह है न चाह है।

निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दसन्तोषाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४३॥

सोरठा

रागादिक परिणाम, हैं कारण संसार के।

नाश लियो सुखधाम, नमत सदा भव भय हरण॥

ॐ ह्रीं शुद्धभावपर्यायाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४४॥

उदड़क भाव विनाश, प्रगट कियो निज धर्म को।

स्वातम गुण परकाश, नमत सदा भव भय हरण॥

ॐ ह्रीं स्वतन्त्रधर्माय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४५॥

निजगुण पर्याय रूप, स्वयं-सिद्ध परमातमा।

राजत हैं शिव भूप, नमत सदा भव भय हरण॥

ॐ ह्रीं आत्मस्वभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४६॥

विमल विशद निज ज्ञान, हैं स्वभाव परिणतिमई।

राजें हैं सुखखानि, नमत सदा भव भय हरण॥

ॐ ह्रीं परमचित्परिणामाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४७॥

दर्श ज्ञानमय धर्म, अचेतन धर्म प्रगट कहो।

भेदाभेद सुपर्म, नमत सदा भव भय हरण॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४८॥

दर्शज्ञान गुणसार, जीवभूत परमातमा।

राजत सब परकार, नमत सदा भव भय हरण॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपगुणाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२४९॥

अष्ट कर्म मल जार, दीप्तरूप निज पद लहो ।
स्वच्छ हेम उनहार, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं परमस्नातकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५०॥
रागादिक मल बोध, दोऊ विविध विधान विध ।
लहो शुद्ध प्रतिबोध, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं स्नातकधर्माय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५१॥
विधि आवरण विनाश, दर्श ज्ञान परिपूर्ण हो ।
लोकालोक प्रकाश, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं सर्वावलोक्याय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५२॥
निजकर निज में वास, सर्व लोकसों भिन्नता ।
पायो शिव सुख रास, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं लोकाग्रस्थिताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५३॥
ज्ञान-भान की जोति, व्यापक लोकालोक में ।
दर्शन बिन उद्योत, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं लोकालोकाव्यापकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५४॥
जो कुछ धरत विशेष, सब ही सब आनन्दमय ।
लेश न भाव कलेश, नमूं सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं अतुलभावाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५५॥
जिस आनन्द को पार, पावत नहीं यह जगतजन ।
सो पायो हितकार, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं आनन्दविधानाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५६॥
नित्य शर्म सुखकार, दर्शन ज्ञान चरित्रमय ।
मनसों दुविधा टार, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं रत्नत्रयसंयुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५७॥



सब जीवन के हेत, दशविधि धर्म बताइयो।

जासों होय सुचेत, आलस तजि धारण करो॥

ॐ ह्रीं दशधर्मसंयुक्ताय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५८॥

दोहा

इत्यादिक आनन्द गुण, धारत सिद्ध अनन्त।

तिन पद आठों दरवसों, पूजत हैं निज सन्त॥

ॐ ह्रीं आनन्दपूर्णाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥२५९॥

ॐ ह्रीं षट्पञ्चाशत्अधिकद्विशतगुणयुक्ताय सिद्धाधिपतये महार्घं निः स्वाहा।

“ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः” मंत्र का १०८ बार जाप देना चाहिये।

जयमाला - दोहा

थावर शब्द विषय धरें, त्रस थावर पर्याय।

यों न हीय तो तुम सुगुण, हम किह विधि वर्णाय॥

तिस पर जो कछु कहत हैं, केवल भक्ति प्रमान।

बालक जल शशि बिंब को, चहत ग्रहण निज पान॥

पद्धड़ी छन्द

जय जग निमित्त व्यवहार त्याग, पायो निज शुद्ध स्वरूप भाग।

जय जग पालन बिन जगत् देव, जय दयाभाव बिन शान्तिमेव॥

परसुख दुःखकरण कुरीति टार, परसुख दुःख कारण शक्ति धार।

फुनि-फुनि नव-नव नित जन्म रीत, बिन सर्वलोक थापी पुनीत॥

जय लीला रास विलास नास, स्वाभाविक निजपद रमण बास।

शयनासन आदि क्रिया कलाप, तज सुखी सदा शिवरूप आप॥

बिन कामदाह नहीं नार भोग, निरद्वन्द निजानन्द मगन योग।

वरमाल आदि शृंगार रूप, बिन शुद्ध निरञ्जन पद अनूप॥

जय धर्म भर्म वन हन कुठार, परकाश पुञ्ज चिद्रूप सार ।
 उपकरण हरण दव सलिल धार, निज शक्ति प्रभाव उदय अपार ॥
 नभ सीम नहीं अरु होत होउ, नहीं काल अन्त लहो अन्त सोउ ।
 परतुम गुण रास अनन्त भाग, अक्षय विधि राजत अवधि त्याग ॥
 आनन्द जलधि धारा प्रवाह, विज्ञानसुरी सुखद्रह अथाह ।
 निज शान्ति सुधारस परम खान, समभाव बीज उत्पत्ति थान ॥
 निज आत्मलीन विकल्प विनाश, शुद्धोपयोग परिणति प्रकाश ।
 द्रग ज्ञान असाधारण स्वभाव, स्पर्श आदि परगुण अभाव ॥
 निज गुणपर्याय समुदाय स्वामि, पायो अखण्ड पद परम धाम ।
 अव्यय अबाध पद स्वयं सिद्ध, उपलब्धि रूप धर्मी प्रसिद्ध ॥
 एकाग्र रूप चिन्ता निरोध, जे ध्यावैं पावैं स्वयं बोध ।
 गुण मात्र सन्त अनुराग रूप, यह भाव देहु तुम पद अनूप ॥

घत्ता - दोहा

सिद्ध सुगुण सुमरण महा, मन्त्रराज है सार ।
 सर्व सिद्ध दातार है, सर्व विघन हर्तार ॥
 ॐ ह्रीं षट्पञ्चाशत्तदधिकद्विशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्व ।
 तीन लोक चूड़ामणी, सदा रहो जयवन्त ।
 विघन हरण मंगल करण, तुम्हें नमैं नित सन्त ॥

इत्याशीर्वादः ॥ इति षष्ठी पूजा सम्पूर्णम् ॥



श्री सप्तमी पूजा ५१२ गुण सहित प्रारम्भ

छप्पय छन्द

ऊरध अधो सुरेफ बिन्दु हङ्कार बिराजे ।

अकारादि स्वर लिप्तकर्णिका अन्त सु छाजे ॥

वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर ।

अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर ॥

फुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरिनागको ।

है केहरिसम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिनः द्वादशाधिकपञ्चशत ५१२ गुणसंयुक्त बिराजमान अत्रावतरावतरत संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग ।

सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटैं उपद्रव योग ॥

इति यन्त्र स्थापनम् । परिपुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ।

अथाष्टकं - चाल - बारामास छन्द

सुवरणीकुम्भक्षीरभरधारत, मुनिमनशुद्धप्रवाहबहावहिं ।

हमदोऊविधिलायकनाहीं, कृपाकरहुलहिभवतटभावहिं ॥

शक्तिसारुसामान्यनीरसों, पूजूँहूँ शिवतियकेस्वामी ।

द्वादशाधिकपञ्चशतसंख्यक, नामउचारतहूँसुखधामी ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशत ५१२ गुण सहिताय श्री समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

हनन असाता पीर नहीं यह, भीर परै चरु भेंटन लायो ।
भक्त अभिमान मेंट हो स्वामी, यह भव कारण भाव सतायो ॥



मम उद्यम करि कहा आप ही, सो एकाकी अर्थ लहामी ॥
द्वादश अधिक पञ्चशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशत ५१२ गुण सहिताय
श्री समत्तणानंदसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं
क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

पूरण ज्ञानानन्द ज्योति घन, विमल गुणातम शुद्ध स्वरूपी ।
हो तुम पूज्य भये हम पूजक, पाय विवेक प्रकाश अनूपी ॥
मोह अन्ध विनसो तिह कारण, दीपनसों अर्चू अभिरामी ॥
द्वादश अधिक पञ्चशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशत ५१२ गुण सहिताय
श्री समत्तणानंदसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं
मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

धूप वरें उघरें प्रजरे मणि, हे म धरे तुम पद पर वारूं ।
बार-बार आवर्त जोरि करि, धार-धार निज शीश न हारूं ॥
धूम्र धार समत्तन रोमांचित, हर्ष सहित अष्टांग नमामी ।
द्वादश अधिक पञ्चशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशत ५१२ गुण सहिताय
श्री समत्तणानंदसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं
अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

तुम हो वीतराग निज पूजन, वन्दन श्रुति परवाह नहीं है ।
अरु अपने समभाव बहै कछु, पूजा फल की चाह नहीं है ॥

तो भी यह फल पूजि फलद, अनिवार निजानन्द कर इच्छामि ।
द्वादश अधिक पञ्चशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशत ५१२ गुण सहिताय
श्री समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं
मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

तुमसे स्वामी के पद सेवत, यह विधि दुष्ट रङ्ग कहा कर है ।
ज्यों मयूर ध्वनि सुनि अहि निज बिल, विलय जाय छिन विमल न धर है ॥
तातैं तुम पद अर्घ उतारण, विरद उचारण करहुँ मुदामी ।
द्वादश अधिक पञ्चशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने द्वादशाधिकपञ्चशत ५१२ गुण सहिताय
श्री समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुअव्वावाहं
अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

गीता छन्द

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ॥
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्म प्रकृति नसाय युगपति, ज्ञान निर्मल रूप हैं ।
दुःख जन्म टाल अपार गुण, सूक्ष्म सरूप अनूप हैं ॥
कर्माष्ट्र बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अभेय चाहूँ, गेय द्यो हम शुभमती ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः समत्तणाणादि अट्टगुणाणं पूर्णपदप्राप्तये
महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।



५१२ गुण सहित नाम अर्घ (अर्द्ध छन्द जोगीरासा)
लोकत्रय करि पूज्य प्रधाना, केवल ज्योति प्रकाशी।
भव्यन मन तम मोह विनाशक, बन्दूं शिव थल वासी॥

ॐ ह्रीं अरहन्ताय नमः अर्घ्यं ॥१॥

सुरनर मुनिजन कुमुदन मोदन, पूरण चन्द्र समाना।
हो अर्हन्त जात जन्मोत्सव, बन्दूं श्री भगवाना॥

ॐ ह्रीं अरहज्जाताय नमः अर्घ्यं ॥२॥

केवल दर्श ज्ञान किरणावलि, मण्डित तिह जग चन्दा।
मिथ्या तम हर जल आदिक करि, बन्दूं पद अरबिन्दा॥

ॐ ह्रीं अरहचिद्रूपाय नमः अर्घ्यं ॥३॥

घाति कर्म रिपु जारि छारकर, स्व चतुष्टय पद पायो।
निज स्वरूप चिद्रूप गुणातम, हम तिन पद शिर नायो॥

ॐ ह्रीं अरहचिद्रूपगुणाय नमः अर्घ्यं ॥४॥

ज्ञानावरणी पटल उधारत, केवल भानु उगायो।
भव्यन को प्रतिबोध उधारे, बहुरि मुक्ति पद पायो॥

ॐ ह्रीं अरहज्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥५॥

धर्म-अधर्म ढास फल दोनों, देखो जिम कर रेखा।
बतलायो परतीत विषय करि, यह गुण जिनमें देखा॥

ॐ ह्रीं अरहदर्शनाय नमः अर्घ्यं ॥६॥

मोह महा दृढ बन्ध उधारो, कर विषतन्तु समाना।
अतुल बली अरहन्त कहायो, पाय नमूं शिवथाना॥

ॐ ह्रीं अरहद्वीर्याय नमः अर्घ्यं ॥७॥

ॐ ह्रीं अरहदर्शनगुणाय नमः अर्घ्यं ॥८॥

ॐ ह्रीं अरहज्ज्ञानगुणाय नमः अर्घ्यं ॥९॥

ॐ ह्रीं अरहद्वीर्यगुणाय नमः अर्घ्यं ॥१०॥

ॐ ह्रीं अरहसम्यक्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं ॥११॥

ॐ ह्रीं अरहत्शौचगुणाय नमः अर्घ्यं ॥१२॥

ॐ ह्रीं अरहदद्वादशांगाय नमः अर्घ्यं ॥१३॥

ॐ ह्रीं अरहद्भिन्नबोधकाय नमः अर्घ्यं ॥१४॥

ॐ ह्रीं अरहत्श्रुतावधिगुणाय नमः अर्घ्यं ॥१५॥

ॐ ह्रीं अरहत्श्रुतावधिगुणाय नमः अर्घ्यं ॥१५॥

सर्वावधि निधि वृद्धि प्रवाही, केवल सागर मांही ।
एक भयो अरहन्त अवधि यह, मुक्त भए नमि ताही ॥

ॐ ह्रीं अरहदवधिगुणाय नमः अर्घ्य ॥१६॥

अति विशुद्ध मय विपुलमती लहि, हो पूर्वोक्त प्रकारा ।
यह अरहन्त पाय मनःपर्यय, नमूं भए भव पारा ॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छुद्धमनःपर्यय नमः अर्घ्य ॥१७॥

मोहमलिनता जग जिय नाशै, केवलता गुण पावैं ।
सर्व शुद्धता पाइ नमत हैं, हम अरहन्त कहावैं ॥

ॐ ह्रीं अरहत्केवलगुणाय नमः अर्घ्य ॥१८॥

मोह जनित सो रूप विरूपी, तिस बिन केवलरूपा ।
श्री अरहन्त रूप सर्वोत्तम, बन्दूं हो शिवभूपा ॥

ॐ ह्रीं अरहत्केवलस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥१९॥

तास विरोधी कर्म जीत करि, केवल दर्शन पायो ।
इस गुण सहित नमत तुम पद प्रति, भाव सहित शिरनायो ॥

ॐ ह्रीं अरहत्केवलदर्शनाय नमः अर्घ्य ॥२०॥

निर आवरण करण बिन जाको, शरण हरण नहिं कोई ।
केवलज्ञान पाय शिव पायो, पूजत हैं हम सोई ॥

ॐ ह्रीं अरहत्केवलज्ञानाय नमः अर्घ्य ॥२१॥

अगम अतीर भवोदधि उतरे, सहज ही गोखुर मानो ।
केवल अब अरहन्त नमें हम, शिव थल बास करानो ॥

ॐ ह्रीं अरहत्केवलवीर्याय नमः अर्घ्य ॥२२॥

सब विधि अपने विघ्न निवारण, औरन विघ्न विडारी ।
मंगलमय अर्हन्त सर्वदा, नमूं मुक्ति पदधारी ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलाय नमः अर्घ्य ॥२३॥

चक्षु आदि सब विघन विदूरित, क्षायक मंगलकारी ।
यह अर्हन्त दर्श पायो मैं, नमूं भये शिव कारी ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलादर्शनाय नमः अर्घ्यं ॥२४॥

निजपर संशय आदि पाय बिन, निरावरण विकसानो ।
मंगलमय अरहन्त ज्ञान है, बन्दूं शिव सुख थानो ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥२५॥

परकृत जरा आदि सङ्कट बिन, अतुल बली अर्हन्ता ।
नमूं सदा शिवनारी के संग, सुखसो केलि करन्ता ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलवीर्याय नमः अर्घ्यं ॥२६॥

पापरूप एकान्त पक्ष बिन, सर्व तत्त्व परकाशी ।
द्वादशांग अरहन्त कहो मैं, नमूं भये शिववासी ॥

ॐ ह्रीं अरहन्तमंगलद्वादशांगाय नमः अर्घ्यं ॥२७॥

बिन प्रतक्ष अनुमान सुबाधित, सुमतिरूप परिणामा ।
मंगलमय अर्हन्तमती मैं, नमूं देउ शिवधामा ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलअभिन्नबोधकाय नमः अर्घ्यं ॥२८॥

नय विकल्प श्रुत अंग पक्ष के, त्यागी हैं भगवन्ता ।
ज्ञाता दृष्टा वीतराग, विख्यात नमूं अरहन्ता ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलश्रुतात्मकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥२९॥

मंगलमय सर्वावधि जाकरि, पावै पद अरहन्ता ।
बन्दूं ज्ञान प्रकाश नाश भव, शिव थल वास करन्ता ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलावधिज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥३०॥

वर्धमान मनपर्यय ज्ञान करि, केवल भानु उगायो ।
भव्यनि प्रति शुभ मार्ग बतायो, नमूं सिद्ध पद पायो ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलमनःपर्ययज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥३१॥



जा बिन और अज्ञान सकल, जग कारण बन्ध प्रंधाना ।
नमूं पाइ अरहन्त मुक्ति पद, मंगल के वलज्ञाना ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलकेवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥३२॥

निरावरण निरखेद निरन्तर, निराबाधमई राजैं ।
केवलरूप नमूं सब अघहर, श्री अरहन्त बिराजैं ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलकेवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३३॥

चक्षु आदि सब भेद विघन हर, क्षायक दर्शन पाया ।
श्री अरहन्त नमूं शिववासी, इह जग पाप नशाया ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलकेवलदर्शनाय नमः अर्घ्यं ॥३४॥

जग मंगल सब विघन रूप है, इक केवल अरहन्ता ।
मंगलमय सब मंगलदायक, नमूं कियो जग अन्ता ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलकेवलाय नमः अर्घ्यं ॥३५॥

केवलरूप महामंगलमय, परम शत्रु छयकारा ।
सो अरहन्त सिद्ध पद पायो, नमूं पाय भवपारा ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलकेवलरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३६॥

शुद्धातम निजधर्म प्रकाशी, परमानन्द बिराजैं ।
सो अरहन्त परम मंगलमय, नमूं शिवालय राजैं ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलधर्माय नमः अर्घ्यं ॥३७॥

सब विभावमय विघन नाशकर, मंगल धर्म स्वरूपा ।
सो अरहन्त भये परमात्म, नमूं त्रियोग निरूपा ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३८॥

सर्व जगत् सम्बन्ध विघन नहीं, उत्तम मंगल सोई ।
सो अरहन्त भये शिववासी, पूजत शिवसुख होई ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलउत्तमाय नमः अर्घ्यं ॥३९॥

लोकातीत त्रिलोक पूज्य जिन, लोकोत्तम गुणधारी ।
लोकशिखर सुखरूप बिराजैं, तिनपद धोक हमारी ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं ॥४०॥

लोकाश्रित गुण सब विभाव हैं, श्रीजिनपदसों न्यारे ।
तिनको त्याग भये शिव बन्दूं, काटो बन्ध हमारे ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमगुणाय नमः अर्घ्यं ॥४१॥

मिथ्या मतिकर सहित ज्ञान, अज्ञान जगत में सारो ।
ता विनाशि अरहंत कहौ, लोकोत्तम पूज हमारो ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥४२॥

क्षायक दरशन है अरहंता, और लोक में नाहीं ।
सो अरहंत भये शिववासी, लोकोत्तम सुखदाई ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं ॥४३॥

कर्मबली ने सब जग बांध्यो, ताहि हनो अरहंता ।
यह अरहंत वीर्य लोकोत्तम, पायो सिद्ध अनंता ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं ॥४४॥

अक्ष अतीत ज्ञान लोकोत्तम, परमात्म पद मूला ।
सो अरहंत नमूं शिवनाइक, पाऊं भवदधि कूला ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं ॥४५॥

परमावधि ज्ञानी सुखखानी, केवलज्ञान प्रकाशी ।
यहै अवधि अरहंत नमूं मैं, संशय तमको नाशी ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमअवधिज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥४६॥

जो अरहंत धरै मनपर्यय, सो केवल के माहीं ।
साक्षात् शिवरूप नमो मैं, अन्य लोक में नाहीं ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तममनःपर्ययज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥४७॥

तीन लोक में सार सु श्रीअरहंत स्वयम्भू ज्ञानी ।
नमूं सदा शिवरूप आप हो भविजन प्रति सुखदानी ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमकेवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥४८॥

सर्वोत्तम तिहूं लोक प्रकाशित, केवलज्ञान स्वरूपी ।
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमकेवलज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥४९॥

ज्ञान तरंग अभंगे बहै, लोकोत्तम सार अरूपी ।
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद धार अनूपी ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमकेवलज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥५०॥

सहित असाधारण गुण पर्याय, केवलज्ञान सरूपी ॥
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद धार अनूपी ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमकेवलद्रव्याय नमः अर्घ्यं ॥५१॥

जगजिय सर्व अशुद्ध कहो, इक केवल शुद्ध सरूपी ।
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद धार अनूपी ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमकेवलाय नमः अर्घ्यं ॥५२॥

विविध कुरूप सर्व जगवासी, केवल स्वयं सरूपी ।
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद धार अनूपी ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमकेवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥५३॥

हीनाधिक धिक धिक जग प्राणी, धन्य एक ध्रुवरूपी ॥
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद धार अनूपी ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमध्रुवभावाय नमः अर्घ्यं ॥५४॥

दोहा

संसारिन के भाव सब, बन्ध हेत वरणाय ।
मुक्तिरूप अरहंत के, भाव नमूं सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमभावाय नमः अर्घ्यं ॥५५॥

कबहुँ न होय विभावमय, सो थिर भाव जिनेश ।
मुक्तिरूप प्रणामूं सदा, नाशो विघन विशेष ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमस्थिरभावाय नमः अर्घ्यं ॥५६॥

जा सेवत वेवत स्वमुख, सो सर्वोत्तम देव ।
शिववासी नाशी त्रिजग-फाँसी नमहुँ एव ॥

ॐ ह्रीं अरहच्छरणाय नमः अर्घ्यं ॥५७॥

जिन ध्यायो तिन पाइयो, निश्चय सो सुखरास ।
शरण स्वरूपी जिन नमूं, करैं सदा शिववास ॥

ॐ ह्रीं अरहच्छरणाय नमः अर्घ्यं ॥५८॥

पद्धड़ी छन्द

स्वाभाविक गुण अरहन्त गाय, जासों पूरण शिवसुख लहाय ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहद्गुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥५९॥

बिन केवलज्ञान न मुक्ति होय, पायो है श्री अरहन्त जोय ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरज्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥६०॥

प्रत्यक्षा देख सर्वज्ञ देव, भाख्यो है शिव मारग असेव ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहद्दर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं ॥६१॥

संसार विषम बन्धन उछेद, अरहन्त वीर्य पायो अखेद ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहद्वीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं ॥६२॥

सब कुमति विगत मनजिन प्रतीत, हो जिसते शिवसुध दे अभीत ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहद्द्वादशांगश्रुतशरणाय नमः अर्घ्यं ॥६३॥



अनुमानादिक साधत विज्ञान, अरहन्त मती प्रत्यक्ष जान ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहदभिनिबोधकायशरणाय नमः अर्घ्यं ॥६४॥

जिन भाषित श्रुत सुनि भव्य जीव, पायो शिव अविनाशी सदीव ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहश्रुतशरणाय नमः अर्घ्यं ॥६५॥

प्रतिपक्षी सब जीते कषाय, पायो अवधी शिवसुख कराय ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहद्वधिशरणाय नमः अर्घ्यं ॥६६॥

मुनि लहैं गहैं परिणाम श्वेत, जिन मनपर्यय शिववास देत ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मनःपर्ययशरणाय नमः अर्घ्यं ॥६७॥

आवरण रहित प्रत्यक्ष ज्ञान, शिवरूप केवली जिन सुजान ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहत्केवलशरणाय नमः अर्घ्यं ॥६८॥

मुनि केवलज्ञानी जिन अराध, पावैं शिव-सुख निश्चय अबाध ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहत्केवलशरणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥६९॥

शिव-सुखदायक जिन आत्मज्ञान, सो केवल पावैं जिन महान ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहत्केवलधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं ॥७०॥

यह केवल गुण आतम स्वभाव, अरहन्तन प्रति शिव-सुख उपाव ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहकेवलगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥७१॥

संसार रूप सब विघन टार, मंगल गुण श्री जिन मुक्तिकार ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥७२ ॥

छय उपशम ज्ञानी विघन रूप, ता बिन जिन ज्ञानी शिव सुरूप ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं ॥७३ ॥

अरहन्त दर्श मंगल स्वरूप, तासों दरशौ शिव-सुख अनूप ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं ॥७४ ॥

अरहन्त बोध है मंगलीक, शिवमारग प्रति वरते अलोक ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलबोधशरणाय नमः अर्घ्यं ॥७५ ॥

निज ज्ञानानन्द प्रवाह धार, वरते अखण्ड अव्यय अपार ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहन्मंगलआत्मबोधशरणाय नमः अर्घ्यं ॥७६ ॥

जा बिन तिहुँलोक न और मान, भव सिन्धु तरण तारण महान ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं ॥७७ ॥

स्वाभाविक भव्यन प्रति दयाल, विच्छेद करण संसार जाल ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥७८ ॥

तुम बिन समरथ तिहुँलोक माहिं, भव सिन्धु उतारण और नाहिं ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं ॥७९ ॥

बिन परिश्रम तारण तरण होय, लोकोत्तम अद्भुत शक्ति सोय ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमवीर्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥८०॥

अप्रसिद्ध कुनय अल्पज्ञ भास, ताको विनाश शिवमग प्रकाश ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमद्वादशांग नमः अर्घ्यं ॥८१॥

सब कुनय कुपक्ष कुसाध्य नाश, सत्यारथ सत कारण प्रकाश ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं ॥८२॥

मिथ्यारत प्रकृति अवधि विनाश, लोकोत्तम अवधी को प्रकाश ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमावधिशरणाय नमः अर्घ्यं ॥८३॥

मनपर्यय शिव मंगल लहाय, लोकोत्तम श्रीगुरु सो कहाय ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तममनःपर्ययशरणाय नमः अर्घ्यं ॥८४॥

आवरणतीत प्रत्यक्ष ज्ञान, है सेवनीक जग में प्रधान ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमकेवलज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं ॥८५॥

हो बाह्य विभव सुरकृत अनूप, अन्तर लोकोत्तम ज्ञानरूप ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमविभूतिप्रधानशरणाय नमः अर्घ्यं ॥८६॥

रतनत्रय निमित्त मिलो अबाध, पायो निज आनंद धर्म साध ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तमविभूतिधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं ॥८७॥

सुख ज्ञान वीर्य दर्शन सुभाव, पायो सब कर प्रकृती अभाव ।
हम शरण गही मन-वचन-काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अरहल्लोकोत्तम अनन्तचतुष्टयशरणाय नमः अर्घ्य ॥८८॥

अडिल्ल छन्द

दर्श ज्ञान सुख बल निजगुण ये चार हैं,
आतमीक परधान विशेष अपार हैं ।
इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥

ॐ ह्रीं अरहद्वनन्तगुणचतुष्टय नमः अर्घ्य ॥८९॥

क्षयोपशम सम्बाधित ज्ञान कलाहरी,
पूरण ज्ञायक स्वयं बुद्धि श्रीजिनवरी ।
इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥

ॐ ह्रीं अरहन्निजज्ञानस्वयंभुवे नमः अर्घ्य ॥९०॥

जनमतही दश अतिशय शासनमें कही,
स्वयंशक्ति भगवान आप तिनकी लही ।
इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥

ॐ ह्रीं अरहदशातिशयस्वयंभुवे नमः अर्घ्य ॥९१॥

ये दश अतिशय घातिकर्म छय को करैं,
महा विभव को पाय मोक्ष नारी वरैं ।
इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥

ॐ ह्रीं अरहदशघातिक्षयतिशय नमः अर्घ्य ॥९२॥



केवल विभव उपाय प्रभू निजपद लियो,
 चौदह अतिशय देवन करि सेवन कियो।
 इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
 हम हूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा॥

ॐ ह्रीं अरहदेवकृतचतुर्दशअतिशयाय नमः अर्घ्यं ॥९३॥

चौंतीस अतिशय जे पुराण वरणे महा,
 मुक्ति समाज अनूपम श्रीगुरुने कहा।
 इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
 हम हूँ यह गुण पाय नमन यातैं करा॥

ॐ ह्रीं अरहचतुस्त्रिंशतअतिशयबिराजमानाय नमः अर्घ्यं ॥९४॥

डालर छन्द

लोकालोक अणु सम जानो, ज्ञानानन्त सुगुण पहिचानो।
 सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अरहज्ञानानन्दगुणाय नमः अर्घ्यं ॥९५॥

समरस सुस्थिर भाव उघारा, युगपत लोकालोक निहारा।
 सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अरहदध्यानाब्धयेयाय नमः अर्घ्यं ॥९६॥

इक इक गुण का भाव अनन्ता, पर्ययरूप सोहै अरहन्ता।
 सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अरहद्वन्तगुणाय नमः अर्घ्यं ॥९७॥

उत्तर गुण सब लख चौरासी, पूरण चारित भेद प्रकाशी।
 सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अरहत्तपअनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं ॥९८॥

आतम शक्तिजास करि छीनी, तास नाश प्रभुताई लीनी ।
सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥

ॐ ह्रीं अरहत्परमात्मने नमः अर्घ्यं ॥९९॥

निज गुण निज ही माहीं समाया, गणधरादि वरनन न कराया ।
सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥

ॐ ह्रीं अरहद्गुप्तस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥१००॥

दोधक छन्द

जो निज आतम साधु सुखाइ, सो जगतेश्वर सिद्ध कहाई ।
लोक शिरोमणि है शिव स्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१०१॥

सर्व विशुद्ध विरूप सरूपी, स्वातम रूप विशुद्ध अनूपी ।
लोक शिरोमणि है शिव स्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१०२॥

प्राश्रित सर्व भाव विनिवारा, स्वाश्रित सर्व अबाध अपारा ।
लोक शिरोमणि है शिव स्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१०३॥

आकुलता सबही विधि नाशी, ज्ञायक लोकालोक प्रकाशी ।
लोक शिरोमणि है शिव स्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१०४॥

जीव-अजीव लखे अविचारा, हो नहीं अन्तर एक प्रकारा ।
लोक शिरोमणि है शिव स्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१०५॥

अन्तर बाहिरर भेद उधारी, दर्श विशुद्ध सदा सुखकारी ।
लोकशिरोमणि है शिव स्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धशुद्धसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१०६॥

एक अणुमल कर्म लजावै, सोय निरञ्जनता नहिं पावै ।
लोकशिरोमणि है शिव स्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धनिरंजनेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१०७॥

अर्द्ध रोला छन्द

चारों गति को भ्रमण नाम कर थिरता पाई ।
निज स्वरूप में लीन, अन्य सो मोह नशाई ॥

ॐ ह्रीं सिद्धाचलपदप्राप्ताय नमः अर्घ्यं ॥१०८॥

रत्नत्रय आराधि साधि, निज शिवपद पायो ।
संख्या भेद उलंघि, शिवालय वास करायो ॥

ॐ ह्रीं संख्यातीतसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१०९॥

असंख्यात मरजाद एक ताहू सो बीते ।
विजयी लक्ष्मीनाथ, महाबल सब विधि जीते ॥

ॐ ह्रीं असंख्यातसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥११०॥

काल आदि मर्याद अनादि, सो इह विधि जारी ।
भए अनन्त दिगम्बर साधु जु, शिवपद धारी ॥

ॐ ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१११॥

पुष्करार्द्ध सागर लों, जे थल थान बखानो ।
देव सलाइ उपाइ, ऊर्ध्व गति गमन करानो ॥

ॐ ह्रीं जलसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥११२॥

तीर्थङ्कर के समय में, केवली जिन अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है ॥

ॐ ह्रीं तीर्थङ्करअरहन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१२०॥

पञ्च शतक पच्चीस फुनि, धनुषकाय अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है ॥

ॐ ह्रीं उत्कृष्टअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१२१॥

आदि अन्त अन्तर विषैं, मध्यअवगाहन नाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है ॥

ॐ ह्रीं भव्यअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१२२॥

तीन अर्घ तन केवली, हस्त प्रमाण कहाय है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है ॥

ॐ ह्रीं जघन्यअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१२३॥

देव निमित्त मिलो जहाँ, त्रिजग लोक सु धाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है ॥

ॐ ह्रीं त्रिजगलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१२४॥

षट्विध परिणति काल की, तिन अपेक्ष यह नाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है ॥

ॐ ह्रीं षट्विधकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१२५॥

अन्त समय उपसर्गतैं, शुक्ल ध्यान अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है ॥

ॐ ह्रीं उपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१२६॥

पर उपसर्ग मिलै नहीं, स्वतः शुक्ल शुभ धाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है ॥

ॐ ह्रीं निरुपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१२७॥



ॐ ह्रीं द्वीपसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१२८॥

ॐ ह्रीं उदधिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१२९॥

धरैं जोग आसन गहैं शुद्ध ताई,
न हो खेद ध्यानाग्नि सों कर्म छाई।
भये सिद्ध राजा निजानन्द साजा,
यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं स्वस्थित्यासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३०॥

महा शान्ति मुद्रा पलौथी लगाये,
कियो कर्म को नाश ज्ञानी कहाये ।
भये सिद्ध राजा निजानन्द साजा,
यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा ॥

ॐ ह्रीं पर्यङ्कासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३१॥

लहै आदि को संहनन पुरुष देही,
लखायो परारम्भ में भाव ते ही।
भये सिद्ध राजा निजानन्द साजा,
यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा॥

ॐ ह्रीं पुरुषवेदसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३२॥



खपायो प्रथम सात प्रकृति विमोहा,
 गहो शुद्ध श्रेणी क्षयो कर्म लोहा।
 भये सिद्ध राजा निजानन्द साजा,
 यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा ॥

ॐ ह्रीं क्षपकश्रेणीसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३३॥

समय एक में एक वासौ अनन्ता,
 धरो आठ तापं यही भेद अन्ता ॥
 भये सिद्ध राजा निजानन्द साजा,
 यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा ॥

ॐ ह्रीं एकसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३४॥

किसी देश में वा किसी काल माहीं,
 गिनें दो समय में तथा अन्तराई।
 भये सिद्ध राजा निजानन्द साजा,
 यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा ॥

ॐ ह्रीं द्विसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३५॥

समय एक दो तीन धाराप्रवाही,
 कियो कर्म छय अन्तराय होय नाहीं।
 भये सिद्ध राजा निजानन्द साजा,
 यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा ॥

ॐ ह्रीं त्रिसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३६॥

हुवे हैं सु होंगे सु हो हैं अबारी,
 त्रिकालं सदा मोक्ष पन्था विहारी।

भये सिद्ध राजा निजानन्द साजा,

यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा ॥

ॐ ह्रीं त्रिकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३७॥

तिहुँ लोक शुद्ध सम्यक्त धारो,

महा भार संजम धरै हैं अवारी ।

भये सिद्ध राजा निजानन्द साजा,

यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा ॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३८॥

मरहठा छन्द

तिहुँ लोक निहारा, सब दुखकारा पापरूप संसार ।

ताको परिहारा सुलभ सुखारा, भये सिद्ध अविकार ॥

हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।

मैं नमूं त्रिकाल हो अघ टाला, तपहर शशि उनहार ॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१३९॥

तिहुँ कर्म कालमा लगी जालमा, करै रूप दुखदाय ।

तुम ताको नाशो स्वयं प्रकाशो, स्वातम रूप सुभाय ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४०॥

तिहुँ जग के प्राणी सब अज्ञानी, फँसे मोह जझाल ।

हो तिहुँ जगत्राता पूरण ज्ञाता, तुम ही एक खुशहाल ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४१॥

यह मोह अन्धेरी छई घनेरी, प्रबल पटल रहो छाये ।

तुम ताहि उधारो सकल निहारो, युगपत् आनन्ददाय ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलदर्शनेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४२॥



निजबंधन डोरी छिन में तोरी, स्वयं शक्ति परकाश ।

निरभयनिरमोही, परमअछोही, अन्तरायविधिनाश ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलवीर्येभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४३॥

जाके प्रसादकर सकल चराचर, निजसों भिन्न लखाय ।

रुषराग निवारा सुख विस्तारा, आकुलता विनशाय ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४४॥

अस्पर्श अमूरति चिनमय मूरति, अरस अलिंग अनूप ।

मन अक्ष अलक्षं ज्ञान प्रत्यक्षं, शुभ अवगाह स्वरूप ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलअवगाहनेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४५॥

अव्यक्त स्वरूपं अमल अनूपं, अलख अगम असमान ।

अवगाह उदन धन वास परस्पर, भिन्न भिन्न परमान ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलसूक्ष्मत्वेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४६॥

अनुभूति विलासी समरस रासी, हीना धिकविधि नाश ।

विधि गोत्र नाशकर पूरण पदधर, असंवाध परकाश ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलअगुरुलघुभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४७॥

पुद्गल कृत सारी विविध प्रकारी, द्वैतभाव अधिकार ।

सब भाँति निवारी निज सुखकारी, पायोपद अविचार ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलअव्याबाधेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४८॥

अवगाह प्रणामी ज्ञानारामी, दर्शन वीर्य अपार ।

सूक्ष्मअवकाशं आज अविनाशं, अगुरुलघु सुखकार ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलाष्टगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१४९॥

शुद्धातम सारं अष्ट प्रकारं, शिव स्वरूप अनिकार ।

निज गुणपरधानं सम्यक्ज्ञानं, आदि अन्त अविचार ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलअष्टस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१५०॥

मंगल अरहन्तं अष्टम भन्तं, सिद्ध अष्ट गुण भाश ।

ये ही बिलसावैं, अन्य न पावैं, असाधारण परकाश ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलअष्टप्रकाशकेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१५१॥

निर आकुलताई सुख अधिकाई, परम शुद्ध परिणाम ।

संसार निवारण बन्ध विडारन, यही धर्म सुखधाम ॥ हेजग.

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलधर्मभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१५२॥

चूलिका छन्द

तीन काल तिहुँ लोक में, तुम गुण और न माहिं लखाने ।

लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१५३॥

❖ लोकत्रय शिर छत्र मणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने ।

लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१५४॥

अमल अनूपम तेजधन, निरावरण निजरूप प्रमाने ।

लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१५५॥

लोकालोक प्रकाश कर, लोकातीत प्रत्यक्ष प्रमाने ।

लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमणानाय नमः अर्घ्यं ॥१५६॥

सकल दर्शनावरण बिन, पूरन-दरसन जोत उगाने ।

लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं ॥१५७॥

❖ 'लोकत्रयशिर चत्रमणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने' ऐसा पाठ "क" प्रतिमें है ।



अतुल अतीन्द्रिय वीर्यकर, भोगे नित शिवनारी अघाने ।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं ॥१५८॥

त्रोटक छन्द

बिन कारण ही सबके मितु हो, सर्वोत्तम लोकविषैं हितु हो ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१५९॥

तुम रूप अनुपम ध्यान किये, निज रूप दिखावत स्वच्छ हिये ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१६०॥

निरभेद अछेद विकाशित हैं, सब लोक अलोक विभासित हैं ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१६१॥

निरबाध अगाध प्रकाशमई, निरद्वन्द अबंध अभय अजई ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१६२॥

हित कारण तारण तरण कहै, अप्रमाद प्रमाद प्रकाशन है ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१६३॥

अविरुद्ध विशुद्ध प्रसिद्ध महा, निज आतम-तत्त्व प्रबोध लहा ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१६४॥

जिनको पूर्वापर अन्त नहीं, नित धार प्रवाह बहै अति ही ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धअनन्तशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१६५॥

कबहूँ नहीं अन्त समावत हैं, सु अनन्त अनन्त कहावत हैं ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धअनन्तानन्तशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१६६॥

तिहुँ काल सु सिद्ध महा सुखदा, निजरूप विषैं थिर भाव सदा ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धत्रिकालशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१६७॥

तिहुँ लोक शिरोमणि पूजि महा, तिहुँ लोक प्रकाशक तेज कहा ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१६८॥

गिनती परमाण जु लोक धरे, परदेश समूह प्रकाश करे ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धअसंख्यातलोकशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१६९॥

पूर्वापर एकहि रूप लसे, नित लोक सिंहासन वास बसै ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धघ्नौव्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१७०॥

जगवास पर्याय विनाश कियो, अब निश्चयरूप विशुद्ध भयो ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धउत्पादगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१७१॥

परद्रव्य थकी रुष राग नहीं, निजभाव बिना कहूँ लाग नहीं ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसाम्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१७२॥

बिन कर्म कलङ्क विराजत हैं, अति स्वच्छ महागुण राजत हैं ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वच्छगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१७३॥

मन इन्द्रिय आदि न व्याधितहां, रुष राग क्लेश प्रवेश न ह्वां ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वस्थितगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१७४॥

निज रूप विषैं नित मगन रहैं, परयोग वियोग न दाह लहैं ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसमाधिगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१७५॥

श्रुतज्ञान तथा मतिज्ञान दड, परकाशत हैं यह व्यक्त सऊ ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१७६॥

परतक्ष अतीन्द्रिय भाव महा, मन इन्द्रिय बोध न गुह्य कहा ।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धअव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥१७७॥

मालिनी छन्द

निज गुणवर स्वामी शुद्ध संबोध नामी,
परगुण नहीं लेशा एकही भाव शेषा ।
मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुख पूरं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धगुणागुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥१७८॥

सब विधि मल जारा बंध संसार टारा,
जग जिय हिताकरी उच्चता पाय सारी ।

मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुख पूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमात्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥१७९॥

पर-परिणतिखण्डं भेदबाधाविहण्डं,
शिवसदननिवासी नित्य स्वानन्दरासी ।
मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुख पूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धअखण्डस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥१८०॥

चित सुख विलसानं आकुलं भाव हानं,
निज अनुभव सारं द्वैत संकल्प टारं ।
मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुख पूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धचिदानन्दस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥१८१॥

परकरण निवारं भाव संभाव धारं,
निज अनुपम ज्ञानं सुखरूपं निधानं ।
मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुख पूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धसहजानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥१८२॥

विधि वश सब प्राणी हीन आधिक्य ठानी,
तिसकरण निमूला पाप रूपाधरूला ।
मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुख पूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धअछेद्यरूपाय नमः अर्घ्यं ॥१८३॥



जबलग परजाया भेद नाना धराया,
 इक शिवपद माहीं भेद आभास नाहीं।
 मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
 भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुख पूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धअभेदगुणाय नमः अर्घ्यं ॥१८४॥

अनुपम गुणधारी लोक संभाव टारी,
 सुरनर मुनि ध्यावैं सो नहीं पार पावैं।
 मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
 भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुख पूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धअनुपमगुणाय नमः अर्घ्यं ॥१८५॥

जिस अनुभव सरसै धार आनंद बरसै,
 अनुपम रस सोई स्वाद जासों न कोई।
 मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
 भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुख पूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धअमृततत्त्वाय नमः अर्घ्यं ॥१८६॥

सब श्रुत विस्तारा जास माहीं उजारा,
 यह निजपद जानो आत्म संभाव मानो।
 मन-वच-तन लाई पूजहों भक्ति भाई,
 भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुख पूरं॥

ॐ ह्रीं सिद्धश्रुतप्राप्ताय नमः अर्घ्यं ॥१८७॥

दोधक छन्द

जीव अजीव सबै प्रतिभासी, केवल जोति लहो तम नाशी।
 सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥

ॐ ह्रीं सिद्धकेवलप्राप्ताय नमः अर्घ्यं ॥१८८॥

चेतन रूप प्रदेश बिराजै, आकृति रूप अलिंग सु छाजै ।
सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसाकारनिराकाराय नमः अर्घ्य ॥१८९॥

नाहि गहैं पर आश्रित जानो, सो अवलम्ब बिना पद मानो ।
सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥

ॐ ह्रीं सिद्धनिरावलम्बाय नमः अर्घ्य ॥१९०॥

राग विषाद बसै नहिं जामें, योग वियोग भोग नहिं तामें ।
सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥

ॐ ह्रीं सिद्धनिष्कलङ्काय नमः अर्घ्य ॥१९१॥

ज्ञान प्रभाव प्रकाश भयो है, कर्म समूह विनाश भयो है ।
सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥

ॐ ह्रीं सिद्धतेजःसम्पन्नाय नमः अर्घ्य ॥१९२॥

आतम लाभ निजाश्रित पाया, द्वैत विभाव समूह नसाया ।
सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥

ॐ ह्रीं सिद्धआत्मसम्पन्नाय नमः अर्घ्य ॥१९३॥

मोतियादाम छन्द

चहूँ गति काय स्वरूप प्रत्यक्ष, शिवालय वास अनूप अलक्ष ।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांबुज को निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धगर्भवासाय नमः अर्घ्य ॥१९४॥

निजानन्द श्रीयुत ज्ञान अथाह, सुशोभित तृप्त भयो सुख पाय ।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांबुज को निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलक्ष्मीसन्तुष्टकाय नमः अर्घ्य ॥१९५॥



सुभाव निजातम अन्तर लीन, विभाव परातम आपद कीन ।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांबुज को निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धअन्तराकाराय नमः अर्घ्य ॥१९६॥

जहाँ लग द्वेष प्रवेश न होय, तहाँ लग सार रसायन होय ।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांबुज को निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसाररसाय नमः अर्घ्य ॥१९७॥

जिसो निरलेप हुए विषतुंब्य, तिसो जग अग्र निराश्रय लुंब्य ।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांबुज को निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धशिखरमण्डनाय नमः अर्घ्य ॥१९८॥

तिहूँ जग शीश बिराजित नित्य, शिरोमणि सर्व समाज अनित्य ।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांबुज को निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकाग्रनिवासिने नमः अर्घ्य ॥१९९॥

अकाय अरूप अलक्ष अवेद, निजातम लीन सदा अविछेद ।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांबुज को निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपगुप्तेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२००॥

अडिल छन्द

ऋषभ आदि चित धारी प्रथम दीक्षा धरी,
केवलज्ञान उपाय धर्म विधि उच्चारी ।
निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिभ्यो नमः अर्घ्य ॥२०१॥

निजही निज उरधार हेत सामर्थ है,
आत्मशक्तिकर व्यक्ति करणविधि व्यर्थ है।

निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२०२॥

साधन साधक साध्य भाव सबही गयो,
भेद अगोचर रूप महासुख संचयो।

निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२०३॥

तत्त्व प्रतीत निजातम रूप अनुभव कला,
पायो सत्यानन्द कुमारग दलमला।

निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिसम्यक्त्वगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२०४॥

वस्तु अनन्त धर्म प्रकाशक ज्ञान है,
एक पक्ष हट सहित निपट असुहान है।

निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२०५॥

वस्तु धर्म सामान्य ताहि अवलोकना,
शुद्ध निजातम धर्म ताहि नहीं लोपना।



निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनगुणेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२०६॥

अतुल अकम्प अखेद शुद्धपरिणति धरें,
जगतरूप व्यापार न इक छिन आदरें ।

निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यगुणेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२०७॥

षट्त्रिंशति गुण सूरि मोक्ष-फल पाइयो,
तातैं हम इन गुण करही जश गाइयो ।

निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिषट्त्रिंशतगुणेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२०८॥

पंचाचार आचार साध शिवपद लियो,
वास्तव में ये गुण निजमें परगट कियो ।

निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिपञ्चाचारगुणेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२०९॥

गुण समुदाय सरूप द्रव्य आतम महा,
परसों भिन्न अभेद निजातम पद लहा ।

निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यगुणेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२१०॥

वीतराग परिणति रचही सुखकार जू,
परमशुद्ध स्वयं सिद्ध भयो अनिवार जू।
निजस्वरूप थितिकरण हरणविधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायगुणेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२११॥

छन्न चञ्चला (एक ह्रस्व, एक दीर्घ)

आप सुख रूप हो सु, और सौख्यकार होत।
ज्युं घटादि को प्रकाश, कार है सुदीप जोत॥
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान।
मैं नमूं त्रिकाल एक ही, अभेद पक्ष मान॥

ॐ ह्रीं सूरिमंगलेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२१२॥

संस अंस भान वस्तु, भाव को प्रकाशमान।
ज्ञान इन्द्रिया अतीन्द्रिया, कहै उभय प्रमाण॥ सूरि धर्म॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानमंगलेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२१३॥

लोक उत्तमा सु वसु, कर्म को प्रसंग टार।
शुद्ध बुद्ध ऋद्धि पाय, लोक वेदना निवार॥ सूरि धर्म॥

ॐ ह्रीं सूरिलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२१४॥

लोकभीत सों अतीत, आदि अन्त एक रूप।
लोक में प्रसिद्ध सर्व, भाव को अनूप भूप॥ सूरि धर्म॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२१५॥

बीच में न अन्तराय, आप ही सुखाय धाय।
या अबाध धर्म को, प्रकाश में करै सहाय॥ सूरि धर्म॥

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२१६॥



मोह भार को निवार, शुद्ध चेतना सुधार।

येई वीर्यता अपार, लोक में प्रशंसकार ॥ सूरि धर्म ॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२१७॥

धर्म केवली महान, मोह अन्ध तेज भान।

सप्त तत्त्व को बखानि, मोक्ष-मार्ग को विधान ॥ सूरि धर्म ॥

ॐ ह्रीं सूरिकेवलधर्माय नमः अर्घ्य ॥२१८॥

शील आदि पूर भेद, कर्म के कलाप छेद।

आत्म-शक्ति को प्रकाश, शुद्ध चेतना विलास ॥ सूरि धर्म ॥

ॐ ह्रीं सूरितपेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२१९॥

लोक चाह की न दाह, द्वेष को प्रवेश नाह।

शुद्ध चेतना प्रवाह, वृद्धता धरै अथाह ॥ सूरि धर्म ॥

ॐ ह्रीं सूरिपरमतपेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२२०॥

मोह को न जोर जाय, घोर आपदा नसाय।

घोरतें तपो सु लोक, शीश जाय मुक्त पाय ॥ सूरि धर्म ॥

ॐ ह्रीं सूरितपोघोरगुणेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२२१॥

कामिनीमोहन छन्द मात्रा २०

वृद्धपर वृद्ध गुण गहन नित हो जहाँ,

शाश्वतं पूर्णता सातिशय गुण तहाँ।

सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,

मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥

ॐ ह्रीं सूरिघोरगुणपराक्रमेभ्यो नमः अर्घ्य ॥२२२॥

एक समभावसम और नहीं ऋद्धि है,

सर्व ही ऋद्धि जाके भये सिद्धि है।

सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,
मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥

ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२२३॥

योग के रोक से कर्म का रोक हो,
गुप्त साधन किये साध्य शिवलोक हो।

सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,
मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥

ॐ ह्रीं सूरिसुर्योगेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२२४॥

ध्यान बल कर्म के नाश के हेतु है,
कर्म को नाश शिववास ही देत है।

सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,
मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥

ॐ ह्रीं सूरिध्यानेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२२५॥

पञ्चधाचार में आत्म अधिकार है,
बाह्य आधार आधेय सुविकार है।

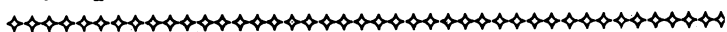
सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,
मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥

ॐ ह्रीं सूरिधातृभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२२६॥

सूर सम आप पर तेज करतार है,
सूरि ही मोक्षनिधि पात्र सुखकार है।

सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,
मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥

ॐ ह्रीं सूरिपात्रेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥२२७॥



बाह्य छत्तीस अन्तर अभेदात्मा,
आप थिर रूप है सूरि परमात्मा ।

सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,
मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणशरणाय नमः अर्घ्य ॥२२८॥

ज्ञान उपयोग में स्वस्थिता शुद्धता,
पूर्ण चारित्रता पूर्ण ही बुद्धता ।

सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,
मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्मगुणशरणाय नमः अर्घ्य ॥२२९॥

शरण दुःख हरण पर आप ही शर्ण हैं,
आपने कार्य में आप ही कर्ण हैं ।

सूरि सिद्धान्त के पारगामी भये,
मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥

ॐ ह्रीं सूरिशरणाय नमः अर्घ्य ॥२३०॥

दोहा

ज्यों कंचन बिन कालिमा उज्जल रूप सुहाय,
त्योंही कर्म-कलङ्क बिन निज स्वरूप दरशाय ।

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्य ॥२३१॥

भेदाभेद सुनय थकी एकहि धर्म विचार,
पायो सूरि सुबोध करि भवदधि करि उद्धार ।

ॐ ह्रीं सूरिधर्मस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्य ॥२३२॥



अन्य समस्त विकल्प तजि केवल निजपद लीन,
 पूरण ज्ञान स्वरूप यह पायो सूरी सुधीन ।

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥२३३॥

सुखाभास इन्द्रीजनित त्यागी सूरि महंत,
पूरण सुख स्वाधीन निज साध्य भये सुखवंत ।

ॐ ह्रीं सूरिसुखस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥२३४॥

अनेकांत तत्त्वार्थ के ज्ञाता सूरि महान,
निरावर्ण निजरूप लिखि पायो पद निरवाण ।

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥२३५॥

मोहादिक रिपु नाशिके सूरि महासामर्थ,
शिव भामिन भरतार नित रमै साधि निज अर्थ ।

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥२३६॥

पद्धती छन्द

निज निज आतम निष्पाप कीन, ते सन्त करैं पर पाप छीन ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरिमङ्गलशरणाय नमः अर्घ्यं ॥२३७॥

रत्नत्रय जीव सुभाव भाय, भवि पतित उधारण हो सहाय ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं ॥२३८॥

तपकर ज्यों कञ्चन अग्नि जोग, हैं शुद्ध निजातम पद मनोग ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरितपशरणाय नमः अर्घ्यं ॥२३९॥

एकाग्र चित्त चिन्ता निरोध, पावै अबाध शिव आत्म सोध ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरिध्यानशरणाय नमः अर्घ्य ॥२४०॥

केवलज्ञानादि विभूति पाई, है शुद्ध निरञ्जन पद सुखाइ ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरिसिद्धशरणाय नमः अर्घ्य ॥२४१॥

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोक माहिं, यानमदूजो सुखदाय नाहिं ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्य ॥२४२॥

आगत अतीत अरु वर्तमान, तिहुँ काल भव्य पावै निर्वाण ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिकालशरणाय नमः अर्घ्य ॥२४३॥

मधिअधोऊर्द्धतिहुँ जगत्माहिं, सबजीवनसुखकरऔरनाहिं ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मङ्गलाय नमः अर्घ्य ॥२४४॥

तिहुँ लोकमाहिं सुखकार आप, सत्यारथ मंगल हरण पाप ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमङ्गलशरणाय नमः अर्घ्य ॥२४५॥

उत्तममंगल परमार्थरूप, जग दुःख नासे शिव सुख स्वरूप ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मङ्गलशरणाय नमः अर्घ्य ॥२४६॥

शरणागतदुःखनाशनमहान, तिहुँ जगहितकारणसुखनिधान ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मङ्गलशरणाय नमः अर्घ्य ॥२४७॥

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोकपूज, शरणागत प्रतिपालन अदूज ।
शिवमग प्रगतन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमण्डलशरणाय नमः अर्घ्य ॥२४८॥

अव्यय अपूर्व सामर्थ युक्त, संसारातीत विमोह मुक्त ॥
शिवमग प्रगतन आदित्य सूरि, हम शरण गही आनन्द पूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिमण्डलशरणाय नमः अर्घ्य ॥२४९॥

त्रोटक छन्द

जिन रूप अनूप लखें सुख हो, जग में यह मन्त्र महान कहो ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिमन्त्रस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥२५०॥

जिम नागदेव वशमन्त्र विधि, भव वास हरण तुम नाम निधि ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिमन्त्रगुणाय नमः अर्घ्य ॥२५१॥

जगमोहित जीव न पावत हैं, यह मन्त्र सु धर्म कहावत हैं ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्माय नमः अर्घ्य ॥२५२॥

चिदरूप चिदातम भाव धरें, गुण सार यही अविबुद्ध वरें ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिचैतन्यस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥२५३॥

अविकार चिदातम आनन्द हो, परमातम हो परमानन्द हो ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करैं सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिचिदानन्दाय नमः अर्घ्य ॥२५४॥

निज ज्ञान प्रमाण प्रकाश करें, सुख रूप निराकुलता सु धरें ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करें सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानानन्दाय नमः अर्घ्य ॥२५५॥

धरि योग महा शम भाव गहैं, सुख राशि महा शिववास लहैं ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करें सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिशमभावाय नमः अर्घ्य ॥२५६॥

सम भाव महा गुण धारत हैं, निज आनन्द भाव निहारत हैं ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करें सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरितपोगुणानन्दाय नमः अर्घ्य ॥२५७॥

शिवसाधनकोविधिनाशकहा, विधिनाशनकोतपकर्णमहा ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करें सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरितपोगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥२५८॥

निज आत्म विषैं नित मगन रहैं, जग के सुख मूल न भूलि चहैं ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करें सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिहंसाय नमः अर्घ्य ॥२५९॥

वनवास उदास सदा जगतैं, पर आस न खास विलास रतैं ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करें सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिहंसगुणाय नमः अर्घ्य ॥२६०॥

निज नाम महागुण मन्त्र धरै, छिन-मात्र जपे भवि आश वरै ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करें सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिमन्त्रगुणानन्दाय नमः अर्घ्य ॥२६१॥

परमोत्तम सिद्ध पर्याय कहा, अति शुद्ध प्रसिद्ध सुखात्म महा ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करें सुखदा ॥

ॐ ह्रीं सूरिसिद्धानन्दाय नमः अर्घ्य ॥२६२॥



माला छन्द

शशि सन्ताप कलाप निवारण ज्ञान कला सरसै ।
मिथ्यातम हरि भवि आनन्द करि अनुभव भाव दरसै ॥
सूरि निज भेद कियो परसै ।
भये मुक्ति मैं नमूं शीश निज जोर जुगल करसै ॥

ॐ ह्रीं सूरिअमृतचनद्राय नमः अर्घ्यं ॥२६३॥

पूरण चन्द्र सरूप कलाधर ज्ञान सुधा वरसै ।
भवि चकोर चित चाहत नित मनु चरण जोति परसै ॥ सूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधाचन्द्रस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥२६४॥

जगजिय ताप निवारण कारण विलसे अन्तरसैं।
देव सुधा सम गुण निवाहकर सकल चराचरसैं ॥ सूरि. ॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधागुणाय नमः अर्घ्यं ॥२६५॥

जा धुनि सुनि संशय विनसै जिम ताप मेघ वरसै ।
मनहुँ कमल मकरन्द वृन्द अलि पाय सुधा सरसै ॥ सूरि ॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधाध्वनये नमः अर्घ्यं ॥२६६॥

अजर अमर सुखदाय मन ज्यों मयूर हरसै ।
गाजत घन बाजत ध्वनि सुनि मनु भाजन भय उरसै ॥ सूरि. ॥

ॐ ह्रीं सूरिअमृतध्वनिसूरूपाय नमः अर्घ्यं ॥२६७॥

चकोर छन्द

जो अपने गुण वा पर्याय, वरै निज धर्म न होत विनास ।
द्रव्य कहावत है सु अनन्त, स्वभाव धरै निज आत्म विलास ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम भये, सुख काम नमूं वसु जाम ॥

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्याय नमः अर्घ्यं ॥२६८॥

ज्यों शशि जोति रहै सियरा नित, ज्यों रवि जोति रहै नित ताप ।
ज्यों निज ज्ञान कला परि पूरण, राजत हो निज करण सु आप । सूरि ।

ॐ ह्रीं सूरिगुणद्रव्याय नमः अर्घ्य ॥२६९॥

हो अविनाश अनूपम रूप सु, ज्ञानमई नित केलि करान ।
पै न तजै मरजाद रहै, निज सिन्धु कलोल सदा परिमाण ॥ सूरि ।

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायाय नमः अर्घ्य ॥२७०॥

जे कुछु द्रव्य तने गुण है, सु समस्त मिलै गुण आतम माहीं ।
ताकरि द्रव्य सरूप कहावत है, अविनाश न मैं हम ताई ॥ सूरि ।

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥२७१॥

जा गुण में गुण और न हो, निज द्रव्य रहै नित और न ठौर ।
सो गुण रूप सदा निवसैं, हम पूजत हैं करके कर जोर ॥ सूरि ।

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥२७२॥

जो परिणाम धरैं तिनसों, तिनमें करहै घरतै तिस रूप ।
सो पर्याय उपाय बिना नित, आप विराजत हैं सु अनूप ॥ सूरि ।

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥२७३॥

हो नित ही परिणाम समय प्रति, सो उत्पाद कहो भगवान ।
सो तुम भाव प्रकाश कियो, निज यह गुणकी उत्पाद महान ॥ सूरि ।

ॐ ह्रीं सूरिगुणोत्पादाय नमः अर्घ्य ॥२७४॥

ज्यों मृत्तिका निज रूप न छाँडत, है घटमाँहि अनेक प्रकार ।
सो तुम जीव स्वभाव धरो नित, मुक्त भए जगवास निवार ॥ सूरि ।

ॐ ह्रीं सूरिध्रुवगुणोत्पादाय नमः अर्घ्य ॥२७५॥

जे जग में सब भाव विभाव, पराश्रित रूप अनेक प्रकार ।
ते सब त्याग भए शिवरूप, अबन्ध अमन्द महा सुखकार ॥ सूरि ।

ॐ ह्रीं सूरिव्ययगुणोत्पादाय नमः अर्घ्य ॥२७६॥

जे जग में षट्द्रव्य कहै, तिनमें इक जीव सु ज्ञान स्वरूप ।
और सभी बिन ज्ञान कहै, तुम राजत हो नित ज्ञात अनूप ॥ सूरि.

ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्वाय नमः अर्घ्य ॥२७७॥

ज्ञान सुभाव धरो नित ही, नहिं छाड़त हो कबहुँ निज वान ।
येही विशेष भयो सब सों नहिं, और न में गुण ये परधान ॥ सूरि.

ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्त्वगुणाय नमः अर्घ्य ॥२७८॥

हो कर्तादि अनेक सुभाव निजातम में पर में अनिवार ।
सो परको न लगार रहो, निज ही निज कर्म रहो सुखकार ॥ सूरि.

ॐ ह्रीं सूरिनिजस्वभावधारकाय नमः अर्घ्य ॥२७९॥

द्रव्य तथापि विभाव दोऊ विधि, कर्म प्रवाह बहै बिन आदि ।
ते सब एक भये थिर रूप, निजातक शुद्ध सुभाव प्रसादि ॥ सूरि.

ॐ ह्रीं सूरिआस्रवविनाशाय नमः अर्घ्य ॥२८०॥

मोदक छन्द

बन्धदऊ विधि के दुःख कारण, नाश कियो भव पार उतारण ।
सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर ॥

ॐ ह्रीं सूरिबन्धतत्त्वविनाशाय नमः अर्घ्य ॥२८१॥

सम्बर तत्व महा सुख देत हि, आस्रव रोकन को यह हेत हि ।
सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर ॥

ॐ ह्रीं सूरिसम्बरणगुणाय नमः अर्घ्य ॥२८२॥

ज्युँ मणि दीप अडोल अनूप ही, सम्बर तत्व निराकुल रूप ही ।
सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर ॥

ॐ ह्रीं सूरिसम्बरतत्त्वस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥२८३॥



सम्बर के गुण ते मुनि पावत, जो मुनि शुद्ध सुभाव सुध्यावत ।
सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर ॥

ॐ ह्रीं सूरिसम्बरगुणाय नमः अर्घ्यं ॥२८४॥

सम्बर धर्मतनी शिव पावहि, सम्बर धरम तहाँ दरशावहि ।
सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर ॥

ॐ ह्रीं सूरिसम्बरधर्माय नमः अर्घ्यं ॥२८५॥

दोहा

एक देश वा सर्व विधि, दोनों मुक्ति स्वरूप,
नमूं निरजरा तत्वसों, पायो सिद्ध अनूप ।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्वाय नमः अर्घ्यं ॥२८६॥

शुद्ध सुभाव जहाँ तहाँ, कहो कर्म को नाश,
एम निरजरा तत्व का, रूप कियो परकाश ।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥२८७॥

कोटि जन्म के विघन सब, सूखे तृण सम जान,
दहे निर्जरा अग्निसों, इह गुण है परधान ।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरागुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥२८८॥

निज बल कर्म खपाइये, कहो निर्जरा धर्म,
धर्मी सोई आत्मा, एक हि रूप सुपर्म ।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥२८९॥

समय-समय गुण श्रेणिका, खिरै कर्मबल ध्यान,
ये संबंध निवार करि, करै मुक्ति सुखपान ।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरानुबन्धाय नमः अर्घ्यं ॥२९०॥

अतुल शक्ति थिरभाव की, सो प्रगटी तुम माहिं,
यही निर्जरा रूप है नमूं भक्ति कर ताहि।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥२९१॥

सर्व कर्म के नाश बिन, लहै न शिव-सुखरास,
निश्चय तुमही निर्जरा, कियो प्रतीत प्रकाश।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराप्रतीताय नमः अर्घ्य ॥२९२॥

सकल कर्ममल नाशतें, शुद्ध निरञ्जन रूप,
ज्यों कंचन बिन कालिमा, राजै मोक्ष अनूप।

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षाय नमः अर्घ्य ॥२९३॥

द्रव्य भाव दोनों सुविधि, करै जगत् में वास,
द्वै विध बंध उखार के, भये मुक्त सुखरास।

ॐ ह्रीं सूरिबन्धमोक्षाय नमः अर्घ्य ॥२९४॥

पर विकल्प सुख-दुःख नहीं, अनुभव निज आनंद,
जन्म-मरण विधिनाशकर, राजत शिवसुख कंद।

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥२९५॥

जहाँ न दुःखको लेश है, उदय कर्म अनुसार,
सो शिवपद पायो महा, नमूं भक्ति उर धार।

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षगुणाय नमः अर्घ्य ॥२९६॥

जो शिव सुगुण प्रसिद्ध है, तिनसों नित प्रबंध,
जे जगवास विलास दुःख, तिनकूं नमूं अबंध।

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुबन्धाय नमः अर्घ्य ॥२९७॥

जैसी निज तन आकृति, तज कीनो शिववास,
ते तैसैं नित अबल हैं, ज्ञानानन्द प्रकाश।

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुप्रकाशाय नमः अर्घ्य ॥२९८॥



क्षयोपशम परिणाम कर, साधन न निज का रूप,
या निजपद में लीनता, ये ही गुप्त स्वरूप।

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुप्तये नमः अर्घ्य ॥२९९॥

इंद्रियजनित न दुःख जहाँ, सदा निजानंद रूप,
निर आकुल स्वाधीनता, वरतै शुद्ध स्वरूप।

ॐ ह्रीं सूरिपरमात्मस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥३००॥

रोला छन्द

सम्पूरण श्रुत सार निजातम बोध लहानो।
निज अनुभव शिव मूल भानु उपदेश करानो॥
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्युं रवि अँधियारा।
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥

ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नमः अर्घ्य ॥३०१॥

मुक्ति मूल है आत्म ज्ञान सोई श्रुत ज्ञानी।
तत्त्व ज्ञान सों लहै निजातम पद सुखदानी॥ शिष्यन॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षमण्डनाय नमः अर्घ्य ॥३०२॥

भवसागर तें भव्य जीव तारण अनिवारा।
तुम में यह गुण अधिक आप पायो तिस पारा॥ शिष्यन॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणेभ्यो नमः अर्घ्य ॥३०३॥

दर्शन ज्ञान स्वभाव धरो तद्रूप अनूपी।
हीनाधिक बिन अचल विराजत शुद्ध सरूपी॥ शिष्यन॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्य ॥३०४॥

निज गुण वा परयाय अखण्डित नित्य धरै है।
तिहुँकाल प्रति अन्य भाव नहीं ग्रहण करै है॥ शिष्यन॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्याय नमः अर्घ्य ॥३०५॥

सह भावी गुण सार जहाँ परभाव न लेषा ।

अगुरुलघु परणाम वस्तु सद्भाव विशेषा ॥ शिष्यन. ॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणपर्यायेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥३०६॥

गुण समुदायी द्रव्य याहितें निरगुण नाहीं ।

सो अनन्त गुण सदा विराजत तुम पद माहीं ॥ शिष्यन. ॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं ॥३०७॥

सत सरूप सब द्रव्य सधै नीके अबाध कर ।

सो तुम सत्य सरूप बिराजो द्रव्य भाव धर ॥ शिष्यन. ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३०८॥

जे जे हैं परनाम बिना परनामी नाहीं ।

परनामी परनाम एक ही है तुम माहीं ॥ शिष्यन. ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायाय नमः अर्घ्यं ॥३०९॥

अगुरुलघु पर्याय शुद्ध परनाम बखानी ।

निज सरूप में अन्तरगत श्रुतज्ञान प्रमानी ॥ शिष्यन. ॥

ॐ ह्रीं पाठकपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३१०॥

जगतवास सब पापमूल जिय को दुःखदाई ।

ताको नाशन हेत कहो शिव मूल उपाई ॥ शिष्यन. ॥

ॐ ह्रीं पाठकमङ्गलाय नमः अर्घ्यं ॥३११॥

जहाँ न दुःख को लेश सर्वथा सुख ही जानो ।

सोई मंगल गुण तुम में प्रत्यक्ष लखानो ॥ शिष्यन. ॥

ॐ ह्रीं पाठकमङ्गलगुणाय नमः अर्घ्यं ॥३१२॥

औरन मंगलकरण आप मंगलमय राजै ।

दर्शन कर सुखसार मिलै सब ही अघ भाजै ॥ शिष्यन. ॥

ॐ ह्रीं पाठकमङ्गलगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३१३॥

आदि अन्त अविरुद्ध शुद्ध मंगलमय मूरति ।

निज सरूप में बसै सदा परभाव विदूरित ॥ शिष्यन ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यमङ्गलाय नमः अर्घ्य ॥३१४॥

जितनी परिणति धरो सबहि मंगलमय रूपी ।

अन्य अवस्थि टार धार तद्रूप अनूपी ॥ शिष्यन ॥

ॐ ह्रीं पाठकमङ्गलपर्यायाय नमः अर्घ्य ॥३१५॥

निश्चय वा विवहार सर्वथा मंगलकारी ।

जग जीवन के विघन विनाशन सर्व प्रकारी ॥ शिष्यन ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यमङ्गलपर्यायाय नमः अर्घ्य ॥३१६॥

भेदाभेद प्रमाण वस्तु सर्वस्व बखानो ।

वचन अगोचर कहो तथा निर्दोष कहानो ॥ शिष्यन ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यगुणपर्यायमंगलाय नमः अर्घ्य ॥३१७॥

सब विशेष प्रतिमा समान मंगलमय भासे ।

निर्विकल्प आनन्दरूप अनुभूति प्रकाशे ॥ शिष्यन ॥

ॐ ह्रीं पाठकस्वरूपमंगलाय नमः अर्घ्य ॥३१८॥

पायता छन्द

निर्विघ्न निराश्रय होई, लोकोत्तम मंगल सोई ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकमंगलोत्तमाय नमः अर्घ्य ॥३१९॥

जगजीवन को हम देखा, तुम ही गुण सार विशेषी ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणलोकोत्तमाय नमः अर्घ्य ॥३२०॥

षट् द्रव्य रचित जग सारा, तुम उत्तम रूप निहारा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यलोकोत्तमाय नमः अर्घ्य ॥३२१॥

निज ज्ञान शुद्धता पाई, जिस करि यह है प्रभुताई।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाय नमः अर्घ्य ॥३२२॥

जग जीव अपूरण ज्ञानी, तुम ही लोकोत्तम प्राणी।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानलोकोत्तमाय नमः अर्घ्य ॥३२३॥

तुम पद निरभेद निहारा, तुम दर्शन भेद उधारा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनाय नमः अर्घ्य ॥३२४॥

हम सोवत हैं नित मोही, निरमोही लखें तुमको ही।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनलोकोत्तमाय नमः अर्घ्य ॥३२५॥

द्रगवन्त महा सुखकारा, तुम ज्ञान महा अविकारा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥३२६॥

निरशंस अनन्त अबाधा, निज बोधन भाव अराधा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वाय नमः अर्घ्य ॥३२७॥

सम्यक्त महा सुखकारी, निज गुण स्वरूप अधिकारी।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥३२८॥



निरखेद अछेद अभेदा, सुख रूप वीर्य निर्वेदा ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्याय नमः अर्घ्य ॥३२९॥

निज भोग कलेश न लेशा, यह वीर्य अनन्त प्रदेशा ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणाय नमः अर्घ्य ॥३३०॥

परनाम सुथिर निज माहीं, उपजै न कलेश कदाहीं ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपर्यायाय नमः अर्घ्य ॥३३१॥

द्रव्य भाव लहो तुम जैसो, पावै जगजन नहिं ऐसो ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यद्रव्याय नमः अर्घ्य ॥३३२॥

निज ज्ञान सुधारस पीवत, आनन्द सुभाव सु जीवत ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणपर्यायाय नमः अर्घ्य ॥३३३॥

अविशेष अनन्त सुभावा, तुम दर्शन माहिं लखावा ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायाय नमः अर्घ्य ॥३३४॥

एक बार लखे सबही को, तद्रूप निजातम ही को ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥३३५॥

सपरस आदिक गुण नाहीं, चिद्रूप निजातम माहीं ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानद्रव्याय नमः अर्घ्य ॥३३६॥

शरणागत दीनदयाला, हम पूजत भाव विशाला ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३३७॥

जिन शरण गही शिव पायो, इम शरण महा गुण पायो ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३३८॥

अनुभव निज बोध करावै, यह ज्ञान शरण कहलावै ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३३९॥

द्रग मात्र तथा सरधाना, निश्चय शिववास कराना ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३४०॥

निरभेद स्वरूप अनूपा, है शर्ण तुही शिव भूपा ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३४१॥

निज आत्म-स्वरूप लखाया, इह कारण शिवपद पाया ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३४२॥

आतम-स्वरूप सरधाना, तुम शरण गही भगवाना ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३४३॥

निज आतम साधन माहीं, पुरुषारथ छूटै नाहीं ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३४४॥



आतम शक्ति प्रगटावै, तब निज स्वरूप जिय पावै ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३४५॥

परमातम वीर्य महा है, पर त्रिमित न लेश तहाँ है ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपरमात्मशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३४६॥

श्रुत द्वादशांग जिनवानी, निश्चय शिववास करानी ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्वादशांगशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३४७॥

दश पूर्व महा जिनवानी, निश्चय अघहर सुखदानी ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदशपूर्वाङ्गाय नमः अर्घ्यं ॥३४८॥

दश चार पूर्व जिनवानी, निश्चय शिववास करानी ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचतुर्दशपूर्वाङ्गाय नमः अर्घ्यं ॥३४९॥

निज आत्म चर्ण प्रगटावै, आचार अंग कहलावै ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकाचाराङ्गाय नमः अर्घ्यं ॥३५०॥

रेखता छन्द

विविध शङ्कादि तम टारी, निरन्तर ज्ञान आचारी ।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाचाराय नमः अर्घ्यं ॥३५१॥



पराश्रित भाव विनशाया, सुथिर निजरूप दर्शाया ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकतपसाचाराय नमः अर्घ्यं ॥३५२॥

मुक्तपद दैन अनिवारी, सर्व बुध चरण आचारी ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयाय नमः अर्घ्यं ॥३५३॥

शुद्ध रत्नत्रय धारी, निज्जातम रूप अविकारी ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयसहायाय नमः अर्घ्यं ॥३५४॥

धौव्य पञ्चमगति पाई, जन्म फुनि मरण छुटकाई ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकध्रुवसंसाराय नमः अर्घ्यं ॥३५५॥

अनूपम रूप अधिकाई, असाधारण स्वपद पाई ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३५६॥

आन तुम सम न गुण होई, कहो एकत्व सोई ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वगुणाय नमः अर्घ्यं ॥३५७॥

निजानन्द पूर्ण पद पाया, सोई परमात्म कहलाया ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वपरमात्मने नमः अर्घ्यं ॥३५८॥

उच्चगत मोक्ष का दाता, एक निज-धर्म विख्याता ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वधर्माय नमः अर्घ्यं ॥३५९॥



जो तुम चेतनता परकाशी, न पावै ऐसी जगवासी।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वचेतनाय नमः अर्घ्यं ॥३६०॥

ज्ञान दर्शन स्वरूपी हो, असाधारण अनूपी हो।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वचेतनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३६१॥

गहै नित निज चतुष्टय को, मिलै कबहूँ नहीं परसों।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वद्रव्याय नमः अर्घ्यं ॥३६२॥

स्वपद अनुभूति सुख रासी, चिदानन्द भाव परकासी।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥३६३॥

अन्त पुरुषार्थ साधक हो, जन्म मरणादि बाधक हो।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसिद्धसाधकाय नमः अर्घ्यं ॥३६४॥

स्वआतम ज्ञान दरशाय, ये पूरण ऋद्धि पद पाय।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकऋद्धिपूर्णाय नमः अर्घ्यं ॥३६५॥

सकल विधि मूर्छा त्यागी, तुम्ही निरग्रन्थ बडभागी।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकनिर्ग्रन्थाय नमः अर्घ्यं ॥३६६॥

निजाश्रित अर्थ जा नाहीं, अबाधित अर्थ तुम माहीं।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकअर्थविधानाय नमः अर्घ्यं ॥३६७॥



न फिर संसार पद पाया, अपूर्व बन्ध विनशाया।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसंसारानुबन्धाय नमः अर्घ्यं ॥३६८॥

आप कल्याणमय राजो, सकल जगवास दुःख त्याजो।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणाय नमः अर्घ्यं ॥३६९॥

स्वपर हितकार गुणधारी, परम कल्याण अविकारी।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणगुणाय नमः अर्घ्यं ॥३७०॥

अहित परहार पद जो है, परम कल्याण तासो है।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणद्रव्याय नमः अर्घ्यं ॥३७१॥

स्वसुख द्रव्याश्रये माहीं, जहाँ कछु पर निमित्त नाहीं।

पूर्णं श्रुतज्ञानं बलं पाया, नमूं सत्यार्थं उवङ्गाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणद्रव्याश्रये नमः अर्घ्यं ॥३७२॥

जो है सो है अमित काला, अन्यथा भाव विधि टाला।

पूर्णं श्रुतज्ञानं बलं पाया, नमं सत्यार्थं उवङ्गाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकतत्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं ॥३७३॥

रहै नित चेतना माही, कहैं चिद्रूप मुनि ताही।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचिद्रूपाय नमः अर्घ्यं ॥३७४॥

सर्वथा ज्ञान परिणामी, प्रगट है चेतना नामी।

पूर्णं श्रुतज्ञानं बलं पायां, नमूं सत्यार्थं उवङ्गाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचेतनागुणाय नमः अर्घ्यं ॥३७५॥

नहीं अन्यत्व भेदा है, गुणी गुण निरविछेदा है।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचेतनागुणाय नमः अर्घ्यं ॥३७६॥

घटाघट वस्तु परकाशी, धरे हैं जोति प्रतिभाषी।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकज्योतिप्रकाशाय नमः अर्घ्यं ॥३७७॥

वस्तु सामान्य अवलोका, है युगपत दर्श सिद्धोंका।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनचेतनाय नमः अर्घ्यं ॥३७८॥

विशेषण युक्त साकारा, ज्ञान दुति में प्रगट सारा।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानचेतनाय नमः अर्घ्यं ॥३७९॥

ज्ञानसों जीव नामी है, भेद समवाय स्वामी है।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥३८०॥

चराचर वस्तु स्वाधीनता, एक ही समय लखलीना।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यचेतनाय नमः अर्घ्यं ॥३८१॥

सकल जीवों के सुख कारन, सरन तुम ही हो अनिवारन।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसकलशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३८२॥

तुम हो त्रयलोक हितकारी, अछूते शरण बलिहारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकत्रैलोक्यशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३८३॥



ॐ ह्रीं पाठकत्रिकालशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३८४॥

ॐ ह्रीं पाठकत्रिमंगलशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३८५॥

ॐ ह्रीं पाठकलोकशरणाय नमः अर्घ्यं ॥३८६॥

ॐ ह्रीं पाठकआश्रववेदाय नमः अर्घ्यं ॥३८७॥

ॐ ह्रीं पाठकआश्रवविनाशाय नमः अर्घ्य ॥३८८॥

ॐ ह्रीं पाठकआश्रवोपदेशछेदकाय नमः अर्घ्य ॥३८९॥

ॐ ह्रीं पाठकबन्धमुक्ताय नमः अर्घ्यं ॥३९०॥

ॐ ह्रीं पाठकबन्धान्तकाय नमः अर्घ्यं ॥३९१॥



आश्रव कर्म दुःखदाई, रुके सम्बर ये सुखदाई।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्बराय नमः अर्घ्यं ॥३९२॥

सर्वथा जोग विनसाया, स्वसम्बर रूप दरशाया।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्बरस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३९३॥

भाव में कलुषता नाहीं, भये सम्बर करण ताहीं।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्बरकरणाय नमः अर्घ्यं ॥३९४॥

कुपरणति राग रूष नाशन, निरजरा रूप प्रतिभासन।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३९५॥

कामदेव द्राह जग सारा, आप तिस भस्म कर डारा।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककन्दर्पछेदकाय नमः अर्घ्यं ॥३९६॥

चहूँ विधि बन्ध विधि चूरा, ये विस्फोटक कहो पूरा।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककर्मविस्फोटकाय नमः अर्घ्यं ॥३९७॥

दऊ विधि कर्म का खोना, सोई है मोक्ष का होना।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षाय नमः अर्घ्यं ॥३९८॥

द्रव्य अर भाव मल टारा, नमूं शिवरूप सुखकारा।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३९९॥

अरति रति पर निमित्त खोई, आत्म रति है प्रगट सोई।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकआत्मरतये नमः अर्घ्यं ॥४००॥

लोलतरङ्ग छन्द तथा बड़ी चौपाई

अठाईस मूल गुणधारी, सो सब साधु बरैं शिव नारी।

साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं ॥४०१॥

मूल तथा सब उत्तर गाये, ये गुण पालत साधु कहाये।

साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥४०२॥

साधुन के गुणा साधुहि जाने, होत गुणी गुण ही परमाने ।

साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥४०३॥

नेम थकी शिववास करे जो, द्रव्य थकी शिवरूप करै जो ।

साधु भये शिव साधन हारे, सो तूम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुद्रव्याय नमः अर्घ्यं ॥४०४॥

जीव सदा चित भाव विलासी, आप ही आप सधै शिव राशी ।

साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं ॥४०५॥

ज्ञानमई निज ज्योति प्रकाशी, भेद विशेष सबै प्रति भासी ।

साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानगुणाय नमः अर्घ्यं ॥४०६॥

एकहि बार लखाय अभेदा, दर्शन को सब रोग विछेदा ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शनाय नमः अर्घ्य ॥४०७॥

आपहि साधन साध्य तुम्हीं हो, एक अनेक अभेद तुम्हीं हो ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यभावाय नमः अर्घ्य ॥४०८॥

चेतनता निज भाव न छारै, रूप स्पर्शन आदि धारै ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥४०९॥

जो उतपाद भयो इकबारा, सो निरबार रहै अविकारा ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्याय नमः अर्घ्य ॥४१०॥

है परिनाम अभिन्न प्रणामी, सो तुम सोध भये शिवगामी ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यपर्याय नमः अर्घ्य ॥४११॥

जो गुण वा परियाय धरो हो, सो निज माहीं अभिन्न धरो हो ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नमः अर्घ्य ॥४१२॥

मंगलमय तुम नाम कहावैं, लेतहि नाम सु पाप नसावैं ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुमङ्गलाय नमः अर्घ्य ॥४१३॥

मंगल रूप अनूपम सोहै, ध्यान किये नित आनन्द हो है ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुमङ्गलस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥४१४॥

पाप मिटै तुम शरण गहेतें, मंगल शरम कहाय लहैतें ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुमङ्गलशरणाय नमः अर्घ्य ॥४१५॥

देखत ही सब पाप नसे है, आनन्द मंगलरूप लसे है ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुमङ्गलदर्शनाय नमः अर्घ्य ॥४१६॥

जानत हैं तुमको मुनि नीके, पाप कलाप मिटै तिनहीके ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुमङ्गलज्ञानाय नमः अर्घ्य ॥४१७॥

ज्ञानमई तुम हो गुणरासा, मंगल जोति धरै रवि कासा ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानगुणमङ्गलाय नमः अर्घ्य ॥४१८॥

मंगल वीर्य तुम्हीं दर्शाया, काल अनन्ता पाप गलाया ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यमङ्गलाय नमः अर्घ्य ॥४१९॥

वीर्य महा सुखरूप निहारा, पाप बिना नित ही अविकारा ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यमङ्गलस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥४२०॥

मंगल वीर्य महा गुणधामी, निज पुरुषार्थ हि मोक्ष लहामी ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यपरममङ्गलाय नमः अर्घ्य ॥४२१॥

वीर्य स्वाभाविक पूर्ण तिहारा, कर्म नशाय भये भवपारा ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यद्रव्याय नमः अर्घ्य ॥४२२॥

तीन हि लोक लखे सब जोई, आप समान न उत्तम कोई ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमाय नमः अर्घ्य ॥४२३॥

लोक सभी विधि बन्धन माहीं, तुम सम रूप धरे ते नाहीं ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणाय नमः अर्घ्य ॥४२४॥

लोकन के गुण पाप कलेशा, उत्तम रूप नहीं तुम जैसा ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥४२५॥

लोक अलोक निहारक नामी, उत्तम द्रव्य तुम्हीं अभिरामी ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्याय नमः अर्घ्य ॥४२६॥

लो सभी षट्द्रव्य रचाया, उत्तम द्रव्य तुम्हीं हम पाया ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥४२७॥

ज्ञानमई चित उत्तम सोहै, ऐसो लोक विषैं अरु को है ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्य ॥४२८॥

ज्ञान स्वरूप सुभाव तिहारा, उत्तम लोक कहै इम सारा ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥४२९॥

देखन में कछु आड न आवैं, लोक तभी सब उत्तम गावैं ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानदर्शनाय नमः अर्घ्य ॥४३०॥

देखन जानन भाव धरो हो, उत्तम लोक के हेतु गहे हो ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानदर्शनाय नमः अर्घ्य ॥४३१॥

जाकर लोक शिखरपद धारा, उत्तम धर्म कहो जग सारा ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्माय नमः अर्घ्य ॥४३२॥

धर्म स्वरूप निजातम माँही, उत्तम लोक विषैं ठहराई ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥४३३॥

अन्य सहाय न चाहत जाको, उत्तम लोक कहै बल ताको ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्य ॥४३४॥

उत्तम वीर्य सरूप निहारा, साधन मोक्ष कियो अनिवारा ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥४३५॥

पूरण आत्म कला परकाशी, लोक विषैं अतिशय अविनाशी ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमअतिशयाय नमः अर्घ्य ॥४३६॥

राग विरोध न चेतन माँही, ब्रह्म कहो जग उत्तम ताही ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानाय नमः अर्घ्य ॥४३७॥

ज्ञान सरूप अकम्प अडोला, पूरण ब्रह्म प्रकाश अटोला ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥४३८॥



राग विरोध जयो शिवगामी, आत्म अनातम अन्तरजामी ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमजिनाय नमः अर्घ्य ॥४३९॥

भेद बिना गुण भेद धरो हो, सांख्य कुवादिक पक्ष हरो हो ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणसम्पन्नाय नमः अर्घ्य ॥४४०॥

साधत आतम पौरुष पाई, उत्तम पुरुष कहो जग ताई ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमपुरुषाय नमः अर्घ्य ॥४४१॥

साधु समान न दीनदयाला, शरम गहै सुख होत विशाला ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्य ॥४४२॥

जे जग साधू शरण गही है, ते शिव आनन्द लब्धि लही है ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणशरणाय नमः अर्घ्य ॥४४३॥

साधुन के गुण द्रव्य चितारे, होत महासुख शरण उभारे ।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारै ॥

ॐ ह्रीं साधुगुणद्रव्यशरणाय नमः अर्घ्य ॥४४४॥

लावनी छन्द

तुम चितवत वा अवलोकत वा सरधानी,
इम शरण गहै पावै निश्चय शिवरानी ।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ।

ॐ ह्रीं साधुदर्शनशरणाय नमः अर्घ्य ॥४४५॥

तुम अनुभवकरि शुद्धोपयोगमन धारा,

यह ज्ञान शरण पायो निश्चय अविकारा।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,

मैं नमं साधूसम सिद्ध अकम्प बिराजै।

ॐ ह्रीं साधुज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं ॥४४६॥

निज आत्म रूप में दृढ़ संस्था तुम पाई,

स्थिर रूप सदा निवसों शिववास कराई।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,

मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुं आत्मशरणाय नमः अर्घ्यं ॥४४७॥

तुम निराकार निरभेद अछेद अनूपा,

तुम निरावरण निरद्वन्द्व स्वदर्श स्वरूपा ।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,

मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ।।।

ॐ ह्रीं साधुदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥४४८॥

तुम परम पूज्य परमेश परमपद पाया,

हम शरण गही पूजैं नित मन-वच-काया ।

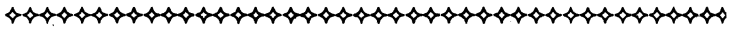
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,

मैं नमं साधूसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमात्मशरणाय नमः अर्घ्यं ॥४४९॥

तुम मन इन्द्री व्यापार जीत स० अभीता,

हम शरण गही मनु आज कर्म रिपु जीता।



निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुनिजात्मशरणाय नमः अर्घ्यं ॥४५०॥

भववास दुःखी जे शरम गहैं तुम मन में,
तिनको अवलम्ब उभारो भयहर छिनमें।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं ॥४५१॥

दृगबोध अनन्तानन्त धरो निरखेदा,
तुम बल अपार शरणागति विघन विछेदा।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यात्मशरणाय नमः अर्घ्यं ॥४५२॥

निज ज्ञानानन्दी महा लक्ष्मी सोहै,
सुर असुरन में नित परम मुनी मन मोहै।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीअलंकृताय नमः अर्घ्यं ॥४५३॥

भववास महादुःखरास ताहि विनशाया,
अति क्षीन लीन स्वाधीन महासुख पाया।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीप्रणीताय नमः अर्घ्यं ॥४५४॥

त्रिभुवन का ईश्वरपना तुम्हीं में पाया,
 त्रिभुवन के पातक हरौ नमो रवि छाया।
 निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
 मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै॥

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीरूपाय नमः अर्घ्यं ॥४५५॥

तुम काल अनन्तानन्त अबाध विराजो,
 पर निमित विकार निवार सुनित्य सुछाजो।
 निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
 मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै॥

ॐ ह्रीं साधुध्रुवाय नमः अर्घ्यं ॥४५६॥

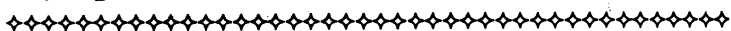
तुम क्षायक लब्धि प्रभाव परम गुणधारी,
 निवसो निज आनन्द मांहि अचल अविकारी।
 निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
 मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै॥

ॐ ह्रीं साधुगुणध्रुवाय नमः अर्घ्यं ॥४५७॥

तेरम चौदम गुण थान द्रव्य है जैसो,
 रहै काल अनन्तानन्त शुद्धता तैसो।
 निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
 मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणध्रुवाय नमः अर्घ्यं ॥४५८॥

फिर जन्म-मरण नहीं होय जन्म वो पाया,
 संसार विलक्षण निज अपूर्व पद पाया।



निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्योत्पादाय नमः अर्घ्यं ॥४५९॥

सूक्ष्म अलब्धि पर्याप्त निगोद शरीरा,
ते तुच्छ द्रव्य कर नाश भये भव तीरा।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यव्ययाये नमः अर्घ्यं ॥४६०॥

रागादि परिग्रह टारि तत्व सरधानी,
इम साधु जीव नित साधत शिव सुखदानी।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुजीवाय नमः अर्घ्यं ॥४६१॥

स्वसंवेदन विज्ञान परम अमलाना,
तज इष्ट अनिष्ट विकल्प जाल सुखसाना।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुजीवगुणाय नमः अर्घ्यं ॥४६२॥

देखन जानन चेतन सुरूप अविकारी,
गुण गुणी भेद में अन्य भेद व्यभिचारी।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुचेतनगुणाय नमः अर्घ्यं ॥४६३॥



ॐ ह्रीं साधूचेतनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥४६४॥

ॐ ह्रीं साधुचेतनाय नमः अर्घ्यं ॥४६५॥

ॐ ह्रीं साधुपरमात्मप्रकाशाय नमः अर्घ्यं ॥४६६॥

ॐ ह्रीं साधुज्योतिः स्वरूपाय नमः अर्घ्यं ॥४६७॥

ज्यों घटपदादि दीपक की ज्योति दिखावै,
 त्यों ज्ञान ज्योति सब भिन्न-भिन्न दरशावै।



निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुज्योतिः प्रदीपाय नमः अर्घ्यं ॥४६८॥

सामान्यरूप अवलोकन युगपत सारा,
तुम दर्शन ज्योति प्रदीप हरै अँधियारा।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शनज्योतिः प्रदीपाय नमः अर्घ्यं ॥४६९॥

साकार रूप सु विशेष ज्ञान द्युति माहीं,
युगपत कर प्रतिबिम्बित वस्तु प्रगटाई।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानज्योतिः प्रदीपाय नमः अर्घ्यं ॥४७०॥

जे अर्थ जन्य कहैं ज्ञान वो झूठे वादी,
है स्वपर प्रकाशक आतम ज्योति अनादी।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुआत्मज्योतिषे नमः अर्घ्यं ॥४७१॥

जे तारण तरण जिहाजा थित भवसागर,
हम शरण गहैं पावैं शिववास उजागर।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुशरणाय नमः अर्घ्यं ॥४७२॥

सामान्य रूप सब साधु मुक्ति मग साथै,
हम पावैं निज पद नेमरूप आराधैं ।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुसर्वशरणाय नमः अर्घ्यं ॥४७३॥

त्रस नाड़ी ही मैं तत्त्वज्ञान सरधानी,
ताकर साथै निश्चय पावैं शिवरानी ।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकशरणाय नमः अर्घ्यं ॥४७४॥

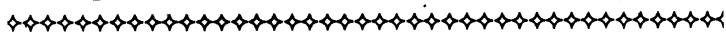
तिहुँलोक करन हित वरते नित उपदेशा,
हम शरम गही मेटो भववास कलेशा ।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुत्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं ॥४७५॥

संसार विषम दुःखकार असार अपारा,
तिस छेदक वेदक सुखदायक हितकारा ।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुसंसारछेदकाय नमः अर्घ्यं ॥४७६॥

यद्यपि इक क्षेत्र अवगाह अभिन्न विराजे,
तद्यपि निज सत्ता माहिं भिन्नता साजै ।



निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वाय नमः अर्घ्य ॥४७७॥

यद्यपि सामान्य सरूप सु पूरण ज्ञानी,
तद्यपि निज आश्रय भाव भिन्न परनामी।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वगुणाय नमः अर्घ्य ॥४७८॥

है साधारण एकत्व द्रव्य तुम माहीं,
तुम सम संसार मँझार और कोऊ नाहीं।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वद्रव्याय नमः अर्घ्य ॥४७९॥

यद्यपि सबही हो असंख्यात परदेशी,
तद्यपि निज में निजरूप स्वद्रव्य सुदेशी।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥४८०॥

सामान्य रूप सब ब्रह्म कहावै ज्ञानी,
तिनमें तुम वृषभ सु परम ब्रह्म परणामी।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमब्रह्मणे नमः अर्घ्य ॥४८१॥

सापेक्ष एकही कहै सु नय विस्तारा,
तुम भाव प्रगट कर कहै सुनिश्चय कारा।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमस्याद्वादाय नमः अर्घ्य ॥४८२॥

है ज्ञान निमित्त यह वचन जाल परमाणा,
वाचक वाच्य संयोग ब्रह्म कहलाना।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुशुद्धब्रह्मणे नमः अर्घ्य ॥४८३॥

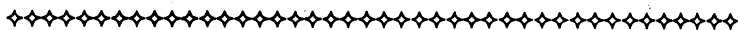
षट् द्रव्य निरूपण करै सोई आगम हो,
तिसके तुम मूल निधान सु परमागम हो।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं परमागमाय नमः अर्घ्य ॥४८४॥

तीर्थेश कहै सर्वज्ञ दिव्य धुनि माहीं,
तुम गुण अपार इम कहो जिनागम ताहीं।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुजिनागमाय नमः अर्घ्य ॥४८५॥

तुम नाम प्रसिद्ध अनेक अर्थ का बाँची,
ताके प्रबोधसों हो प्रतीत मन साँची।



निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुअनेकार्थाय नमः अर्घ्य ॥४८६॥

लोभादिक मेटे बिन न सौचता होई,
है वृथा तीर्थ स्नान करो भी कोई ।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुशौचाय नमः अर्घ्य ॥४८७॥

है मिथ्या मोह प्रबल मल इनका खोना,
सो शुद्ध सौच गुम यही न तनका धोना ।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुशुचित्वगुणाय नमः अर्घ्य ॥४८८॥

इक देश कर्ममल नाश पवित्र कहायो,
तुम सर्व कर्ममल नाशि परम पद पायो ।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुपवित्राय नमः अर्घ्य ॥४८९॥

तुम रहो बन्धसों दूरि एकान्त सुखाई,
ज्यों नभ अलिप्त सब द्रव्य रहो तिस माहीं ।

निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधुसम सिद्ध अकम्प बिराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुविमुक्ताय नमः अर्घ्य ॥४९०॥



परम शुद्ध उपयोग रूप वरते जहाँ,
छिन में अनन्तानन्त कर्म खिर है तहाँ।



मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुनिर्जराविमलाय नमः अर्घ्यं ॥४९५॥

सकल विभाव अभाव निरजरा करत हैं,
ज्यों रवि तेज प्रचण्ड सकलतम हरत हैं ।

मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुनिर्जरागुणाय नमः अर्घ्यं ॥४९६॥

जे संसार निमित ते सब दुःखरूप हैं,
तुम निमित्त शिव कारण शुद्ध अनूप हैं ।

मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुनिमित्तमुक्ताय नमः अर्घ्यं ॥४९७॥

संशय रहित सुनिश्चय सन्मतिदाय हो,
मिथ्या भ्रमतम नाशन सहज उपाय हो ।

मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुबोधधर्माय नमः अर्घ्यं ॥४९८॥

अति विशुद्ध निजज्ञान स्वभाव सुधरत हो,
भव्यन के संशय आदिक तम हरत हो ।

मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुबोधगुणाय नमः अर्घ्यं ॥४९९॥

अविनाशी अविकार परम शिवधाम हो,
पायो सो तुम सुगत महा अभिराम हो।
मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुसुगतिभावाय नमः अर्घ्यं ॥५००॥

जासो परे न और जन्म वा मरण है,
सो उत्तम उत्कृष्ट परम गति को लहौ।
मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमगतिभावाय नमः अर्घ्यं ॥५०१॥

पर निमित्त रागादिक जे परनाम हैं,
इन विभावसों रहित साधु शुभ नाम हैं।
मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुविभावरहिताय नमः अर्घ्यं ॥५०२॥

निज सुभाव सामर्थ्य सु प्रभुता पाइयो,
इन्द्र फनेन्द्र नरेन्द्र शीश निज नाइयो।
मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुस्वभावसहिताय नमः अर्घ्यं ॥५०३॥

कर्म बन्धसों रहित सोई शिवरूप हैं,
निवसैं सदा अबन्ध स्वशुद्ध अनूप हैं।

मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥५०४॥

सकल द्रव्य पर्याय विषैं स्वज्ञान हो,
सत्यारथ निश्चल निश्चय परमाण हो।
मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमानन्दाय नमः अर्घ्य ॥५०५॥

तीन लोक के पूज्य यतीजन ध्यावहीं,
कर्म-शत्रु को जीत अहं पद पावहीं।
मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुअहंतस्वरूपाय नमः अर्घ्य ॥५०६॥

परम इष्ट शिव साधत सिद्ध कहाइयो,
तीन लोक परमेष्ठि परमपद पाइयो।
मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमेष्ठिने नमः अर्घ्य ॥५०७॥

शिव मारग प्रगटावन कारण हो तुम्हीं,
भविजन पतित उधारन तारन हो तुम्हीं।
मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं,
नमत निरन्तर हमहूँ कर्म रिपु को दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुसूरिप्रकाशिने नमः अर्घ्य ॥५०८॥

अर्घ्यं ॥५१२॥



अडिल छन्द

पञ्च परम गुरु नाम विशेषण को धरैं,
तीन लोक में मंगलमय आनन्द करैं ।
पूरण कर थुति नाम अन्त सुख कारणं,
पूजूं हूँ युत भाव सु अर्थ उतारणं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशाधिकश्चशतगुणयुतसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घं ॥
यहां ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः १०८ बार जपना चाहिए ।

जयमाला

रत्नत्रय भूषित महा, पञ्च सुगुरु शिवकार ।
सकल सुरेन्द्र नमैं नमूं, पाऊँ सो गुण सार ॥

पद्मडि छन्द

जय महामोह दल दलन सूर, जय निर्विकल्प आनन्दपूर ।
जय द्वै विधि कर्म विमुक्त देव, जय निजानन्द सवाधीन एव ॥
जय संशयादि भ्रम तम निवार, जय स्वामि भक्ति द्युति थुति अपार ।
जय युगपत सकल प्रत्यक्ष लक्ष, जय निरावरण निर्मल अनक्ष ॥
जय जय जय सुखसागर अगाध, निरद्वन्द्व निरामय निर उपाध ।
जयमन-वच-तनसबव्यापारनाश, जयथिरसरूपनिजपदप्रकाश ॥
जय परनिमित्त सुख-दुःख निवार, निरलेप निराश्रय निर्विकार ।
निज में पर को पर में न आप, परवेश न हो नित निर मिलाप ॥
तुम परम धरम आराध्य सार, निज सम करि कारण दुर्निवार ।
तुम पञ्च परम आचार युक्त, नित भक्त वर्ग दातार मुक्त ॥

एकादशांग सर्वांग पूर्व, स्वै अनुभव पायो फल अपूर्व ।
अन्तर बाहिर परिग्रह नसाय, परमारथ साधू पद लहाय ॥
हम पूजत नित उर भक्ति ठान, पावें निश्चय शिवपद महान ।
ज्योशशिकिरणावलि सियरपाय, मणिचन्द्रकान्तिद्रवता लहाय ॥

यत्तानन्द छन्द

जय भव भयहारं बन्धविडारं, सुख सारं शिव करतारं ।
नित सन्त सु ध्यावत पाप नसावत, पावत पद निज अविकारं ॥
ॐ ह्रीं अहं द्वादशाधिकपञ्चशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घम् ।

सोरठा

तुम गुण अमल अपार, अनुभवतें भव भय नशै ।
सन्त सदा चित धार, शान्ति करो भवतप हरो ॥

इत्याशीर्वादः ॥ इति सप्तमी पूजा समाप्त ॥



अष्टमी पूजा १०२४ गुण सहित

छप्पय छन्द

ऊरध अधो सुरेफ बिन्दु हङ्कार बिराजे ।

अकारादि स्वर लिप्तकर्णिका अन्त सु छाजे ॥

वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व सन्धिधर ।

अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर ॥

फुनि अन्त हीं वेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरिनागको ।

हैं केहरिसम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिनः १०२४ गुणसहित
बिराजमान अत्र अवतर अवतर संवौषद् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः
ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग ।

सिद्धचक्र सो थापहुँ, मिटैं उपद्रव योग ॥

इति यन्त्र स्थापनम् ।

अथाष्टकं - गीता छन्द

निज आत्मरूप सु तीर्थ मग नित, सरस आनन्द धार हो ।

नाशै त्रिविध मल सकल दुःखमय, भव जलधि के पार हो ॥

यातै उचित ही है जु तुम पद, नीरसों पूजा करूँ ।

इक सहस अरु चौबीस गुण गण, भावयुत मन में धरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसंयुक्ताय जन्मजरामृत्युविनाशाय जलं ॥१॥

शीतल सूरूप सुगन्ध चन्दन, एक भव तप नास ही ।
सो भव्य मधुकर प्रिय सु यह, नहिं और ठौर सु बास ही ॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, मलयसों पूजा करूँ ॥ इक. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसंयुक्ताय संसारतापविनाशनाय चंदनं. ॥२॥
अक्षय अबाधित आदि अन्त, समान स्वच्छ सुभाव हो ।
ज्यों तुष बिना तन्दुल दिपै त्यूं, निखिल अमल अभाव हो ॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, अक्षतं पूजा करूँ ॥ इक. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसंयुक्ताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं. ॥३॥
गुण पुष्पमाल विशाल तुम, भवि कण्ठ पहिरैं भावसों ।
जिनके मधुप मन रसिक लुब्धित, रमत नित प्रति चावसों ॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, पुष्पसों पूजा करूँ ॥ इक. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसंयुक्ताय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं. ॥४॥
शुद्धात्म सरस सुपाक मधुर, समान और न रस कहीं ।
ताके हो आस्वादी तुम सम, और सन्तुष्टित नहीं ॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, चरुनसों पूजा करूँ ॥ इक. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसंयुक्ताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं. ॥५॥
स्वैपर प्रकाश स्वभावधर, ज्यूं निज स्वरूप सम्भारते ।
त्यूं ही त्रिकाल अनन्त द्रव्य पर्याय, प्रगट निहारते ॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, दीपसों पूजा करूँ ॥ इक. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसंयुक्ताय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं. ॥६॥
वर ध्यान अगनि जराय वसुविधि, ऊर्द्धगमन स्वभावतें ।
राजै अचल शिव थान नित, तिन धर्मद्रव्य अभावतें ॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, धूपसों पूजा करूँ ॥ इक. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसंयुक्ताय अष्टकर्मदहनाय धूपं. ॥७॥



सर्वोत्कृष्ट सु पुण्य फल, तीर्थेश पद पायो महा ।
तीर्थेश पद को स्वरुचिधर, अव्यय अमर शिवफल लहा ॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, फलनसो पूजा करूँ ॥ इक. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसंयुक्ताय मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥८॥
अष्टांग मूल सु विधि हरे, निज अष्ट गुण पायो सही ।
अष्टार्द्ध गति संसार मेटि सु अचल है अष्टम मही ॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, अर्घसों पूजा करूँ ॥ इक. ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसंयुक्ताय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥९॥

गीता छन्द

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्म प्रकृति नसाय युगपति, ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुःख जन्म टाल अपार गुण, सूक्ष्म सरूप अनूप हैं ।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अभेय चाहूँ, गेह द्यो हम शुभमती ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसंयुक्ताय पूर्णार्घ ।

१०२४ नाम गुण सहित अर्घ

दोहा

इन्द्रिय विषय कषाय हैं, अन्तर शत्रु महान ।
तिनको जीतत जिन भये, नमूं सिद्ध भगवान ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनाय नमः अर्घ्यं ॥१॥



रागादिक जीते सु जिन, तिनमें तुम परधान।
तातैं नाम जिनेन्द्र है, नमूं सदा धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ॥२॥

रागादिक लवलेश बिन, शुद्ध निरंजन देव ।
 पूरण जिनपद तुम विषैं, राजत हो स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनपुण्यं नमः अर्घ्यं ॥३॥

बाह्य शत्रु उपचरित को, जीतत जिन नहीं होय।
अन्तर शत्रु प्रबल जये, उत्तम जिन हैं सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं ॥४॥

इन्द्रादिक पूजत चरन, सेवत हैं तिहुँकाल ।
गणधरादि श्रुत-केवली, जिन आज्ञा निज भाल ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनप्रचेष्टाय नमः अर्घ्यं ॥५॥

गणधरादि सत पुरुष जे, वीतराग निरग्रन्थ ।
तुमको सेवत जिन भये भये, साधत हैं शिवपन्थ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निजाधिपाय नमः अर्घ्यं ॥६॥

एक देश जिन सर्व मुनि, सर्व भाव अरहन्त ।
द्रव्य भाव सर्वात्मा, नमूं सिद्ध भगवन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधीशाय नमः अर्घ्यं ॥७॥

गणधरादि सेवत चरन, शुद्धातम लवलाय ।
तीन लोक स्वामी भये, नमूं सिद्ध अधिकाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनस्वामिने नमः अर्घ्यं ॥८॥

नमत सुरासुर जिन चरन, तीन काल धरि ध्यान ।
सिद्ध जिनेश्वर मैं नमूं, पाऊँ शिवसुख थान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं ॥९॥



तीन लोक तारण-तरण, तीन लोक विख्यात ।
सिद्ध महा जिननाथ हैं, सेवत पाप नशात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननाथाय नमः अर्घ्यं ॥१०॥

एकदेश श्रावक तथा, सर्वदेश मुनिराज ।
नितप्रति रक्षक हो महा, सिद्ध सु पुण्य समाज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपतये नमः अर्घ्यं ॥११॥

त्रिभुवन शिखाशिरोमणि, राजत सिद्ध अनन्त ।
शिवमारग परसिद्ध कर, नमत भवोदधि अन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवे नमः अर्घ्यं ॥१२॥

जिन आज्ञा त्रिभुवन विषे, वरते सदा अखण्ड ।
मिथ्यामति दुरपक्ष को, देत नीतिसों दण्ड ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनराजाधिराजाय नमः अर्घ्यं ॥१३॥

तीन लोक परिपूर्ण हैं, लोकालोक प्रकाश ।
राजत हैं विस्तीर्ण जिन, नमूं हरो भववास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनविभवे नमः अर्घ्यं ॥१४॥

आत्मज्ञ जिन नमत हैं, शुद्धात्म के हेत ।
स्वामी हो तिहुँलोक के, नमूं वसें शिवखेत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनभर्त्रे नमः अर्घ्यं ॥१५॥

मिथ्यातम को नाश करि, तत्त्वज्ञान परकाश ।
दीप्ति रूप रविसम सदा, करो सदा उर वास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वप्रकाशाय नमः अर्घ्यं ॥१६॥

कर्म शत्रु जीते सु जिन, तिनके स्वामी सार ।
धर्म मार्ग प्रगटात हैं, शुद्ध सुलभ सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मजिते नमः अर्घ्यं ॥१७॥



अमृत सम निज दृष्टिसों, यथाख्यात आचार।
तिन सब के स्वामी नमूं, पायो शिवपद सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नमः अर्घ्य ॥१८॥

समोशरण आदिक विभव, तिसके तुम परधान।
शुद्धात्म शिवपद लहो, नमूं कर्म की हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नमः अर्घ्यं ॥१९॥

सूरज सम तिहुँलोक में, मिथ्या तिमिर निवार।
सहज दिखायी मोक्षमग, मैं बन्दू हित धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननेत्रे नमः अर्घ्यं ॥२०॥

जन्म-मरण दुःख जीति कर, जिन जिन नाम धराय ।
नमूं सिद्ध परमात्मा, भव दुःख सहज नसाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनजेत्रे नमः अर्घ्यं ॥२१॥

अचल अबाधित पद लहो, निज स्वभाव दिढ भाय ।
नमूं सिद्ध कर जोर कर, भाव सहित उर लाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपरिदृढाय नमः अर्घ्यं ॥२२॥

सर्व-व्यापि परमात्मा, सर्व पूज्य विख्यात ।
श्री जिनदेव नमूं त्रिविध, सर्व पाप नशि जात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाय नमः अर्घ्यं ॥२३॥

श्री जिनेश जिनराज हो, निज स्वभाव अनिवार ।
पर निमित्त विनशो सकल, बन्दुं शिव सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं ॥२४॥

परम धर्म दातार हो, तीन लोक सुखदाय।
तीन लोक पालक महा, मैं बन्दुं शिवराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपालकाय नमः अर्घ्यं ॥२५॥



गणधरादि सेवत महा, तुम आज्ञा शिर धार।
अधिक-अधिक जिनपद लहो, नमूं करो भवपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नमः अर्घ्यं ॥२६॥

परम धर्म उपदेश करि, प्रगटायो शिवराय।
श्री जिन निज आनन्द में, वरतैं बन्दूं ताय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासनेशाय नमः अर्घ्यं ॥२७॥

पूरण पद पावत निपुण, सब देवन के देव।
मैं पूजूं नित भावसों, पाऊं शिघ्र स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं ॥२८॥

तीन लोक विख्यात हैं, तारण-तरण जिहाज।
तुम सम देव न और हैं, तुम सब के शिरताज॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाद्वितयाय नमः अर्घ्यं ॥२९॥

तीन लोक पूजत चरन, भाव सहित शिर नाय।
इन्द्रादिक थुति करि थके, मैं बन्दूं तिस पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिनाथाय नमः अर्घ्यं ॥३०॥

तुम समान नहीं देव है, भविजन तारन हेत।
चरणाम्बुज सेवत सुभग, पावैं शिवसुख खेत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्रबिंबंधनाय नमः अर्घ्यं ॥३१॥

भवाताप करि तप्त हैं, तिनकी विपति निवार।
धर्माभूत कर पोषियो, वरतैं शशि उनहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनचन्द्राय नमः अर्घ्यं ॥३२॥

मिथ्यातम करि अन्ध थे, तीन लोक के जीव।
तत्त्व मार्ग प्रगटाइयो, रवि सम दीप्त अतीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनादित्याय नमः अर्घ्यं ॥३३॥



बिन कारण तारण-तरण दीप्त रूप भगवान्।

इन्द्रादिक पूजत चरण, करत कर्म को हान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तरूपाय नमः अर्घ्यं ॥३४॥

जैसे कुञ्जर चक्र के, जाने दल को साज।

चार संघ नायक प्रभू, बन्दूं सिद्ध समाज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनकुंजराय नमः अर्घ्यं ॥३५॥

दीप्त रूप तिहुँलोक में, है प्रचण्ड परताप।

भक्तन को नित देत हैं, भोगें शिवसुख आप॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाकार्य नमः अर्घ्य ॥३६॥

रत्नत्रय मग साधकर, सिद्ध भये भगवान् ।

पूरण निजसुख धरत हैं, निज में निज परिणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधौर्याय नमः अर्घ्यं ॥३७॥

तीन लोक के नाथ हो, ज्युँ तारागण सूर्य।

शिव सुख पायो परमपद, बन्दौं श्रीजिन धूर्य ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधूर्याय नमः अर्घ्यं ॥३८॥

पराधीन बिन परम पद, तुम बिन लहैं न और।

उत्तमात्मा मैं नमूं, तीन लोक शिरमौर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं ॥३९॥

जहाँ न दुःख को लेश है, तहाँ न परसों कार।

तुम बिन कहूँ न श्रेष्ठता, तीनलोक दुःख टार॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिलोकदुःखनिवारणाय नमः अर्घ्यं ॥४०॥

पूर्ण रूप निज लक्ष्मी, पाई श्री जिनराय ।

परम श्रेय परमात्मा, बन्दूं शिवसुख साज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवर्याय नमः अर्घ्यं ॥४१॥



निरभय हो निर आश्रयी, निःसंगी निर्बन्ध ।

निज साधन साधक सुगुन, परसों नहिं सम्बन्ध ॥

ॐ ह्रीं अहं जिमनिःसंगाय नमः अर्घ्यं ॥४२॥

अन्तराय विधि नाशकैं, निजानन्द भयो प्राप्त ।

सन्त नमैं करजोर युग, भव-दुःख करो समाप्त ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनोद्वाहाय नमः अर्घ्यं ॥४३॥

शिवमारग में धरत हो, जग मारगतें काढ़ ।

धर्मधुरन्धर में नमूं, पाऊं भव वन बाढ़ ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनवृषभाय नमः अर्घ्यं ॥४४॥

धर्मनाथ धर्मेश हो, धर्म तीर्थ करतार ।

रहो सु थिर निज धर्म में, मैं बन्दूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनधर्माय नमः अर्घ्यं ॥४५॥

जगत जीव बिधि धूलि सों, लिप्त न लहैं प्रभाव ।

रत्नराशिसम तुम दिपो, निर्मल सहज सुभाव ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनरत्नाय नमः अर्घ्यं ॥४६॥

तीन लोक के शिखर पर, राजत हो विख्यात ।

तुमसम और न जगत् ममें, बड़ा कोई दिखलात ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनौरसे नमः अर्घ्यं ॥४७॥

इन्द्रिय मन व्यापार बहु, मोह शत्रु को जीत ।

लहो जिनेश्वर सिद्धपद, तीन लोक के मीत ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनेशाय नमः अर्घ्यं ॥४८॥

चारि घातिया कर्म को, नाश कियो जिनराय ।

घाति अघाति विनाश जिन, अग्र भये सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनाग्राय नमः अर्घ्यं ॥४९॥



निज पौरुष कर साधियो, निज पुरुषार्थ सार ।

अन्य सहाय नहीं चाहें, सिद्ध सु वीर्य अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशार्दूलाय नमः अर्घ्यं ॥५०॥

इन्द्रादिक नित ध्यावते, तुम सम और न कोय।

तीन लोक चूड़ामणी, नमूं सिद्ध सुख होय ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनपुङ्गवाय नमः अर्घ्यं ॥५१॥

निजानन्द पद को लहो, अविरोधी मल नास।

समकित बिन तिहुँलोक में, और नहीं सुखरास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रवेशाय नमः अर्घ्यं ॥५२॥

जगत् शत्रु को जीति के, कल्पित जिन कहलाय ।

मोहशत्रु जीते सु जिन, उत्तम सिद्ध सुखाय ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनहंसाय नमः अर्घ्यं ॥५३॥

द्रव्य भाव दोनों नहीं, उत्तम शिवसुख लीन।

मन-वच-तन करि मैं नमूं, निजसम भवि जु कीन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमसुखधारकाय नमः अर्घ्यं ॥५४॥

चार संघ नायक प्रभू, शिवमग सुलभ कराय।

तारण तरण जहाज के, मैं बन्दू शिवराय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नमः अर्घ्यं ॥५५॥

स्वयं बूद्ध शिवमार्ग में, आप चले अनिवार।

भविजन अग्रेश्वर भये, बन्दू भक्ति विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्रिमाय नमः अर्घ्यं ॥५६॥

शिवमारग के चिह्न हो, सुखसागर की पाल।

शिवपुर के तुम हो धनी, धर्म नागर प्रतिपाल ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनाग्रमिण्यै नमः अर्घ्यं ॥५७॥



तुम सम और न जगत् में, उत्तम श्रेष्ठ कहाय ।
आप तिरें भवि तार दें, बन्दूं तिन के पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनसत्तमाय नमः अर्घ्यं ॥५८॥

स्वपर कल्याणक हो प्रभू, पञ्चकल्याणक ईश ।
श्रीपति शिवशङ्कर नमूं, चरणाम्बुज धरि शीश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवाय नमः अर्घ्यं ॥५९॥

मोह महाबल दलमली, विजय लक्ष्मीनाथ ।
परमज्योति शिवपद लहो, चरण नमूं धरि माथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमजिनाय नमः अर्घ्यं ॥६०॥

चहुँ गति दुःख विनाशिया, पूरा निज पुरुषार्थ ।
नमूं सिद्ध कर जोरि कै, पाऊँ मैं सर्वार्थ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनचहुँगतिदुःखान्तकाय नमः अर्घ्यं ॥६१॥

जीते कर्म निकृष्ट को, श्रेष्ठ भये जिनदेव ।
तुमसम और न जगत् में, बन्दूं मैं तिन भेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनश्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं ॥६२॥

आप मोक्ष मग साधियो, औरन सुलभ कराय ।
आदि पुरुष तुम जगत् में, धर्म रीति वरताय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं ॥६३॥

मुख्य पुरुषारथ मोक्ष है, साधत सुखिया होय ।
मैं बन्दूं तिन भक्ति कर, सिद्ध कहावें सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनमुखाय नमः अर्घ्यं ॥६४॥

सुरपत सम अग्रेस हो, निज पर भासनहार ।
आप तिरें भवि तारियो, बन्दूं योग सम्भार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्राय नमः अर्घ्यं ॥६५॥



ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिनाय नमः अर्घ्यं ॥६६॥

ॐ ह्रीं अहं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं ॥६७॥

ॐ ह्रीं अहं जिनवृन्दारकाय नमः अर्घ्यं ॥६८॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरिजिते नमः अर्घ्यं ॥६९॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विघ्नाय नमः अर्घ्यं ॥७०॥

ॐ ह्रीं अहं विरजसे नमः अर्घ्यं ॥७१॥

ॐ ह्रीं अहं निरस्तमत्सराय नमः अर्घ्यं ॥७२॥

ॐ ह्रीं अहं शङ्कराय नमः अर्घ्यं ॥७३॥



रागादिक मल बिन दिपो, शुद्ध सुवर्ण समान ।

शुद्ध निरञ्जन पद लियो, नमूँ चरण धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अहं निरञ्जनाय नमः अर्घ्य ॥७४॥

द्रव्य भाव दो विधि करम, नाशि भये शिवराय ।

बन्दूँ मन-वच-काय कर, भविजन को सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अहं कर्मघ्नाय नमः अर्घ्य ॥७५॥

ज्ञानावरणी आदि ले, चार घातिया कर्म ।

तिनको अन्त खिपाई के, लियो मोक्षपद परम ॥

ॐ ह्रीं अहं घातिकर्मान्तकाय नमः अर्घ्य ॥७६॥

ज्ञानावरणी पटल बिन, ज्ञान दीप्ति परकाश ।

शुद्ध सिद्ध परमात्मा, बन्दत भवदुःख नाश ॥

ॐ ह्रीं अहं जिनदीप्तये नमः अर्घ्य ॥७७॥

कर्म रुलावे आत्मा, रागादिक उपजाय ।

तिनको कर्म विनाशकैं, सिद्ध भये सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अहं कर्ममर्माभिदे नमः अर्घ्य ॥७८॥

पाप कलाप न लेश हैं, शुद्धाशुद्ध विख्यात ।

मुनि मन मोहन रूप हैं, नमूँ जोरि जुग हाथ ॥

—ॐ ह्रीं अहं अनुदयाय नमः अर्घ्य ॥७९॥

राग नहीं थुतिकारसों, निन्दकसों नहीं द्वेष ।

सम सुखिया आनन्द घन, बन्दूँ सिद्ध हमेश ॥

ॐ ह्रीं अहं वीतरागाय नमः अर्घ्य ॥८०॥

क्षुधा वेदनी नाशकर, स्व सुख भुञ्जनहार ।

निजानन्द सन्तुष्ट हैं, बन्दूँ भाव विचार ॥

ॐ ह्रीं अहं अक्षुधाय नमः अर्घ्य ॥८१॥

एक दृष्टि सब को लखें, इष्ट-अनिष्ट न कोय।
द्वेष अंग व्यापै नहीं, सिद्ध कहावत सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनद्वेषाय नमः अर्घ्यं ॥८२॥

भवसागर के तीर हैं, शिवपुर के हैं राहि।
मिथ्यातमहर सूर्य हैं, मैं बन्दू हूँ ताहि॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मोहाय नमः अर्घ्यं ॥८३॥

जग जनमें हम दोष हैं, सुखी दुःखी बहु भेव।
ते सब दोष निवारियो, उत्तम हो स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्दोषाय नमः अर्घ्यं ॥८४॥

जन्म-मरण यह रोग हैं, तिनको कठिन इलाज।
परमौषध यह रोग की, बन्दू मेटन काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं अङ्गदाय नमः अर्घ्यं ॥८५॥

राग कहो ममता कहो, मोह कर्म सों होय।
सो जिन मोह विनाशियो, नमूँ सिद्ध हैं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ममत्वाय नमः अर्घ्यं ॥८६॥

तृष्णा दुःख को मूल है, सुखी भये तिस नाश।
मन-वच-तन करि मैं नमूँ, हैं आनन्द विलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीततृष्णाय नमः अर्घ्यं ॥८७॥

अन्तर बाह्य निरिच्छ हैं, एकी रूप अनूप।
निस्पृह परमेश्वर नमूँ, निजानन्द शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं असङ्गाय नमः अर्घ्यं ॥८८॥

क्षायिक समकित को धरें, निर्भय थिरता रूप।
निजानन्दसों नहिं चिगें, मैं बन्दू शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भयाय नमः अर्घ्यं ॥८९॥



स्वप्न प्रमादी जीव के, अल्प-शक्ति सो होय।
निज बल अतुल महा धरैं, सिद्ध कहावैं सोय॥

ॐ ह्रीं अहं अस्वप्नाय नमः अर्घ्यं ॥९०॥

दर्श ज्ञान सुख भोगतैं, खेद न रञ्जक होय।
सो अनन्त बल के धनी, सिद्ध नमामी सोय॥

ॐ ह्रीं अहं निःश्रमाय नमः अर्घ्यं ॥९१॥

युगपत सब प्रापत भये, जानत हैं सब भेव।
संशय बिन आश्चर्य नहीं, नमूं सिद्ध स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अहं वीतविस्मयाय नमः अर्घ्यं ॥९२॥

सिद्ध सनातन कालतैं, जग में हैं परसिद्ध।
तथा जन्म जर नहीं धरैं, नमूं जोरि करसिद्ध॥

ॐ ह्रीं अहं अजन्मने नमः अर्घ्यं ॥९३॥

भ्रम विन ज्ञान प्रकाश में, भासैं जीव अजीव।
संशय विन निश्चल सुखी, बन्दूं सिद्ध सदीव॥

ॐ ह्रीं अहं निःसंशयाय नमः अर्घ्यं ॥९४॥

तुम पूरण परमात्मा, सदा रहो इक सार।
जरा न व्यापै तुम विषैं, नमूं सिद्ध अविकार॥

ॐ ह्रीं अहं निर्जराय नमः अर्घ्यं ॥९५॥

तुम पूरण परमात्मा, अन्त कभी नहिं होय।
मरण रहित बन्दूं सदा, देउ अमर पद सोय॥

ॐ ह्रीं अहं अमराय नमः अर्घ्यं ॥९६॥

निजानन्द के भोग में, कभी न आरत आय।
यातैं तुम अरतीत हो, बन्दूं सिद्ध सुहाय॥

ॐ ह्रीं अहं अरत्यतोताय नमः अर्घ्यं ॥९७॥

होत नहीं सोच न कभूं, ज्ञान धरें परतक्ष।
नमूं सिद्ध परमात्मा, पाऊं ज्ञान अलक्ष॥

ॐ ह्रीं अहं निश्चिंताय नमः अर्घ्यं ॥९८॥

जानत हैं सब ज्ञेयको, पर ज्ञेयन्तैं भिन्न।
तातें निर्विषयी कहे, लेश न भोगें अन्य॥

ॐ ह्रीं अहं निर्विषयाय नमः अर्घ्यं ॥९९॥

अहंकार आदिक त्रिषट्, तुम पद निवसैं नाहिं।
सिद्ध भये परमात्मा, मैं बन्दूं हूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिषष्टिजिते नमः अर्घ्यं ॥१००॥

जेते गुण परजाय है, द्रव्य अनन्त सुकाल।
तिनको तुम जानो प्रभू, बन्दूं मैं नमि भाल॥

ॐ ह्रीं अहं सर्वज्ञाय नमः अर्घ्यं ॥१०१॥

ज्ञान आरसी तुम विषैं, झलकें ज्ञेय अनन्त।
सिद्ध भये तिनको नमें, तीनों काल सु सन्त॥

ॐ ह्रीं अहं सर्वविदे नमः अर्घ्यं ॥१०२॥

चक्षु अचक्षु न भेद हैं, समदर्शी भगवान।
नमूं सिद्ध परमात्मा, तीनों योग प्रधान॥

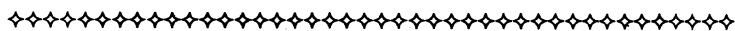
ॐ ह्रीं अहं सर्वदर्शिवे नमः अर्घ्यं ॥१०३॥

देखन कछु बाकी नहीं, तीनों काल मझार।
सर्वालोक की सिद्ध हैं, नमूं त्रियोग सम्हार॥

ॐ ह्रीं अहं सर्वावलोकाय नमः अर्घ्यं ॥१०४॥

तुम सम पराक्रम और सब, जगवासी में नाहिं।
निजबल शिवपद साधियों, मैं बन्दूं हूँ ताहि॥

ॐ ह्रीं अहं अनन्तविक्रमाय नमः अर्घ्यं ॥१०५॥



निजसुख भोगत नहीं चिगें, वीर्य अनन्त धराय ।

तुम अनन्त बल के धनी, बन्दूं मन-वच-काय ॥

ॐ ह्रीं अहं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं ॥१०६॥

सुखाभास जग जीव के, पर निमित्त से होय ।

निज आश्रय पूरण सुखी, सिद्ध कहावैं सोय ॥

ॐ ह्रीं अहं अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं ॥१०७॥

निज सुख में सुख होत है, परसुख में सुख नाहिं ।

सो तुम निज सुख के धनी, मैं बन्दूं हूँ ताहि ॥

ॐ ह्रीं अहं अनन्तसौख्याय नमः अर्घ्यं ॥१०८॥

तीनलोक तिहुँकालके धनी, गुणपर्यय कछु नाहिं ।

जाको तुम जानो नहीं, ज्ञान भानु के माहिं ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥१०९॥

द्रव्य तथा गुण पर्य को, देखैं एकीबार ।

विश्व दर्श तुम नाम है, बन्दों भक्ति विचार ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वदर्शिने नमः अर्घ्यं ॥११०॥

सम्पूरण अवलोकतें, दर्शन धरो अपार ।

नमूं सिद्ध कर जोरिके, करो जगत सै पार ॥

ॐ ह्रीं अहं अखिलार्थदर्शिने नमः अर्घ्यं ॥१११॥

इन्द्रिय ज्ञान परोक्ष है, क्रमवर्ती कहलाय ।

बिन इन्द्रिय प्रत्यक्ष है, धरो ज्ञान सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अहं निअक्षदृशे नमः अर्घ्यं ॥११२॥

विश्व मांहि तुम अर्थ सब, देखो एकीबार ।

विश्व चक्षु तुम नाम है, बन्दूं भक्ति विचार ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वचक्षुषे नमः अर्घ्यं ॥११३॥

तीन लोक के अर्थ जे, बाकी रहे न शेष।
युगपत् तुम सब जानियो, गुण पर्याय विशेष॥

ॐ ह्रीं अहं अशेषविदे नमः अर्घ्यं ॥११४॥

पराधीन अरु विघ्न बिन, है साँचा आनन्द।
सो शिवगति में तुम लियो, मैं बन्दूं सुखकन्द॥

ॐ ह्रीं अहं आनन्दाय नमः अर्घ्यं ॥११५॥

सत् प्रशंसता नित्य है, या सद्भाव सरूप।
सो तुम में आनन्द है, बन्दत हूँ शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अहं सदानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥११६॥

उदय महा सत् रूप है, जामें असत् न होय।
अन्तराय अरु विघ्न बिन, सत्य उदै है सोय॥

ॐ ह्रीं अहं सदोदयाय नमः अर्घ्यं ॥११७॥

नित्यानन्द महासुखी, हीनाधिक नहीं होय।
नहीं गत्यन्तर रूप हो, शिवगति में है सोय॥

ॐ ह्रीं अहं नित्यानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥११८॥

जासों परे न और सुख, अहमिन्द्रन में नाहिं।
सोई श्रेष्ठ सुख भोगते, बन्दूं हूँ मैं ताहि॥

ॐ ह्रीं अहं परमानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥११९॥

पूरण सुख की हृद धरें, सो महान आनन्द।
सो तुम पायो शिव-धनी, बन्दूं पद अरविन्द॥

ॐ ह्रीं अहं महानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥१२०॥

उत्तम सुख स्वाधीन है, परम नाम कहलाय।
चारों गति में सो नहीं, तुम पायो सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अहं परमानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥१२१॥



जामें विघन न लेश है, उदय तेज विज्ञान।

जाको हम जानत नहीं, सुलभ रूप विधि दान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परोदयाय नमः अर्घ्य ॥१२२॥

परम शक्ति परमात्मा, पर सहाय बिन आप।

स्वयं वीर्य आनन्द के, नमत कटैं सब पाप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमौजसे नमः अर्घ्य ॥१२३॥

महातेज के पुञ्ज हो, अविनाशी अविकार।

झलकत ज्ञानाकार सब, दर्पणवत आधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमतेजसे नमः अर्घ्य ॥१२४॥

परम धाम उत्कृष्ट पद, मोक्ष नाम कहलाय।

जासों फिर आवत नहीं, जन्म-मरण नसि जाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमधाम्ने नमः अर्घ्य ॥१२५॥

जगत गुरु परमात्मा, जगत सूर्य शिव नाम।

परम हंस योगीश हैं, लियो मोक्ष अभिराम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमहंसाय नमः अर्घ्य ॥१२६॥

दिव्य ज्योति स्वज्ञान में, तीन लोक प्रतिभास।

शङ्का बिन विश्वासकर, निजपर कियो प्रकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षज्ञात्रे नमः अर्घ्य ॥१२७॥

निज विज्ञान सु ज्योति में, संशय आदिक नाहिं।

सो तुम सहज प्रकाशियो, मैं बढूं हूँ ताहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्योतिषे नमः अर्घ्य ॥१२८॥

शुद्ध बुद्ध परमात्मा, परम ब्रह्म कहलाय।

सर्व लोक उत्कृष्ट पद, पायो बन्दूं ताय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमब्रह्मणे नमः अर्घ्य ॥१२९॥



चार ज्ञान नहीं जास में, शुद्ध सरूप अनूप।
पर को नाहिं प्रवेश है, एकाकी शिवरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमरहसे नमः अर्घ्यं ॥१३०॥

निज गुण द्रव्य पर्याय में, भिन्न-भिन्न सब रूप।
एक क्षेत्र अवगाह करि, राजत हैं चिद्रूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यगात्मने नमः अर्घ्यं ॥१३१॥

शुद्ध बुद्ध परमात्मा, निज विज्ञान प्रकाश ।
स्व आत्म के बोधते, कियो कर्म को नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रबोधात्मने नमः अर्घ्यं ॥१३२॥

कर्म मैल से लिप्त हैं, जगति आत्म दिन रैन।
कर्म नाश महापद लियो, बन्दू हूँ सुख दैन॥

ॐ ह्रीं अर्हं महात्मने नमः अर्घ्यं ॥१३३॥

आत्म को गुण ज्ञान है, यही यथार्थ होय।
ज्ञानानन्द ऐश्वर्यता, उदय भयो है सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्ममहोदयाय नमः अर्घ्यं ॥१३४॥

दर्श ज्ञान सुख वीर्य को, पाय परम पद होय।
सो परमात्म तम भये, नमं जोर कर दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं ॥१३५॥

मोहकर्म के नाशते, शान्ति भये सुखदेन ।
क्षोभरहित परशान्त हो, शान्त नमं सुखलेन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशांतात्मने नमः अर्घ्यं ॥१३६॥

पूरण पद तुम पाइयो, यातैं परे न कोय।
तुम समान नहीं और हैं, बन्दू हूँ पद दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं ॥१३७॥



पुद्गल कृत तन छारकैं निज आतम में वास।
स्वै प्रदेश ग्रह के विषैं, नितही करत विलास॥

ॐ ह्रीं अहं आत्मनिकेताय नमः अर्घ्यं ॥१३८॥

औरन को नित देत हैं, शिवसुख भोगैं आप।
परम इष्ट तुम हो सदा, निजसम करत मिलाप॥

ॐ ह्रीं अहं परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं ॥१३९॥

मोक्ष लक्ष्मी नाथ हो, भक्तन प्रति नित देत।
महा इष्ट कहलात हो, बन्दूं शिवसुख हेत॥

ॐ ह्रीं अहं महितात्मने नमः अर्घ्यं ॥१४०॥

रागादिक मल नासिकैं, श्रेष्ठ भये जगमाहिं।
सो उपासना करण को, तुम सम कोई नाहिं॥

ॐ ह्रीं अहं श्रेष्ठात्मने नमः अर्घ्यं ॥१४१॥

पर में ममत विनाशकैं, स्व आतम थिर धार।
पर विकल्प-संकल्प बिन, तिष्ठो सुख आधार॥

ॐ ह्रीं अहं स्वात्मनिष्ठताय नमः अर्घ्यं ॥१४२॥

स्व आतम में मग्न हैं, स्व आतम लवलीन।
पर में भ्रमण करै नहीं, सन्त चरण शिर दीन॥

ॐ ह्रीं अहं ब्रह्मनिष्ठाय नमः अर्घ्यं ॥१४३॥

तीन लोक के नाथ हो, इन्द्रिय कर पूज।
तुम सम और महानता, नहिं धारत हैं दूज॥

ॐ ह्रीं अहं महाजेष्ठाय नमः अर्घ्यं ॥१४४॥

तीन लोक परसिद्ध हो, सिद्ध तुम्हारा नाम।
सर्व सिद्धता ईश हो, पूरहु सब के काम॥

ॐ ह्रीं अहं निरूढात्मने नमः अर्घ्यं ॥१४५॥



स्वै आतम थिरता धरैं, नहीं चलाचल होय।
निश्चल परम सुभाव में, भये प्रकृति को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं दृढात्मने नमः अर्घ्यं ॥१४६॥

क्षयोपशम नानाविधै, क्षायक एक प्रकार ।
 सो तुम में नहीं और में, बन्दूँ योग सम्भार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकविद्याय नमः अर्घ्यं ॥१४७॥

कर्म पटल के नाशतें, निर्मल ज्ञान उदार।
तुम महान विद्या धरो, बन्दूँ भाव सम्भार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाविद्याय नमः अर्घ्यं ॥१४८॥

परम पूज्य परमेश पद, पूरण ब्रह्म कहाय।
पायो सहज महान पद, बन्दूँ तिनके पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महापदेश्वराय नमः अर्घ्यं ॥१४९॥

पञ्च परम पद पाइयो, ब्रह्म नाम है एक ।
पूजूँ मन-वच-काय करि, नाशैं विघन अनेक ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चब्रह्मणे नमः अर्घ्यं ॥१५०॥

निज विभूति सर्वस्व तुम, पायो सहज सुभाय ।
हीनाधिक बिन बिलसते, बन्दूँ ध्यान लगाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वध्यानाय नमः अर्घ्यं ॥१५१॥

पूरण पण्डित ईश हो, बुद्ध धाम अभिराम।
 बद्ध मन-वच-काय करि, पाऊँ मोक्ष सुधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविद्येश्वराय नमः अर्घ्यं ॥१५२॥

मोह कर्म चकचूरतें, स्वाभाविक शुभ चाल।
शुद्ध परिणाम धरें सदा, बन्धुं नित नमि भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचये नमः अर्घ्यं ॥१५३॥



ज्ञान दर्श आवर्ण बिन, दिपो अनन्ताऽनन्त।
सकल ज्ञेय प्रतिभास हैं, तुम्हें नमैं नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्ह अनन्तधिये नमः अर्घ्य ॥१५४॥

इक-इक गुण प्रति छेद को, पार न पायो जाय।
सो गुण रास अनन्त हैं, बन्दूं तिनके पाय॥

ॐ ह्रीं अर्ह अनन्तात्मने नमः अर्घ्य ॥१५५॥

अहमिन्द्रन की शक्ति जो, करो अनन्ती रास।
सो तुम शक्ति अनंत गुण, करै अनंत प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अर्ह अनन्तशक्तये नमः अर्घ्य ॥१५६॥

छायक दर्शन जोति में, निरावरण परकास।
सो अनंत द्रग तुम धरौ, नमैं चरण नित दास॥

ॐ ह्रीं अर्ह अनन्तदृगे नमः अर्घ्य ॥१५७॥

जाकी शक्ति अपार है, हेतु अहेतु प्रसिद्ध।
गणधरादि जानत नहीं, मैं बन्दूं नित सिद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्ह अनन्तधीशक्तये नमः अर्घ्य ॥१५८॥

चेतन शक्ति अनन्त है, निरावरण जो होय।
सो तुम पायो सहज ही, कर्म पुञ्ज को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्ह अनन्तचिदे नमः अर्घ्य ॥१५९॥

जो सुख है निज आश्रये, सो सुख पर में नाहिं।
निजानन्द रस लीन हैं, मैं बन्दूं हूँ ताहि॥

ॐ ह्रीं अर्ह अनन्तमुदे नमः अर्घ्य ॥१६०॥

जाकैं कर्म लिपैं न फिर, दिपैं सदा निरधार।
सदा प्रकाश जु सहित हैं, बन्दूं योग सम्हार॥

ॐ ह्रीं अर्ह सदाप्रकाशाय नमः अर्घ्य ॥१६१॥



निजानन्द के माहि हैं, सर्व अर्थ परसिद्ध।
 सो तुम पायो सहज ही, नमत मिलें नवनिद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वार्थसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१६२॥

अति सूक्ष्म जे अर्थ हैं, काय अकाय कहाय।
साक्षात् सब को लखो, बन्दुं तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं साक्षात्कारिणे नमः अर्घ्यं ॥१६३॥

सकल गुणानमय द्रव्य हो, शुद्ध सुभाव प्रकाश ।
तुम समान नहीं दूसरो, बन्दत पूरें आस ॥

ॐ ह्रीं अर्हं समग्रद्धये नमः अर्घ्यं ॥१६४॥

सर्व कर्म को छीन करि, जरी जेवरी सार।
 सो तुम धूलि उडाइयो, बन्दुं भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मक्षीणाय नमः अर्घ्यं ॥१६५॥

चहुँ गति जगत कहावत हैं, ताको करि विध्वंश ।
अमर अचल शिवपुर बसें, भर्म न राखो अंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्विध्वंसिने नमः अर्घ्यं ॥१६६॥

इन्द्री मन व्यापार में, जाको नहिं अधिकार।
सो अलक्ष आतम प्रभू, होउ सुमति दातार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अलक्षात्मने नमः अर्घ्यं ॥१६७॥

नहीं चलाचल अचल हैं, नहीं भ्रमण स्थिर धार।
 सो शिवपुर में बसत हैं, बन्दुं भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचलस्थानाय नमः अर्घ्यं ॥१६८॥

पर कृत निमत बिगाड है, सोई दुविधा जान।
 सो तुम में नहीं लेश है, निराबाध परणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घ्यं ॥१६९॥



जैसे हो तुम आदि में, सोई हो तुम अन्त ।
 एक भाँति निवसो सदा, बन्दत हैं नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अहं प्रतर्क्यात्मने नमः अर्घ्य ॥१७०॥

धर्मनाथ जगदीश हो, सुर मुनि मानें आन ।
 मिथ्यामत नहीं चलत हैं, तुम आगे परमाण ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मचक्रिणे नमः अर्घ्य ॥१७१॥

ज्ञान शक्ति उत्कृष्ट है, धर्म सर्व तिस माहिं ।
 श्रेष्ठ ज्ञान तुम पुञ्ज हो, पर निमित्त कछु नाहिं ॥

ॐ ह्रीं अहं चिदांबराय नमः अर्घ्य ॥१७२॥

निज अभावसों मुक्त हो, कहैं कुवादी लोग ।
 भूतात्मा सो मुक्त हैं, सो तुम पायो जोग ॥

ॐ ह्रीं अहं भूतात्मने नमः अर्घ्य ॥१७३॥

सहज सुभाव प्रकाशियो, पर निमित्त कछु नाहिं ।
 सो तुम पायो सुलभतें, स्व सुभाव के मांहि ॥

ॐ ह्रीं अहं सहजज्योतिषे नमः अर्घ्य ॥१७४॥

विश्व नाम तिहुँलोक में, तिसमें करत प्रकाश ।
 विश्व ज्योति कहलात हैं, नमत मोह तम नाश ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वज्योतिषे नमः अर्घ्य ॥१७५॥

परस आदि पन इन्द्रियाँ, द्वार ज्ञान कछु नाहिं ।
 यातें अति इन्द्रिय कहो, जिन-सिद्धांत के मांहि ॥

ॐ ह्रीं अहं अतीन्द्रियाय नमः अर्घ्य ॥१७६॥

एक मान असहाय हो, शुद्ध बुद्ध निर अंश ।
 केवल तुम को धर्म है, नमें तुम्हें नित संत ॥

ॐ ह्रीं अहं केवलाय नमः अर्घ्य ॥१७७॥

लौकिक जन या लोक में, तुम सारूँ गुण नाहिं ।
केवल तुम ही मैं बसैं, मैं बन्दूँ हूँ ताहि ॥

ॐ ह्रीं अहं केवलावलोकाय नमः अर्घ्य ॥१७८॥

लोक अनन्त कहो सही, तातें नन्तानन्त ।
है अलोक अवलोकियो, तुम्हें नमें नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अहं लोकालोकावलोकाय नमः अर्घ्य ॥१७९॥

ज्ञान द्वार निज शक्ति हो, फैलो लोकालोक ।
भिन्न-भिन्न सब जानियो, नमूं चरण दे धोक ॥

ॐ ह्रीं अहं विवृताय नमः अर्घ्य ॥१८०॥

बिन सहाय निज शक्ति हो, प्रगटो आपोआप ।
स्व बुद्ध स्व सिद्ध हो, नमत नसैं सब पाप ॥

ॐ ह्रीं अहं केवलावलोकाय नमः अर्घ्य ॥१८१॥

सूक्ष्म सुभग सुभावतें, मन इन्द्री नहीं ज्ञात ।
वचन अगोचर गुण धरैं, नमूं चरन दिन-रात ॥

ॐ ह्रीं अहं अव्यक्ताय नमः अर्घ्य ॥१८२॥

कर्म उदय दुःख भोगवैं, सर्व जीव संसार ।
तिन सब को तुमही शरण, देहो सुख अपार ॥

ॐ ह्रीं अहं सर्वशरणाय नमः अर्घ्य ॥१८३॥

चिन्तवन में आवैं नहीं, पार न पावे कोय ।
महा विभव के हो धनी, नमूं जोर कर दोय ॥

ॐ ह्रीं अहं अचित्यविभवाय नमः अर्घ्य ॥१८४॥

छहों काय के वास को, विश्व कहैं सब लोक ।
तिनके थम्भनहार हो, राज काज के जोग ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वभूते नमः अर्घ्य ॥१८५॥



घट-घट में राजो सदा, ज्ञान द्वार सब ठौर।
विश्व रूप जीवात्म हो, तीनलोक सिरमौर॥

ॐ ह्रीं अर्ह विश्वरूपात्मने नमः अर्घ्यं ॥१८६॥

घट-घट में नित व्याप्त हो, ज्यों घर दीपक जोति।
विश्वनाथ तुम नाश है, पूजत शिवसुख होत॥

ॐ ह्रीं अर्ह विश्वात्मने नमः अर्घ्यं ॥१८७॥

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुम पद पूजैं आन।
यातें मुखिया हो सही, मैं पूजूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्ह विश्वतोमुखाय नमः अर्घ्यं ॥१८८॥

ज्ञान द्वार सब जगत में, व्यापि रहे भगवान।
विश्व व्यापि मुनि कहत हैं, ज्यूँ नभ में शशि भान॥

ॐ ह्रीं अर्ह विश्वव्यापिने नमः अर्घ्यं ॥१८९॥

निरावरण निरलेप हैं, तेज रूप विख्यात।
ज्ञान कला पूरण धरैं, मैं बन्दूँ दिन-रात॥

ॐ ह्रीं अर्ह स्वयंज्योतिषे नमः अर्घ्यं ॥१९०॥

चिन्तवन में आवैं नहीं, धारैं सुगुण अपार।
मन-वच-काय नमूँ सदा, मिटै सकल संसार॥

ॐ ह्रीं अर्ह अचित्यात्मने नमः अर्घ्यं ॥१९१॥

नय प्रमाण को गमन नहीं, स्वयं ज्योति परकाश।
अद्भुत गुण पर्याय में, सुखसूँ करैं विलास॥

ॐ ह्रीं अर्ह अमितप्रभाय नमः अर्घ्यं ॥१९२॥

मती आदि क्रमवर्त्ति बिन, केवल लक्ष्मीनाथ।
माहबोध तुम नाम है, नमूँ पाँय धरि माथ॥

ॐ ह्रीं अर्ह महाबोधाय नमः अर्घ्यं ॥१९३॥



कर्मयोगतें जगत में, जीव शक्ति को नाश।
स्वयं वीर्य अद्भुत धरैं नमूं चरण सुखरास॥

ॐ ह्रीं अर्हं महावीर्याय नमः अर्घ्यं ॥१९४॥

छायक लब्धि महान है, ताको लाभ लहाय।
महा लाभ यातैं कहैं, बन्दू तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महालाभाय नमः अर्घ्यं ॥१९५॥

ज्ञानावरणादिक पटल, छायो आतम ज्योति ।
ताको नाश भये विमल, दीप्त रूप उद्योत ॥

ॐ ह्रीं अहं महोदयाय नमः अर्घ्यं ॥१९६॥

ज्ञानानन्द स्व लक्ष्मी, भोगें बाधाहीन।
पञ्चम गति में वास है, नमूं जोग पद लीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगसुगतये नमः अर्घ्यं ॥१९७॥

पर निमित्त जामें नहीं, स्व आनन्द अपार।
सोई परमानन्द है, भोगें निज आधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नमः अर्घ्यं ॥१९८॥

दर्श ज्ञान सुख भोगते, नैंक न बाधा होय।
अतुल वीर्य तुम धरत हो, मैं बन्दू हूँ सोय॥

ॐ ह्रीं अहं अतुलवीर्याय नमः अर्घ्यं ॥१९९॥

शिवस्वरूप आनन्दमय, क्रीडा करत विलास।
महादेव कहलात हैं, बन्दत रिपुगणनाग ॥

ॐ ह्रीं अहं यज्ञार्हाय नमः अर्घ्यं ॥२००॥

महा भाग शिवगति लहो, तासम भाग न और।
सोई भगवत हैं प्रभू, नमूं पदाम्बुज ठौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं भगवते नमः अर्घ्यं ॥२०१॥



तीन लोक के पूज्य हैं, तीन लोक के स्वामि।
कर्म शत्रु को छय कियो, तातैं अरहत नाम॥

ॐ ह्रीं अहं अरहते नमः अर्घ्यं ॥२०२॥

सुरनर पूजत चरण जुग, द्रव्य अर्थ युत भाव।
महा अर्थ तुम नाम है, पूजत कर्म अभाव॥

ॐ ह्रीं अहं महार्थाय नमः अर्घ्यं ॥२०३॥

शत इन्द्रन करि पूज्य हो, अहमिन्द्रन के ध्येय।
द्रव्य भाव करि पूज्य हो, पूजत पूज्य अभेय॥

ॐ ह्रीं अहं मघर्वार्चिताय नमः अर्घ्यं ॥२०४॥

छहों द्रव्य गुणपर्य को, जानत भेद अनन्त।
महापुरुष त्रिभुवन धनी, पूजत हैं नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अहं भूतार्थयज्ञपुरुषाय नमः अर्घ्यं ॥२०५॥

तुमसों कछु छाना नहीं, तीन लोक का भेद।
दर्पण तल कम भास है, नमत कर्ममल छेद॥

ॐ ह्रीं अहं भूतार्थयज्ञाय नमः अर्घ्यं ॥२०६॥

सकल ज्ञेय के ज्ञानतें, हो सब के सिरमौर।
पुरुषोत्तम तुम नमत हैं, तुम लग सब की दौर॥

ॐ ह्रीं अहं भूतार्थकृतपुरुषाय नमः अर्घ्यं ॥२०७॥

स्वयं बुद्ध शिवमग चरत, स्वयं बुद्ध अविरुद्ध।
शिवमगचारी नित जजैं, पावैं आतम शुद्ध॥

ॐ ह्रीं अहं पूज्याय नमः अर्घ्यं ॥२०८॥

सब देवन के देव हो, तीन लोक के पूज्य।
मिथ्या तिमिर निवारते, सूरज और न दूज॥

ॐ ह्रीं अहं भट्टारकाय नमः अर्घ्यं ॥२०९॥



सुरनर मुनि के पूज्य हो, तुम से श्रेष्ठ न कोय।

तीन लोक के स्वामि हो, पूजत शिवसुख होय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्रभवते नमः अर्घ्यं ॥२१०॥

महा पूज्य महा मान्य हो, स्वयं बुद्ध अविकार।

मन-वच-तन से ध्यावते, सुरनर भक्ति विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्रभवते नमः अर्घ्यं ॥२११॥

महाज्ञान केवल कहो, सो दीखे तुम मांहि ।

महा नामसों पूजिये, संसारी दुःख नाहिं ॥

ॐ ह्रीं अहं महते नमः अर्घ्यं ॥२१२॥

पूज्यपणा नहीं और है, इक तुम ही में जान।

महा अर्ह तुम गुण प्रभू, पूजत हो कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महार्हाय नमः अर्घ्यं ॥२१३॥

अचल शिवालय के विषैं, अमित काल रहैं राज।

चिरंजीवी कहलात हो, बन्दूँ शिवसुख काज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्रायुषे नमः अर्घ्यं ॥२१४॥

मरण रहित शिवपद लसैं, काल अनन्तानन्त।

दीर्घायु तुम नाम है, बन्दत नितप्रति सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दीर्घायुषे नमः अर्घ्यं ॥२१५॥

सकल तत्त्व के अर्थ कहि, निराबाध निरशंस।

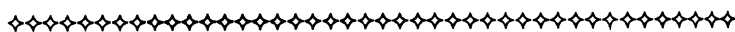
धर्म मार्ग प्रकटाइयो, नमत मिटैं दुःख अंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाचे नमः अर्घ्यं ॥२१६॥

मुनिजन नितप्रति ध्यावते, पावें निज कल्याण।

सज्जन जन आराध्य हो, मैं ध्याऊँ धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्ह आराध्याय नमः अर्घ्यं ॥२१७॥



शिव जाको हैं ध्यावते, पावें सन्त मुनीन्द्र।
परमाराध्य कहात हो, पायो नाम अतीन्द्र॥

ॐ ह्रीं अर्ह परमाराध्याय नमः अर्घ्य॥२१८॥

पञ्चकल्याण प्रसिद्ध हैं, गर्भ आदि निर्वाण।
देवन करि पूजत भये, पायो शिवसुख थान॥

ॐ ह्रीं अर्ह पञ्चकल्याणपूजिताय नमः अर्घ्य॥२१९॥

देखो लोकालोक को, हस्त रेख की सार।
इत्यादिक गुण तुम विषैं, दीखै उदय अपार॥

ॐ ह्रीं अर्ह दर्शनविशुद्धिगुणोदयाय नमः अर्घ्य॥२२०॥

छायक समकित को धरैं, सौधर्मादिक इन्द्र।
तुम पूजन परभावतें, अन्तिम होय जिनेन्द्र॥

ॐ ह्रीं अर्ह सुरार्चिताय नमः अर्घ्य॥२२१॥

निर्विकल्प शुभ चिह्न है, वीतराग सो होय।
सो तुम पायो सहज ही, नमूं जोर कर दोय॥

ॐ ह्रीं अर्ह सुखदात्मने नमः अर्घ्य॥२२२॥

स्वर्ग आदि सुख थान के, हो परकाशन हार।
दीप्त रूप बलवान हैं, तुम मारग सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्ह दिवौजसे नमः अर्घ्य॥२२३॥

गर्भ कल्याणक के विषैं, तुम माता सुखकार।
षट् कुमारिका सेवती, पावें भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अर्ह सचीसेवितमातृकाय नमः अर्घ्य॥२२४॥

अति उत्तम तुम गर्भ है, भवदुःख जन्म निवार।
रत्नराशि दिवलोकतें, वषैं मूसलधार॥

ॐ ह्रीं अर्ह रत्नगर्भाय नमः अर्घ्य॥२२५॥



ॐ ह्रीं अर्हं पुन्याङ्गाय नमः अर्घ्यं ॥२३३॥



ज्यूँ सूरज मध्याह्न में, दिपै अनन्त प्रभाव ।
 त्यों तुम ज्ञानकला दिपै, मिथ्या तिमिर अभाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भास्वते नमः अर्घ्यं ॥२३४॥

चहुँ विधि देवन में सदा, तुम सम देव न आन ।
 निजानन्द में केलिकर, पूजत हूँ धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्भुतदेवाय नमः अर्घ्यं ॥२३५॥

विश्व ज्ञान युगपद धरें, ज्यूँ दर्पन आकार ।
 स्वपर प्रकाशक हो सही, नमूँ भक्ति उर धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्ञात्रीसम्भृते नमः अर्घ्यं ॥२३६॥

सत स्वरूप सत ज्ञान हैं, तुम ही पूज्य प्रधान ।
 पूजत हैं नित विश्वजन, देव मान परमान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदेवाय नमः अर्घ्यं ॥२३७॥

सृष्टी को सुख करत हो, हरण दुःख भववास ।
 मोक्ष लक्ष्मी देत हो, जन्म-जरा-मृत नास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सृष्टिनिर्वृत्ताय नमः अर्घ्यं ॥२३८॥

इन्द्र सहस्र लोचन किये, निरखत रूप अपार ।
 मोक्ष लहै सो नेमतैं, मैं पूजूँ निरधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सहस्राक्षदृगोत्सवाय नमः अर्घ्यं ॥२३९॥

सम्पूरण निज शक्ति के, है परताप अनन्त ।
 सो तुम विस्तीरण करो, नमें चरण नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशक्तये नमः अर्घ्यं ॥२४०॥

ऐरावत पर आरूढ़ हैं, देव नृत्यता मांड ।
 पूजत हैं सो भक्तियों, मेटि भवार्णव हांड ॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवैरावतारीनाय नमः अर्घ्यं ॥२४१॥

सुनर चारण मुनि जजैं, सुलभ गमन आकाश ।

परिपूरण हर्षात हैं, पूरैं मन की आश ॥

ॐ ह्रीं अहं हर्षाकुलामरखगचारणार्धिमतोत्सवाय नमः अर्घ्यं ॥२४२॥

रक्षक हो षट् काय के, शरणागति प्रतिपाल ।

सर्व व्यापि निज ज्ञानतें, पूजत होय निहाल ॥

ॐ ह्रीं अहं विष्णवे नमः अर्घ्यं ॥२४३॥

महा उच्च आसन प्रभू, है सुमेर विख्यात ।

जन्म अभिषेक सुरेन्द्र करि, पूजत मन उमगात ॥

ॐ ह्रीं अहं स्नानपीठयिताद्वराजे नमः अर्घ्यं ॥२४४॥

जाकरि तरि ए तीर्थसों, मानैं मुनिगण मान्य ।

तुमसम कौन जु श्रेष्ठ हैं, असत्यार्थ हैं अन्य ॥

ॐ ह्रीं अहं तीर्थसमानदुग्धाब्धये नमः अर्घ्यं ॥२४५॥

लोक स्नान गिलानता, मेटै मैल शरीर ।

आतम प्रक्षालित कियो, तुम्हीं ज्ञान सुनीर ॥

ॐ ह्रीं अहं स्नानम्बुजातवासवाय नमः अर्घ्यं ॥२४६॥

तारण-तरण सुभाव हैं, तीन लोक विख्यात ।

ज्यूं सुगन्ध चम्पा कली, गन्धमई कहलात ॥

ॐ ह्रीं अहं गंधपवित्रितत्रिलोकाय नमः अर्घ्यं ॥२४७॥

सूक्ष्म तथा स्थूल में, ज्ञान करै परवेश ।

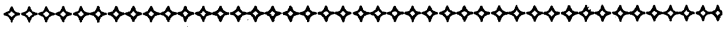
जाको तुम जानों नहीं, खाली रहो न देश ॥

ॐ ह्रीं अहं वज्रसूचये नमः अर्घ्यं ॥२४८॥

औरन प्रति आनन्द करि, निर्मल शुचि आचार ।

आप पवित्र भये प्रभू, बन्दूं हूँ युग पाय ॥

ॐ ह्रीं अहं शुचिश्रवे नमः अर्घ्यं ॥२४९॥



कर्मों करि किरतार्थ ही, कृत फल उत्तम पाय।

करपर कर राजत प्रभू, बन्दू हूँ युग पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृतार्थकृतहस्ताय नमः अर्घ्यं ॥२५०॥

दर्शन इन्द्र अघात हैं, उष्ट मान उर माहिं।

कर्म नाशि शिवपुर बसैं, मैं बन्दू हूँ ताहि॥

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रेष्टाय नमः अर्घ्यं ॥२५१॥

मधवा जाके नृत्य करि, ताकैं तृप्ति महान।

सो मैं उनको जजत हूँ, होय कर्म की हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रनृत्यतृप्तिकाय नमः अर्घ्यं ॥२५२॥

शची इन्द्र अरुकाम ये, जिन दासन के दास।

निश्चय मन में नमन कर, नित वंदतपद जास॥

ॐ ह्रीं अर्हं शचीविस्मापितम्बा नमः अर्घ्यं ॥२५३॥

जिनके सनमुख नृत्य करि, इन्द्र हर्ष उपजाय।

जन्म सुफल मानैं सदा, हम पर होउ सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रारब्धानन्दनृत्याय नमः अर्घ्यं ॥२५४॥

धन सुवर्णतें लोक में, पूरण इच्छा होय।

चक्रवर्ती पद पाइये, तुम पूजत हैं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं रैदपूर्णमनोरथाय नमः अर्घ्यं ॥२५५॥

तुम आज्ञा में हैं सदा, आप मनोरथ मान।

इन्द्र सदा सेवन करैं, पाप विनाशक जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं आज्ञार्थीइन्द्रकृतासेवाय नमः अर्घ्यं ॥२५६॥

सब देवन में श्रेष्ठ हो, सब देवन सिरताज।

सब देवन के इष्ट हो, बंदत सुलभ सु काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवश्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं ॥२५७॥

तीन लोक में उच्च हो, तीन लोक परशंस।

सो शिवगति पायो प्रभू, जजत कर्म विध्वंस॥

ॐ ह्रीं अहं शिवौद्यमाय नमः अर्घ्यं ॥२५८॥

जगत्पूज्य शिवनाथ हो, तुम ही द्रव्य विशिष्ट।

हित उपदेशक परम गुरु, मुनिजन मानें इष्ट॥

ॐ ह्रीं अहं जगत्पूज्यशिवनाथाय नमः अर्घ्यं ॥२५९॥

मति, श्रुत, अवधिअवर्णको, नाशकियोस्वयमेव।

केवलज्ञान स्वतै लियो, आप स्वयंभू देव॥

ॐ ह्रीं अहं स्वयंभूदेवे नमः अर्घ्यं ॥२६०॥

समोशरण अद्भुत महा, और लहैं नहीं कोय।

धनपति रचो उछाहसों, मैं पूजूँ हूँ सोय॥

ॐ ह्रीं अहं कुबेरचितस्थानाय नमः अर्घ्यं ॥२६१॥

जाको अन्त न हो कभी, ज्ञान लक्ष्मी नाथ।

सोई शिवपुर के धनी, नमूं भाव भरि माथ॥

ॐ ह्रीं अहं अनन्तश्रीजुषे नमः अर्घ्यं ॥२६२॥

गणधरादि नित ध्यावते, पावैं शिवपुर वास।

परम ध्येय तुम नाम है, पूरैं मन की आश॥

ॐ ह्रीं अहं योगीश्वरार्चिताय नमः अर्घ्यं ॥२६३॥

परम ब्रह्म का लाभ हो, तुम पद पायो सार।

त्रिभुवन ज्ञाता हो सही, नय निश्चय व्यवहार॥

ॐ ह्रीं अहं ब्रह्मविदे नमः अर्घ्यं ॥२६४॥

सर्व तत्त्व के आदि में, ब्रह्म तत्त्व परधान।

तिसके ज्ञाता हो प्रभू, मैं बन्दूं धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अहं ब्रह्मतत्त्वाय नमः अर्घ्यं ॥२६५॥



द्रव्य भाव द्वै विधि कही, यज्ञ यजन की रीति ।
सो सब तुमहीं हेत हैं, रचत नशैं सब भीति ॥

ॐ ह्रीं अहं यज्ञपतये नमः अर्घ्यं ॥२६६॥

महादेव शिवनाथ हो, तुम को पूजत लोक ।
मैं पूजूँ हूँ भावसों, मेटों मन को शोक ॥

ॐ ह्रीं अहं शिवनाथाय नमः अर्घ्यं ॥२६७॥

कृत्य भये निज भाव मैं, सिद्ध भये सब काज ।
पायो निज पुरुषार्थ को, बन्दूँ सिद्ध समाज ॥

ॐ ह्रीं अहं कृतकृत्याय नमः अर्घ्यं ॥२६८॥

यज्ञ विधान के अंग हो, मुख नामी परधान ।
तुम बिन यज्ञ न हों कभी, पूजत होय कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अहं यज्ञाङ्गाय नमः अर्घ्यं ॥२६९॥

मरण रोग के हरण से, अमर भये हो आप ।
शरणागत को अमर कर, अमृत हो निष्पाप ॥

ॐ ह्रीं अहं अमृताय नमः अर्घ्यं ॥२७०॥

पूजन विधि अस्नान हो, पूजत शिवसुख होय ।
सुरनर नित पूजन करें, मिथ्या मति को खोय ॥

ॐ ह्रीं अहं यज्ञायनम नमः अर्घ्यं ॥२७१॥

जो हो सो सामान्य कर, धरत विशेष अनेक ।
वस्तु सुभाव यही कहो, बन्दूँ सिद्ध प्रत्येक ॥

ॐ ह्रीं अहं वस्तुत्पादकाय नमः अर्घ्यं ॥२७२॥

इन्द्र सदा तुम थुति करें, मन में भक्ति उपाय ।
सर्व शास्त्र में तुम थुति, गणधरादि करि गाय ॥

ॐ ह्रीं अहं स्तुतीश्वराय नमः अर्घ्यं ॥२७३॥

मगन रहो निज तत्व में, द्रव्य भाव विधि नाश ।
जो है सो है विविध विध, नमूं अचल अविनाश ॥

ॐ ह्रीं अहं भावाय नमः अर्घ्यं ॥२७४॥

तीन लोक सिरताज हैं, इन्द्रादिक करि पूज्य ।
धर्मनाथ प्रतिपाल जग, और नहीं है दूज्य ॥

ॐ ह्रीं अहं महपतये नमः अर्घ्यं ॥२७५॥

महाभाग सरधानतें, तुम अनुभव करि जीव ।
सो पुनि सेवत पाप तज, निजसुख लहैं सदीव ॥

ॐ ह्रीं अहं महायज्ञाय नमः अर्घ्यं ॥२७६॥

यज्ञ विधि उपदेश में, तुम अग्रेश्वर जान ।
यज्ञ रचावनहार तुम, तुम ही हो यजमान ॥

ॐ ह्रीं अहं अग्रयाजकाय नमः अर्घ्यं ॥२७७॥

तीन लोक के पूज्य हो, भक्ति भाव उर धार ।
धर्म अर्थ अरु मोक्ष के, दाता तुम हो सार ॥

ॐ ह्रीं अहं जगत्पूज्याय नमः अर्घ्यं ॥२७८॥

दया मोह पर पापतें, दूर भये स्वैतन्त्र ।
ब्रह्मज्ञान में लय सदा, जपूं नाम तुम मन्त्र ॥

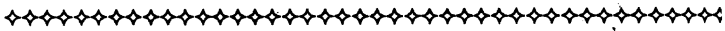
ॐ ह्रीं अहं दयायागाय नमः अर्घ्यं ॥२७९॥

तुम ही पूजन योग्य हो, तुम ही हो आराध्य ।
महा साधु सुख हेतुतें, साथें हैं निज साध्य ॥

ॐ ह्रीं अहं पूज्यार्हाय नमः अर्घ्यं ॥२८०॥

निज पुरुषारथ सधन को, तुम को अर्च्यत जक्त ।
मनवांछित दातार हो, शिवसुख पावैं भक्त ॥

ॐ ह्रीं अहं जगदर्चिताय नमः अर्घ्यं ॥२८१॥



ध्यावत हैं नितप्रति तुम्हें, देव चार परकार।

तुम देवन के देव हो, नमूं भक्ति उर धार॥

ॐ ह्रीं अहं देवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं ॥२८२॥

इन्द्र समान न भक्त हैं, तुम समान नहीं देव।

ध्यावत हैं नित भावसों, मोक्ष लहैं स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अहं शक्रार्चिताय नमः अर्घ्यं ॥२८३॥

तुम देवन के देव हो, सदा पूजने योग्य।

जे पूजत हैं भावसों, भोगैं शिवसुख भोग्य॥

ॐ ह्रीं अहं देवदेवाय नमः अर्घ्यं ॥२८४॥

तीन लोक सिरताज हो, तुम से बड़ा न कोय।

सुरनर पशु खग ध्यावते, दुविधा मन की खोय॥

ॐ ह्रीं अहं जगद्गुरवे नमः अर्घ्यं ॥२८५॥

जो हो सो हो तुम सही, नहीं समझ में आय।

सुरनर मुनि सब ध्यावते, तुम वाणी को पाय॥

ॐ ह्रीं अहं संहृतदेवसंघाचार्याय नमः अर्घ्यं ॥२८६॥

ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, ताके हो भरतार।

स्वसुगन्ध वासित रहो, कमल गन्ध की सार॥

ॐ ह्रीं अहं पद्मनन्दाय नमः अर्घ्यं ॥२८७॥

सब कुवादि वादी हते, वज्र शैल उनहार।

विजय ध्वजा फहरात है, बन्दूं भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अहं जयध्वजाय नमः अर्घ्यं ॥२८८॥

दशों दिशा परकाश है, तिन की ज्योति अमन्द।

भविजन कुमुद विकाश हो, बन्दूं पूरण चन्द॥

ॐ ह्रीं अहं भामण्डलिने नमः अर्घ्यं ॥२८९॥

चमरनि करि भक्ती करें, देव चार परकार ।

यह विभूति तुम ही विषैं, बन्दूं पाप निवार ॥

ॐ ह्रीं अहं चतुःषष्ठीचामराय नमः अर्घ्यं ॥२९०॥

देव दुन्दुभी शब्द करि, सदा करें जयकार ।

तथा आप परसिद्ध हो, ढोल शब्द उनहार ॥

ॐ ह्रीं अहं देवदुन्दुभये नमः अर्घ्यं ॥२९१॥

तुम वाणी सब मनन कर, समझत हैं इकसार ।

अक्षरार्थ नहिं भ्रम पड़े, संशय मोह निवार ॥

ॐ ह्रीं अहं वाकस्पष्टाय नमः अर्घ्यं ॥२९२॥

धनपरि रचि तुम आसनं, महा प्रभूता जान ।

तथा स्व आसन पाइयो, अचल रहो शिवथान ॥

ॐ ह्रीं अहं लब्धासनाय नमः अर्घ्यं ॥२९३॥

तीन लोक के नाथ हो, तीन छत्र विख्यात ।

भव्य जीव तुम छाँह में, सदा स्व आनन्द पात ॥

ॐ ह्रीं अहं छत्रत्रयाय नमः अर्घ्यं ॥२९४॥

पुष्प वृष्टि सुर करत हैं, तीनों काल मझार ।

तुम सुगन्ध दश दिश रमी, भविजन भ्रमर निहार ॥

ॐ ह्रीं अहं पुष्पवृष्टये नमः अर्घ्यं ॥२९५॥

देव रचित अशोक है, वृक्ष महा रमणीक ।

समोशरण शोभा प्रभु, शोक निवारण ठीक ॥

ॐ ह्रीं अहं दिव्याशोकाय नमः अर्घ्यं ॥२९६॥

मानस्तम्भ निहार के, कुमतिन मान गलाय ।

समोशरण प्रभूता कहै, नमूं भक्ति उर लाय ॥

ॐ ह्रीं अहं मानस्थम्भाय नमः अर्घ्यं ॥२९७॥



सुरदेवी संगीत कर, गावैं शुभ गुण गान ।
भक्ति भाव उर में जगें, बन्दत श्री भगवान ॥

ॐ ह्रीं अहं सङ्गीतार्हाय नमः अर्घ्य ॥२९८॥

मंगल सूचक चिह्न हैं, कहे अष्ट परकार ।
तुम समीप राजत सदा, नमूं अमंगल टार ॥

ॐ ह्रीं अहं अष्टमङ्गलाय नमः अर्घ्य ॥२९९॥

भविजन तरिये तीर्थसों, तुम हो श्री भगवान ।
कोई न भंगे आन जिन, तीर्थ-चक्रसो जान ॥

ॐ ह्रीं अहं तीर्थचक्रवर्तिने नमः अर्घ्य ॥३००॥

सम्यग्दर्शन धरत हो, निश्चय परम अगाढ़ ।
संशय आदिक मेटि के, नासो सकल बिगाढ़ ॥

ॐ ह्रीं अहं सुदर्शनाय नमः अर्घ्य ॥३०१॥

कर्त्ता हो शिव काज के, ब्रह्मा जग की रीति ।
वर्णाश्रम को थापकें, प्रगटायी शुभ नीति ॥

ॐ ह्रीं अहं कर्त्रे नमः अर्घ्य ॥३०२॥

सत्य धर्म प्रतिपाल के, पोषत हो संसार ।
यति श्रावक दो धर्म के, भये नाथ सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अहं तीर्थमन्त्रे नमः अर्घ्य ॥३०३॥

धर्म-तीर्थ मुनिराज हैं, तिन के हो तुम स्वाम ।
धर्मनाथ तुम जान के, नितप्रति करूँ प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अहं तीर्थशाय नमः अर्घ्य ॥३०४॥

लोक-तीर्थ में गिनत हैं, धर्म-तीर्थ परधान ।
सो तुम राजत सो सदा, मैं बन्दूं धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मतीर्थङ्कराय नमः अर्घ्य ॥३०५॥

तुम बिन धर्म न हो कभी, ढूँढो सकल जहान।
दश लक्षण स्वैधर्म के, तीरथ हो परधान॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मतीर्थताय नमः अर्घ्यं ॥३०६॥

धर्म-तीर्थ करतार हो, श्रावक या मुनिराज।
दोनों विधि उत्तम कहो, स्वर्ग मोक्ष के काज॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मतीर्थङ्कराय नमः अर्घ्यं ॥३०७॥

तुम से धर्म चले सदा, तुम्हीं धर्म के मूल।
सुरनर मुनि पूजें सदा, छिदहिं कर्म के शूल॥

ॐ ह्रीं अहं तीर्थप्रवर्तकाय नमः अर्घ्यं ॥३०८॥

धर्मनाथ जग में प्रगट, तारण-तरण जिहाज।
तीन लोक अधिपति कहो, बन्दूं सुख के काज॥

ॐ ह्रीं अहं तीर्थवेधसे नमः अर्घ्यं ॥३०९॥

श्रावक या मुनि धर्म के, हो दिखलावनहार।
अन्य लिंग नहीं धर्म के, बुधजन लखो विचार॥

ॐ ह्रीं अहं तीर्थविधाकाय नमः अर्घ्यं ॥३१०॥

स्वर्ग मोक्ष दातार हो, तुम्हीं मार्ग सुखदान।
अन्य कुभेषिन में नहीं, धर्म यथारथ ज्ञान॥

ॐ ह्रीं अहं सत्यतीर्थङ्कराय नमः अर्घ्यं ॥३११॥

सेवन योग्य सु जक्त में, तुम्हीं तीर्थ हो सार।
सुरनर मुनि सेवन करें, मैं बन्दूं दुःख टार॥

ॐ ह्रीं अहं तीर्थसेव्याय नमः अर्घ्यं ॥३१२॥

भवि समुद्र भवसैं तिरैं, सो तुम तीर्थ कहाय।
हो तारण तिहुँलोक में, खेवत हूँ तुम पाय॥

ॐ ह्रीं अहं तीर्थतारकाय नमः अर्घ्यं ॥३१३॥



सर्व अर्थ परकाश करि, निर इच्छा तुम बैन।
धर्म सुमार्ग प्रवर्त्त को, तुम राजत हो ऐन॥

ॐ ह्रीं अहं सत्यवाक्याधिपाय नमः अर्घ्यं ॥३१४॥

धर्म मार्ग परगट करै, सो शासन कहलाय।
सो उपदेशक आप हो, तिस संकेत कराय॥

ॐ ह्रीं अहं सत्यशासनाय नमः अर्घ्यं ॥३१५॥

अतिशय करि सर्वज्ञ हो, ज्ञानावरण विनाश।
नेमरूप भवि सुनत ही, शिवसुख करत प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अहं अप्रतिशासनाय नमः अर्घ्यं ॥३१६॥

कहै कथञ्चित्त धर्म को, स्यात वचन सुखकार।
सो प्रमाणतैं साधियो, नय निश्चय व्यवहार॥

ॐ ह्रीं अहं स्याद्वादिने नमः अर्घ्यं ॥३१७॥

निर अक्षर वाणी खिरै, दिव्य मेघ की गर्ज।
अक्षरार्थ हो परिणवै, सुन भव्यन मन अर्ज॥

ॐ ह्रीं अहं दिव्यध्वनये नमः अर्घ्यं ॥३१८॥

नय प्रमाण नहिं हतत है, तुम परकाशे अर्थ।
शिवसुख के साधन विषैं, नहीं गिनत हैं व्यर्थ॥

ॐ ह्रीं अहं अव्याहतार्थाय नमः अर्घ्यं ॥३१९॥

करै पवित्र सु आत्मा, अशुभ कर्म मल खोय।
पहुँचावै ऊँची सुगति, तुम दिखलायो सोय॥

ॐ ह्रीं अहं पुण्यवाचे नमः अर्घ्यं ॥३२०॥

तत्त्वारथ तुम भासियो, सम्यक् विषैं प्रधान।
मिथ्या जहर निवारणं, अमृत पान समान॥

ॐ ह्रीं अहं अर्थवाचे नमः अर्घ्यं ॥३२१॥

देव अतिशयसों खिरत ही, अक्षरार्थ मय होय ।
दिव्यध्वनि निश्चय करै, संशय तमको खोय ॥

ॐ ह्रीं अहं अर्द्धमागधीयुक्तये नमः अर्घ्यं ॥३२२॥

सब जीवन को इष्ट है, मोक्ष निजानन्द वास ।
सो तुमने दिखलाइयो, संशय मोह विनाश ॥

ॐ ह्रीं अहं इष्टवाचे नमः अर्घ्यं ॥३२३॥

नय प्रमाण ही कहत हैं, द्रव्य पर्याय सु भेद ।
अनेकान्त साथैं सही, वस्तु भेद निरखेद ॥

ॐ ह्रीं अहं अनेकान्तदर्शिने नमः अर्घ्यं ॥३२४॥

दुर्नय कहत एकान्त को, ताको अन्त कराय ।
सम्यक्मति प्रगटाइयो, पूजूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अहं दुर्नयान्तकाय नमः अर्घ्यं ॥३२५॥

एक पक्षे मिथ्यात्व है, ताको तिमिर निवार ।
स्यादवाद सम न्यायते, भविजन तारे पार ॥

ॐ ह्रीं अहं एकान्तध्वान्तमिदे नमः अर्घ्यं ॥३२६॥

जो हैं सो निज भाव में, रहैं सदा निरवार ।
मोक्ष साध्य में सार हैं, सम्यक् विषैं अपार ॥

ॐ ह्रीं अहं तत्त्ववाचे नमः अर्घ्यं ॥३२७॥

निज गुण निज पर्याय में, सदा रहो निरभेद ।
शुद्ध बुद्ध अव्यक्त हो, पूजूं हूँ निरखेद ॥

ॐ ह्रीं अहं पृथक्कृते नमः अर्घ्यं ॥३२८॥

स्यात्कार उद्योत कर, वस्तु धर्म निरशंस ।
तासु ध्वजा निर्विघ्न को, भाषो निधि विध्वंस ॥

ॐ ह्रीं अहं स्यात्कारध्वजावाचे नमः अर्घ्यं ॥३२९॥



परम्परा इह धर्म को, उपदेशो श्रुत द्वार।
भवि भवसागर तीर लह, पायो शिव सुखकार॥

ॐ ह्रीं अहं अहंवाचे नमः अर्घ्यं ॥३३०॥

द्रव्य दृष्टि नहीं पुरुष कृत, है अनादि परमान।
सो तुम भाष्यौ है सही, यह पर्याय सुजान॥

ॐ ह्रीं अहं अपौरुषेयवाचे नमः अर्घ्यं ॥३३१॥

नहीं चलाचल होठ हों, जिस वाणी के होत।
सो में बन्दू हों क्रिया, मोक्षमार्ग उद्योत॥

ॐ ह्रीं अहं अचलोष्ठवाचे नमः अर्घ्यं ॥३३२॥

तुम सन्तान अनादि हैं, शाश्वत नित्य स्वरूप।
तुमको बन्दू भावसों, पाऊँ शिव-सुख कूप॥

ॐ ह्रीं अहं शाश्वताय नमः अर्घ्यं ॥३३३॥

हीनाधिक वा और विधि, नहीं विरुद्धता जान।
एक रूप सामान्य है, सब ही सुख की खान॥

ॐ ह्रीं अहं अविरुद्धाय नमः अर्घ्यं ॥३३४॥

नय विवक्षते सधत हैं, सप्त भंग निरवाध।
सो तुम भास्यो नमत हूँ, वस्तु रूप को साध॥

ॐ ह्रीं अहं सप्तभंगीवाचे नमः अर्घ्यं ॥३३५॥

अक्षर बिन वाणी खिरे, सर्व अर्थ करि युक्त।
भविजन निज सरधानतें, पावैं जगतें मुक्त॥

ॐ ह्रीं अहं अवर्णगिरे नमः अर्घ्यं ॥३३६॥

क्षुद्र तथा अक्षुद्र मय, सब भाषा परकाश।
तुम मुखतें खिरकै करै, भर्म तिमिर को नाश॥

ॐ ह्रीं अहं सर्वभाषामयगिरे नमः अर्घ्यं ॥३३७॥

कहने योग्यँ समर्थ सब, अर्थ करै परकाश ।
तुम वाणी मुखतें खिरे, करै भरम तमनाश ॥

ॐ ह्रीं अहं व्यक्तगिरे नमः अर्घ्यं ॥३३८॥

तुम वाणी नहीं व्यर्थ है, भंग कभी नहीं होय ।
लगातार मुखतें खिरे, संशय तमको खोय ॥

ॐ ह्रीं अहं अमोघवाचे नमः अर्घ्यं ॥३३९॥

वस्तु अनन्त पर्याय है, वचन अगोचर जान ।
तुम दिखलाये सहज ही, हरे कुमतिमतिवान ॥

ॐ ह्रीं अहं अवाच्यानन्तवाचे नमः अर्घ्यं ॥३४०॥

वचन अगोचर गुण धरो, लहैं न गणधर पार ।
तुम महिमा तुमहीं विषैं, मुझ तारो भवपार ॥

ॐ ह्रीं अहं अवाचे नमः अर्घ्यं ॥३४१॥

तुम सम वचन न कहि सकैं, असदमती छदमस्थ ।
धर्ममार्ग प्रगटाइयो, मेटो कुमति समस्त ॥

ॐ ह्रीं अहं अद्वैतगिरे नमः अर्घ्यं ॥३४२॥

सत्यप्रिय तुम बैन है, हितमित भविजन हेत ।
सो मुनिजन तुम ध्यावते, पावैं शिवपुर खेत ॥

ॐ ह्रीं अहं सूनृतगिरे नमः अर्घ्यं ॥३४३॥

नहीं साँच नहिं झूठ हैं, अनुभय वचन कहात ।
सो तीर्थङ्कर ध्वनि कही, सत्यारथ सत बात ॥

ॐ ह्रीं अहं सत्यानुभयगिरे नमः अर्घ्यं ॥३४४॥

मिथ्या अर्थ प्रकाश करि, कुगिरा ताको नाम ।
सत्यारथ उद्योत कर, सुगिरा ताको नाम ॥

ॐ ह्रीं अहं सुगिरे नमः अर्घ्यं ॥३४५॥



जोजन एक चहू दिशा, हो वाणी विस्तार।
श्रवण सुनत भविजन लहैं, आनन्द हिये अपार॥

ॐ ह्रीं अहं योजनव्यापिगिरे नमः अर्घ्य ॥३४६॥

निर्मल क्षीर समान हैं, गौर श्वेत तुम बैन।
पाप मलिनता रहित हैं, सत्य प्रकाशक ऐन॥

ॐ ह्रीं अहं क्षीरगौरगिरे नमः अर्घ्य ॥३४७॥

तीर्थ तत्त्व जो नहिं तजै, तारण भविजन वान।
यातें तीर्थङ्कर प्रभू, नमत पाप मल हान॥

ॐ ह्रीं अहं तीर्थतत्त्वगिरे नमः अर्घ्य ॥३४८॥

उत्तमार्थ पर्याय करि, आत्म तत्त्व को जान।
सो तुम सत्यारथ कहो, मुनिजन उत्तम मान॥

ॐ ह्रीं अहं परमार्थगवे नमः अर्घ्य ॥३४९॥

भव्यनि के श्रवनि सुखद, तुम वाणी सुख देन।
मैं बन्दू हूँ भावसों, धर्म बतायो एन॥

ॐ ह्रीं अहं भव्यैकश्रवणगिरे नमः अर्घ्य ॥३५०॥

संशय विभ्रम मोह को, नाश करे निर्मूल।
सत्य वचन परमाण तुम, छेदत मिथ्या शूल॥

ॐ ह्रीं अहं सद्गवे नमः अर्घ्य ॥३५१॥

तुम वाणी में प्रगट है, सब सामान्य विशेष।
नाना विध सुन तर्क में, संशय रहै न शेष॥

ॐ ह्रीं अहं चित्रगवे नमः अर्घ्य ॥३५२॥

परम कहैं उतकृष्ट को, अर्थ होय गम्भीर।
सो तुम वाणी में खिरै, बन्दत भवदधि तीर॥

ॐ ह्रीं अहं परमार्थगवे नमः अर्घ्य ॥३५३॥

मोह क्षोभ परशान्त हो, तुम वाणी उरधार ।
भविजन को सन्तुष्ट कर, भव आताप निवार ॥

ॐ ह्रीं अहं प्रशान्तगवे नमः अर्घ्य ॥३५४॥

बारह सभा सु प्रश्न कर, समाधान करतार ।
मिथ्यामति विध्वंस करि, बन्दूं मन में धार ॥

ॐ ह्रीं अहं प्राश्नकगिरे नमः अर्घ्य ॥३५५॥

महापुरुष महादेव हो, सुरनर पूजन योग ।
वाणी सुन मिथ्यात तज, पावैं शिवसुख भोग ॥

ॐ ह्रीं अहं याण्यश्रुतये नमः अर्घ्य ॥३५६॥

शिवमग उपदेशक सुश्रुत, मन में अर्थ विचार ।
साक्षात् उपदेश तुम, तारे भविजन पार ॥

ॐ ह्रीं अहं सुश्रुतये नमः अर्घ्य ॥३५७॥

तुम समान तिहुँलोक में, नहीं अर्थ परकाश ।
भविजन सम्बोधे सदा, मिथ्यामति को नाश ॥

ॐ ह्रीं अहं महाश्रुतये नमः अर्घ्य ॥३५८॥

जो निज आत्म-कल्याण में, बरतै सो उपदेश ।
धर्म नाम तिस जानियो, बन्दूं चरण हमेश ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मश्रुतये नमः अर्घ्य ॥३५९॥

जिन शासन के अधिपति, शिवमारग बतलाय ।
वा भविजन सन्तुष्ट करि, बन्दूं तिनके पाँय ॥

ॐ ह्रीं अहं श्रुतपतये नमः अर्घ्य ॥३६०॥

धारण हो उपदेश के, केवलज्ञान संयुक्त ।
शिवमारग दिखलात हो, तुम को बन्दन युक्त ॥

ॐ ह्रीं अहं श्रुत्यूद्धर्त्रे नमः अर्घ्य ॥३६१॥



जैसे हो तैसो कहो, परम्पराय सु रीति।
सत्यारथ उपदेशतें, धर्म मार्ग की रीति॥

ॐ ह्रीं अहं ध्रुवश्रुतये नमः अर्घ्यं ॥३६२॥

मोक्षमार्ग को देखियो, औरन को दिखलाय।
तुमसम हितकारक नहीं, बन्दूं हूँ तिन पाँय॥

ॐ ह्रीं अहं निर्वाणमार्गोपदेशकाय नमः अर्घ्यं ॥३६३॥

स्वर्ग मोक्ष मारग कहो, यति श्रावक को धर्म।
तुम को बन्दत सुख महा, लहैं ब्रह्मपद परम॥

ॐ ह्रीं अहं यतिश्रावकमार्गदेशकाय नमः अर्घ्यं ॥३६४॥

तत्त्व अतत्त्व सु जानियो, तुम सब ही परतक्ष।
निज आतम सन्तुष्ट हो, देखो लक्ष अलक्ष॥

ॐ ह्रीं अहं तत्त्वमार्गदूशे नमः अर्घ्यं ॥३६५॥

सार तत्त्व वर्णन कियो, अयथार्थ मत नाश।
स्व-पर प्रकाशक हो महा, बन्दे तिन को दास॥

ॐ ह्रीं अहं सारतत्त्वयथार्थाय नमः अर्घ्यं ॥३६६॥

आप तीर्थ औरन प्रति, सर्व तीर्थ करतार।
उत्तम शिवपुर पहुँचना, यही विशेषण सार॥

ॐ ह्रीं अहं परमोत्तमतीर्थकृते नमः अर्घ्यं ॥३६७॥

दृष्टा लोकालोक के, रेखा हस्त समान।
युगपत सब को देखिये, कियो भर्म तम हान॥

ॐ ह्रीं अहं दृष्टे नमः अर्घ्यं ॥३६८॥

जिनवाणी के रसिक हो, तासों रति दिन रैन।
भोगोपभोग करो सदा, बन्दत हूँ सुख चैन॥

ॐ ह्रीं अहं वाग्मीश्वराय नमः अर्घ्यं ॥३६९॥

जो संसार-समुद्र से, पार करत सो धर्म ।
तुम उपदेश्या धर्मकूं, नमत मिटै भव भर्म ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मशासनकाय नमः अर्घ्य ॥३७०॥

धर्म रूप उपदेश है, भवि जीवन हितकार ।
मैं बन्दूं तिन को सदा, करो भवार्णव पार ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मदेशकाय नमः अर्घ्य ॥३७१॥

सब विद्या के ईश हो, पूरन ज्ञान सु जान ।
तिन को बन्दूं भाव से, पाऊँ ज्ञान महान ॥

ॐ ह्रीं अहं वागीश्वराय नमः अर्घ्य ॥३७२॥

सुमति नार भरतार हो, कुमति कुसौत विडार ।
मैं पूजूँ हूँ भावसों, पाऊँ सुमति सार ॥

ॐ ह्रीं अहं त्रयीनाथाय नमः अर्घ्य ॥३७३॥

धर्म अर्थ अरु मोक्ष के, हो दाता भगवान ।
मैं नित प्रति पाइन परूँ, देहु परम कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिभङ्गीशाय नमः अर्घ्य ॥३७४॥

गिरा कहैं जिन वचन को, तिसका अन्त सु धर्म ।
मोक्ष करै भविजनन को, नाशौ मिथ्या भर्म ॥

ॐ ह्रीं अहं गिरापतये नमः अर्घ्य ॥३७५॥

जाकी सीमा मोक्ष है, पूरण सुख स्थान ।
शरणागत को सिद्ध है, नमूं सिद्ध धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अहं सिद्धाङ्गाय नमः अर्घ्य ॥३७६॥

नय प्रमाणसों सिद्ध है, तुम वाणी रवि सार ।
मिथ्या तिमिर निवारकैं, करै भव्य जन पार ॥

ॐ ह्रीं अहं सिद्धवाङ्मयाय नमः अर्घ्य ॥३७७॥

निज पुरुषारथ साध के, सिद्ध भये सुखकार।
मन-वच-तन करि मैं नमूं, करो जगत से पार॥

ॐ ह्रीं अहं सिद्धाय नमः अर्घ्यं ॥३७८॥

सिद्ध करै निज अर्थ को, तुम शासन हितकार।
भविजन मानैं सरदहैं, करैं कर्म रज छार॥

ॐ ह्रीं अहं सिद्धशासनाय नमः अर्घ्यं ॥३७९॥

तीन लोक में सिद्ध है, तुम प्रसिद्ध सिद्धान्त।
अनेकान्त परकाश कर, नाशै मिथ्या ध्वान्त॥

ॐ ह्रीं अहं जगत्प्रसिद्धसिद्धांताय नमः अर्घ्यं ॥३८०॥

ओंकार यह मन्त्र है, तीन लोक परसिद्ध।
तुम साधक कहलात हो, जपत मिलैं नखनिद्ध॥

ॐ ह्रीं अहं सिद्धमन्त्राय नमः अर्घ्यं ॥३८१॥

सिद्ध यज्ञ को कहत है, संशय विभ्रम नाश।
मोक्षमार्ग में ले धरै, निजानन्द परकाश॥

ॐ ह्रीं अहं सिद्धवाचे नमः अर्घ्यं ॥३८२॥

मोहरूप मलसो दुरी, वाणी कही पवित्र।
भव्य स्वच्छता धारि के, लहैं मोक्षपद तत्र॥

ॐ ह्रीं अहं शुचिवाचे नमः अर्घ्यं ॥३८३॥

कर्ण विषय होत ही, करै आत्म-कल्याण।
तुम वाणी शुचिता धरै, नमें सन्त धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अहं शुचिश्रवसे नमः अर्घ्यं ॥३८४॥

वचन अगोचर पद धरो, कहते पण्डित लोग।
तुम महिमा तुम ही विषे, सदा बन्दने योग्य॥

ॐ ह्रीं अहं निरुक्तोक्ताय नमः अर्घ्यं ॥३८५॥

सुरनर मानें आन सब, तुम आज्ञा शिर धार।
मानो तन्त्र विधान करि, बान्धे एक लगाार ॥

ॐ ह्रीं अहं तन्त्रकृते नमः अर्घ्य ॥३८६॥

जाकरि निश्चय कीजिए, वस्तु प्रमेय अपार।
सो तुम से परगट भयो, न्याय शास्त्र रुचि धार ॥

ॐ ह्रीं अहं न्यायशास्त्रकृते नमः अर्घ्य ॥३८७॥

गुण अनन्त पर्याय युत, द्रव्य अनन्तानन्त।
युगपत जानो श्रेष्ठ युत, धरो महा सुखवन्त ॥

ॐ ह्रीं अहं महाज्येष्ठाय नमः अर्घ्य ॥३८८॥

तुम पद पावै सो महा, तुम गुण पार लहाय।
शिवलक्ष्मी के नाथ हो, पूजूं तिनके पाँय ॥

ॐ ह्रीं अहं महानन्दाय नमः अर्घ्य ॥३८९॥

तुम सम कविकर जगत में, और न दूजो कोय।
गणधर से श्रुतकार भी, अर्थ लहैं नहीं सोय ॥

ॐ ह्रीं अहं कवीन्द्राय नमः अर्घ्य ॥३९०॥

हित करता षट् काय के, महा इष्ट-तुम बैन।
तुम को बन्दूं भावसों, मोक्ष महासुख दैन ॥

ॐ ह्रीं अहं महेष्ठाय नमः अर्घ्य ॥३९१॥

मोक्ष दान दातार हो, तुम सम कौन महान।
तीनलोक तुम को जजैं, मन में आनन्द ठान ॥

ॐ ह्रीं अहं महानन्ददात्रे नमः अर्घ्य ॥३९२॥

द्वादशांग श्रुत को रचैं, गणधर से कविराज।
तुम आज्ञा शिर धार के, नमूं निजातम काज ॥

ॐ ह्रीं अहं कवीश्वराय नमः अर्घ्य ॥३९३॥



देव महा ध्वनि करत हैं, तुम सन्मुख धर भाव।
केवल अतिशय कहत हैं, मैं पूजूँ युत चाव॥

ॐ ह्रीं अहं दुन्दुभीश्वराय नमः अर्घ्य ॥३९४॥

इन्द्रादिक नित पूजते, भक्ति पूर्व शिर नाथ।
त्रिभुवननाथ कहात हो, हम पूजत नित पाँय॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिभुवननाथाय नमः अर्घ्य ॥३९५॥

गणी मुनीश फणीशपति, कल्पेन्द्रन के नाथ।
अहमिन्द्रन के नाथ हो, तुमहि नमूँ धरि माथ॥

ॐ ह्रीं अहं महानाथाय नमः अर्घ्य ॥३९६॥

भिन्न-भिन्न देख्यो सकल, लोकालोक अनन्त।
तुम दस दृष्टि न और की, तुमैं नमें नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अहं परदृष्टे नमः अर्घ्य ॥३९७॥

सब जग के भरतार हो, मुनि गण में परधान।
तुम को पूजैं भावसों, होत सदा कल्याण॥

ॐ ह्रीं अहं जगत्पतये नमः अर्घ्य ॥३९८॥

श्रावक या मुनिराज हो, तुम आज्ञा शिर धार।
वरते वृष पुरुषार्थ में, पूजत हूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अहं स्वामिने नमः अर्घ्य ॥३९९॥

धर्म कार्य करता सही, हो ब्रह्मा परमार्थ।
मालिक हो तिहुँलोक के, पूजनीक सत्यार्थ॥

ॐ ह्रीं अहं कत्रे नमः अर्घ्य ॥४००॥

तीन लोक के नाथ हो, शरणागत प्रतिपाल।
चार संघ के अधिपति, पूजूँ हूँ नमि भाल॥

ॐ ह्रीं अहं चतुर्विधसंघाधिपतये नमः अर्घ्य ॥४०१॥

तुम सम और विभव नहीं, धरो चतुष्ट्र अनंत ।
क्यों न करो उद्धार अब, दास कहावै संत ॥

ॐ ह्रीं अहं अद्वितीयविभवधारकाय नमः अर्घ्यं ॥४०२॥
जामें विघन न हो कभी, ऐसी श्रेष्ठ विभूति ।
पाई निज पुरुषार्थ करि, पूजत शुभ करतूत ॥

ॐ ह्रीं अहं प्रभवे नमः अर्घ्यं ॥४०३॥
तुम सम शक्ति न और की, शिवलक्ष्मी को पाय ।
भोगें सुख स्वाधीन कर, बन्दूं तिन के पाँय ॥

ॐ ह्रीं अहं अद्वितीयशक्तिधारकाय नमः अर्घ्यं ॥४०४॥
तुम से अधिक न और में, पुरुषार्थ कहूँ पाय ।
हो अधीश सब जगत के, बन्दूं तिन के पाय ॥

ॐ ह्रीं अहं अधीश्वराय नमः अर्घ्यं ॥४०५॥
अग्रेश्वर चउ संघ के, शिवनायक शिरमौर ।
पूजत हूँ नित भावसों, शीश दोऊ कर जोर ॥

ॐ ह्रीं अहं अधीशाय नमः अर्घ्यं ॥४०६॥
सहज सुभाव प्रयत्न बिन, तीन लोक आधीश ।
शुद्ध सुभाव विराजते, बन्दूं पद धर शीश ॥

ॐ ह्रीं अहं सर्वाधीशाय नमः अर्घ्यं ॥४०७॥
छायक सुमति सुहावनी, बीजभूत तिस जान ।
तुमसैं शिवमारग चलै, मैं बन्दूं धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अहं अधीशिन्त्रे नमः अर्घ्यं ॥४०८॥
स्वयं बुद्ध शिवनाथ हो, धर्म तीर्थ करतार ।
तुम सम सुमति न को धरै, मैं बन्दूं निरधार ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मतीर्थकत्रे नमः अर्घ्यं ॥४०९॥

पूरण शक्ति सुभाव धर, पूरण ब्रह्म प्रकाश।
पूरण पद पायो प्रभू, पूजत पाप विनाश॥

ॐ ह्रीं अहं पूर्णपदप्राप्ताय नमः अर्घ्यं ॥४१०॥

तुम से अधिक न और हैं, त्रिभुवन ईश कहाय।
तीन लोक अत्यन्त सुख, पायो बन्दूं ताय॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिलोकाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥४११॥

तीन लोक पूजत चरण, ईश्वर तुम को जान।
में पूजों हों भावसों, सब से बड़े महान॥

ॐ ह्रीं अहं ईश्वराय नमः अर्घ्यं ॥४१२॥

सूरज सम परकाश कर, मिथ्या तम परिहार।
भविजन कमल प्रबोध का, पायो निज हितकार॥

ॐ ह्रीं अहं ईशाय नमः अर्घ्यं ॥४१३॥

क्रीडा करि शिवमार्ग में, पाय परम पद आप।
आज्ञा भंग न हो कभी, बन्दत नाशें पाप॥

ॐ ह्रीं अहं इन्द्राय नमः अर्घ्यं ॥४१४॥

उत्तम हो तिहुँलोक में, सब के हो शिरताज।
शरणागत प्रतिपाल हो, पूजूँ आतम काज॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं ॥४१५॥

अधिक भूति के हो धनी, सर्व सुखी निरधार।
सुरनर तुम पद को लहैं, पूजत हूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अहं अधिभुवे नमः अर्घ्यं ॥४१६॥

तीन लोक कल्याण कर, धर्म मार्ग चितलाय।
सब देवन के देव हो, महादेव सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अहं महेश्वराय नमः अर्घ्यं ॥४१७॥

महा ईश महाराज हो, महा प्रताप धराय ।
महा जीव पूजें चरण, सब जन शरण सहाय ॥

ॐ ह्रीं अहं महेशाय नमः अर्घ्य ॥४१८॥

परम कहो उत्कृष्ट को, धर्म तीर्थ बरताय ।
परमेश्वर यातें भये, बन्दूं तिन के पाँय ॥

ॐ ह्रीं अहं परमेश्वर नमः अर्घ्य ॥४१९॥

तुम समान कोई नहीं, जग ईश्वर जगनाथ ।
महा विभव ऐश्वर्य को, धरो नमूं निज माथ ॥

ॐ ह्रीं अहं महेशित्रे नमः अर्घ्य ॥४२०॥

चार प्रकारन में सदा, देव तुमहैं शिर नाय ।
सब देवन में श्रेष्ठ हो, नमूं युगल तुम पाँय ॥

ॐ ह्रीं अहं अधिदेवाय नमः अर्घ्य ॥४२१॥

तुम सम्मान नहिं देव अरु, तुम देवन के देव ।
यो महान पदवी धरौ, तुम पूजत हूँ एव ॥

ॐ ह्रीं अहं महादेवाय नमः अर्घ्य ॥४२२॥

शिवमारग तुम में सही, देश पूजने योग ।
सहचारो तुम सुगुण हैं, और कुदेव अयोग ॥

ॐ ह्रीं अहं देवाय नमः अर्घ्य ॥४२३॥

तीन लोक पूजत चरण, तुम आज्ञा शिरधार ।
त्रिभुवन ईश्वर हो सही, मैं पूजूँ निरधार ॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घ्य ॥४२४॥

विश्वपती तुम को नमें, निज कल्याण विचार ।
सर्व विश्व के तुम पति, मैं पूजूँ उर धार ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वेशाय नमः अर्घ्य ॥४२५॥



जगत जीव कल्याण कर, लोकालोक अनन्द ।

षट्कायिक आह्लाद कर, जिम कुमोदनी चन्द ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वभूतेशाय नमः अर्घ्य ॥४२६॥

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुम को पूजत आन ।

यातें तुम विश्वेश हो, साँच नमूं धर ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वेनाय नमः अर्घ्य ॥४२७॥

विश्व बन्ध दृढ़ तोड़ के, विश्व शिखर ठहराय ।

चरण कमल तल जगत है, यूं सब पूजत पाय ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वेश्वराय नमः अर्घ्य ॥४२८॥

शिव मारग की रीति तुम, बरतायो शुभ योग ।

तिहुँकाल तिहुँलोक में, और कुनीति अयोग ॥

ॐ ह्रीं अहं अधिराजे नमः अर्घ्य ॥४२९॥

लोक तिमिर हर सूर्य हो, तारण लोक जिहाज ।

लोकशिखर राजत प्रभू, मैं बन्दूं हित काज ॥

ॐ ह्रीं अहं लोकेश्वराय नमः अर्घ्य ॥४३०॥

तीन लोक प्रतिपाल हो, तीन लोक हितकार ।

तीन लोक तारण-तरण, तीन लोक सरदार ॥

ॐ ह्रीं अहं लोकपतये नमः अर्घ्य ॥४३१॥

लोक पूज्य सुखकार हो, पूजत हैं हित धार ।

मैं पूजो नित भावसों, करो भवार्णव पार ॥

ॐ ह्रीं अहं लोकनाथाय नमः अर्घ्य ॥४३२॥

पूजनीक जग में सही, तुम्हें कहैं सब लोग ।

धर्म मार्ग प्रगटित कियो, यातें पूजन योग ॥

ॐ ह्रीं अहं जगपूज्याय नमः अर्घ्य ॥४३३॥

ऊरध अधो सु मध्य है, तीन भाग यह लोक ।
तिन में तुम उत्कृष्ट हो, तुम्हें देत नित थोक ॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घ्यं ॥४३४॥

तुम समान समरथ नहीं, तीन लोक में और ।
स्वयं शिवालय राजते, स्वामी हो शिरमौर ॥

ॐ ह्रीं अहं लोकेशाय नमः अर्घ्यं ॥४३५॥

जगत नाथ जग ईश हो, जगपति पूजें पाय ।
मैं पूजूँ नित भाव युत, तारण-तरण सहाय ॥

ॐ ह्रीं अहं जगन्नाथाय नमः अर्घ्यं ॥४३६॥

महा भूति इस जगत में, धारत हो निरभंग ।
सब विभूति जग जीतिकें, पायो सुख सरबंग ॥

ॐ ह्रीं अहं जगत्प्रभवे नमः अर्घ्यं ॥४३७॥

मुनि मन करण पवित्र हो, सब विभाव को नाश ।
तुम को अंजुलि जोर कर, नमूं होत अघ नाश ॥

ॐ ह्रीं अहं पवित्राय नमः अर्घ्यं ॥४३८॥

मोक्ष रूप परधान हो, ब्रह्म ज्ञान परवीन ।
बन्ध रहित शिवसुख सहित, नमें सन्त आधीन ॥

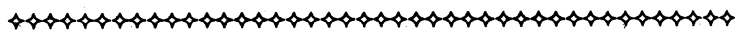
ॐ ह्रीं अहं पराक्रमाय नमः अर्घ्यं ॥४३९॥

जामें जन्म-मरण नहीं, लोकोत्तर कियो वास ।
अचल सुथिर राजैं सदा, निजानन्द परकाश ॥

ॐ ह्रीं अहं परतराय नमः अर्घ्यं ॥४४०॥

मोहादिक रिपु जीति के, विजयवन्त कहलाय ।
जैत्र नाम परसिद्ध है, बन्दूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अहं जैत्रे नमः अर्घ्यं ॥४४१॥



रक्षक हो षट् काय के, कर्म शत्रु क्षयकार।
विजय लक्ष्मी नाथ हो, मैं पूजूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अहं जिष्णवे नमः अर्घ्यं ॥४४२॥

कर्त्ता हो विधि कर्म के, हरता पाप विशेष।
पुण्य पाप सु विभाग कर, भ्रम नहीं राखो लेश॥

ॐ ह्रीं अहं कर्त्रे नमः अर्घ्यं ॥४४३॥

स्वानन्द ज्ञान विनाश बिन, अचल सुथिर रहैं राज।
अविनाशी अविकार हो, बन्दूं निज हित काज॥

ॐ ह्रीं अहं अविनश्चराय नमः अर्घ्यं ॥४४४॥

इन्द्रादिक पूजित चरन, महा भक्ति उर धार।
तुम महान ऐश्वर्य को, धारत हो अधिकार॥

ॐ ह्रीं अहं प्रभविष्णवे नमः अर्घ्यं ॥४४५॥

गुण समूह गुरुता धरैं, महा भाग सुख रूप।
तीन लोक कल्याण कर, पूजूँ हूँ शिव भूप॥

ॐ ह्रीं अहं भ्राजिष्णवे नमः अर्घ्यं ॥४४६॥

महा विभव को धरत हैं, हितकारण मितकार।
धर्मनाथ परमेश हो, पूजत हूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अहं प्रभुष्णवे नमः अर्घ्यं ॥४४७॥

बिन कारण असहाय हो, स्वयं प्रभा अविरुद्ध।
तुम को बन्दूं भावसों, निज आतम कर शुद्ध॥

ॐ ह्रीं अहं स्वयंप्रभाय नमः अर्घ्यं ॥४४८॥

लोकवास को नास कर, लोक सम्बन्ध निवार।
अचल विराजैं शिवपुरी, पूजत हूँ उर धार॥

ॐ ह्रीं अहं लोकजिते नमः अर्घ्यं ॥४४९॥



विश्व नाम संसार है, जन्म-मरण सो होय ।
सोई व्याधि बिनासियो, जजुँ जोर कर दोय ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वजिते नमः अर्घ्य ॥४५०॥

विषय कषाय निवार के, जग सम्बन्ध विनाश ।
जनम-मरण बिन ध्रुव लसैं, नमूँ ज्ञान परकाश ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वजैत्रे नमः अर्घ्य ॥४५१॥

विश्व वास तुम जीतियो, विश्व नमावै शीश ।
पूजत हैं हम भक्तिसों, जयवन्तो जगदीश ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वविजेये नमः अर्घ्य ॥४५२॥

इन्द्रादिक जिनको नमें, ते तुम शीश नवाय ।
विश्वजीत तुम नाम है, शरणागत सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वजित्वाय नमः अर्घ्य ॥४५३॥

तीन लोक की लक्ष्मी, तुम चरणाम्बुज ठौर ।
यातैं सब जग जीति के, राजत हो शिरमौर ॥

ॐ ह्रीं अहं जगज्जेत्राय नमः अर्घ्य ॥४५४॥

तीन लोक कल्याण कर, कर्मशत्रु को जीति ।
भव्यन प्रति आनन्द कर, मेटत तिनकी भीति ॥

ॐ ह्रीं अहं जगज्जिणवे नमः अर्घ्य ॥४५५॥

जग जीवन को अन्ध कर, फैलो मिथ्या घोर ।
धर्म मार्ग प्रगटाय कर, पहुँचायो शिव ठौर ॥

ॐ ह्रीं अहं जगन्नेत्रे नमः अर्घ्य ॥४५६॥

मोहादिक जिन जीतियो, सोई जगमय नाम ।
सो तुम पद पायो महा, तुम पद करूँ प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अहं जगज्जयिने नमः अर्घ्य ॥४५७॥



जो तुम धर्म प्रगट करि, जिय आनन्दित होय ।

अग्र भये कल्याण कर, तुम पद प्रणमूं सोय ॥

ॐ ह्रीं अहं अग्रण्ये नमः अर्घ्य ॥४५८॥

रक्षा करि षट् काय की, विषय कषाय न लेश ।

त्रास हरो जमराज को, जयवन्तो गुण शेष ॥

ॐ ह्रीं अहं दयामूर्तये नमः अर्घ्य ॥४५९॥

सत्य असत्य लखना करै, सोई नेत्र लहाय ।

पुद्गल नेत्र न नेत्र हो, साँचे नेत्र सुखाय ॥

ॐ ह्रीं अहं दिव्यनेत्राय नमः अर्घ्य ॥४६०॥

सुरनर मुनि तुम ज्ञानतैं, जानैं निज कल्याण ।

ईश्वर हो सब जगत के, आनन्द सम्पति खान ॥

ॐ ह्रीं अहं अधीश्वराय नमः अर्घ्य ॥४६१॥

धर्माभास मनोक्त के, मूल नाश कर दीन ।

सत्य मार्ग बतलाइयो, कियो भव्य सुख लीन ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मनायकाय नमः अर्घ्य ॥४६२॥

ऋद्धि न में परसिद्ध हैं, केवल ऋद्धि महान ।

सो तुम पायो सहज ही, योगीश्वर मुनि मान ॥

ॐ ह्रीं अहं ऋद्धीशाय नमः अर्घ्य ॥४६३॥

जो प्राणी संसार में, तिन सब के हितकार ।

आनन्दसों सब नमत हैं, पावैं भवदधि पार ॥

ॐ ह्रीं अहं भूतनाथाय नमः अर्घ्य ॥४६४॥

प्राणिन के भरतार हो, दुःख टारन सुखकार ।

तुम आश्रय करि जीव सब, आनन्द लहैं अपार ॥

ॐ ह्रीं अहं भूतभर्त्रे नमः अर्घ्य ॥४६५॥

सत्य धर्म के मार्ग हो, ज्ञान मात्र निरशंस।
तुम ही आश्रय पाय के, रहै न अघ को अंश॥

ॐ ह्रीं अहं जगत्पात्रे नमः अर्घ्यं ॥४६६॥

अतुल वीर्य स्वशक्ति हो, जीते कर्म जरार।
तुम सम बल नहीं और में, होउ सहाय अवार॥

ॐ ह्रीं अहं अतुलबलाय नमः अर्घ्यं ॥४६७॥

धर्म मूर्ति धरमातमा, धर्म तीर्थ बरताय।
स्व सुभाव सो धर्म है, पायो सहज उपाय॥

ॐ ह्रीं अहं वृषाय नमः अर्घ्यं ॥४६८॥

हिंसा को वर्जित करें, जे अपराध महान।
परिग्रह अर आरम्भ के, त्यागी श्रीभगवान॥

ॐ ह्रीं अहं परिग्रहत्यागीजिनाय नमः अर्घ्यं ॥४६९॥

सर्व सिद्ध तुम सुलभ कर, पावो स्वयं उपाय।
साँचै हौ वश करण को, जग में मन्त्र कराय॥

ॐ ह्रीं अहं मन्त्रकृते नमः अर्घ्यं ॥४७०॥

जितने कछु शुभ चिह्न हैं, दीप्त अशेष स्वरूप।
शुभ लक्षण सोहत अति, सहजे तुम शिव भूप॥

ॐ ह्रीं अहं शुभलक्षणाय नमः अर्घ्यं ॥४७१॥

लोकविषैं तुम मार्गसो, मानत हैं बुधिवन्त।
तर्क हेतु करुणा लियैं, यातें माने सन्त॥

ॐ ह्रीं अहं लोकाध्यक्षाय नमः अर्घ्यं ॥४७२॥

काहू के वश में नहीं, काहूँ नमत न शीश।
कठिन रीति धारैं प्रभू, नमूं सदा जगदीश॥

ॐ ह्रीं अहं दुराधर्षाय नमः अर्घ्यं ॥४७३॥



दासनि को प्रतिपाल कर, शरणागत हितकार ।
भविदुःखियन को पोष कर, दियो अखै पद सार ॥

ॐ ह्रीं अहं भव्यबन्धवे नमः अर्घ्यं ॥४७४॥

निराकरण करि कर्म को, सरल सिद्धगति धार ।
शिव थल जाय सुवास लहि, धर्म द्रव्य सहकार ॥

ॐ ह्रीं अहं निरस्तकाय नमः अर्घ्यं ॥४७५॥

मुनि ध्यावैं पावैं सुपद, निकट भव्य धरि ध्यान ।
पावैं निज कल्याण हित, ध्यान योग तुम मान ॥

ॐ ह्रीं अहं परमध्येयजिनाय नमः अर्घ्यं ॥४७६॥

रक्षक हो जग के सदा, धर्म दान दातार ।
पोषित हो सब जीव के, बन्दू भाव लगाार ॥

ॐ ह्रीं अहं जगत्तापहराय नमः अर्घ्यं ॥४७७॥

मोह प्रचण्ड बली जयो, अतुल वीर्य भगवान ।
शीघ्र गमन करि शिव गये, नमूं हेत कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अहं मोहारिजाय नमः अर्घ्यं ॥४७८॥

तीन लोक शिर मौर तुम, सब पूजत हरषाय ।
परमेश्वर हो जगत के, बन्दत हूं नित पाय ॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिजगत्परमेश्वराय नमः अर्घ्यं ॥४७९॥

लोकशिखर पर अचल नित, राजत हैं तिहुँकाल ।
सर्वोत्तम आसन लियो, लोक शिरोमणि भाल ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वासिने नमः अर्घ्यं ॥४८०॥

विश्वभूति प्राणी के, ईश्वर हैं भगवान ।
सब के शिर पर पग धरैं, सर्व आन तिन मान ॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वभूतेशाय नमः अर्घ्यं ॥४८१॥

मोक्ष सम्पदा होत ही, नित अक्षय ऐश्वर्य ।
कौन मूढ़ कौड़ी लहै, सर्वोत्तम धनवर्य ॥

ॐ ह्रीं अहं विभवाय नमः अर्घ्यं ॥४८२॥

त्रिभुवन ईश्वर हो तुम्हीं, और जीव हैं रंक ।
तुम तज चाहै और को, एसो की बुध बंक ॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घ्यं ॥४८३॥

उत्तरोत्तर तिहूँलोक मैं, दुर्लभ लब्धि कराय ।
तुम पद दुर्लभ कठिन है, महा भाग सों पाय ॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिजगदुर्लभाय नमः अर्घ्यं ॥४८४॥

बढवारी परणामसो, पूर्ण अभ्युदय पाय ।
भई अनन्त विशुद्धता, भये विशुद्ध अथाय ॥

ॐ ह्रीं अहं अभ्युदाय नमः अर्घ्यं ॥४८५॥

तीन लोक मंगल करण, दुःखहारण सुखकार ।
हम को मंगल द्यो महा, पूजों बारम्बार ॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिजगन्मंगलोदयाय नमः अर्घ्यं ॥४८६॥

आप धर्म के सामने, और धर्म छुप जाँय ।
धर्म चक्र आयुध धरो, शत्रु नाश तब पाँय ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मचक्रायुधाय नमः अर्घ्यं ॥४८७॥

सत्य शक्त तुम ही सही, सत्य पराक्रम जोर ।
है प्रसिद्ध इस जगत में, कर्म शत्रु शिरमौर ॥

ॐ ह्रीं अहं सद्योजाताय नमः अर्घ्यं ॥४८८॥

मंगलमय मंगल करण, तीन लोक विख्यात ।
सुमरण ध्यान सुकरत ही, सकल पाप नशिजात ॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिलोकमंगलाय नमः अर्घ्यं ॥४८९॥



द्रव्य भाव दऊ वेद बिन, स्वातम रति सुख मान ।
पर आलिंगन रतिकरण, निरइच्छुक भगवान ॥

ॐ ह्रीं अहं अवेदाय नमः अर्घ्य ॥४९०॥

घातिरहित स्वपर दया, निजानन्द रसलीन ।
सुखसों अवगाहन करैं, सन्त चरण आधीन ॥

ॐ ह्रीं अहं प्रतिघाताय नमः अर्घ्य ॥४९१॥

निजानन्द स्व देश में, खण्ड-खण्ड नहीं होय ।
पूरण अविनाशी सुखी, पूजत हूँ भ्रम खोय ॥

ॐ ह्रीं अहं अछेद्याय नमः अर्घ्य ॥४९२॥

सिद्ध समान सु शुभ नहीं, और नाम विख्यात ।
कभू न जग में जन्म फिर, सोई दृढ़ कहलात ॥

ॐ ह्रीं अहं दृढीयसे नमः अर्घ्य ॥४९३॥

जन्म-मरण के कष्ट से, सर्व लोक भयवन्त ।
ताको नाश अभय करण, तुम्हें नमें जिय सन्त ॥

ॐ ह्रीं अहं अभयङ्कराय नमः अर्घ्य ॥४९४॥

ज्ञानानन्द स्व लक्ष्मी, भोगत हो निरखेद ।
महा भोग यातें भये, हैं स्वाधीन अवेद ॥

ॐ ह्रीं अहं महाभोगाय नमः अर्घ्य ॥४९५॥

असाधारण असमान हो, सर्वोत्तम उतकृष्ट ।
परसों भिन्न अभिन्न हो, पायो पद अविनष्ट ॥

ॐ ह्रीं अहं निरौपम्याय नमः अर्घ्य ॥४९६॥

दश लक्षण शुभ धर्म के, राजसम्पदा भोग ।
नायक हो जिन-धर्म के, पूजि नमें तिहूँ योग ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मसाम्राज्यनायकाय नमः अर्घ्य ॥४९७॥

अधिपतिस्वामिस्वभावनिज, परकृत भावविडार ।

तिहूँ वेद रति मान बिन, सम्पूरण सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अहं निर्वेदप्रवृत्ताय नमः अर्घ्यं ॥४९८॥

यथायोग पद पाइयो, यथायोग्य सम्पूर्ण ।

नमूं त्रियोग संभारिके, करूँ पाप मल चूर्ण ॥

ॐ ह्रीं अहं संपूर्णयोगिने नमः अर्घ्यं ॥४९९॥

सब इन्द्रिय मन रोककैं, आरोहण तिस भाव ।

श्रेणी उच्च चढ़ाव में, तत्पर अन्त सु पाव ॥

ॐ ह्रीं अहं समारोहणतत्पराय नमः अर्घ्यं ॥५००॥

एकाश्रय निज धर्म में, परसों भिन्न सदीव ।

सहज स्वभाव विराजते, सिद्धराज सब जीव ॥

ॐ ह्रीं अहं सामायिकाय नमः अर्घ्यं ॥५०१॥

राग द्वेष बिन सहज ही, राजत शुद्ध स्वभाव ।

मन विकल्प नहीं भाव में, पूजत हों धरि चाव ॥

ॐ ह्रीं अहं सामायिकिने नमः अर्घ्यं ॥५०२॥

निजानन्द निज लक्ष्मी, भोगत ग्लानि न होय ।

अतुल वीर्य परभावतैं, परमादी नहिं होय ॥

ॐ ह्रीं अहं निष्प्रमादाय नमः अर्घ्यं ॥५०३॥

है अनादि सन्तान करि, कभी भयो नहिं आदि ।

नित्य शिवालय पूर्णता, बसैं जगत अघ वादि ॥

ॐ ह्रीं अहं अकृताय नमः अर्घ्यं ॥५०४॥

पर पदार्थ नहिं इष्ट हैं, निजपद में लवलीन ।

विघ्न हरण मंगल करण, तुम पद मस्तक दीन ॥

ॐ ह्रीं अहं परमभावाय नमः अर्घ्यं ॥५०५॥



नित्य शौच सन्तोष मय, पर पदार्थसों रोक ।
निश्चय सम्यक् भावमय, हैं प्रधान द्युं धोक ॥

ॐ ह्रीं अहं प्रधानाय नमः अर्घ्यं ॥५०६॥

ज्ञान ज्योति निज धरत हो, निश्चल परम सु ठाम ।
लोकालोक प्रकाश कर, मैं बन्दूं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं अहं स्वभासपरभासनाय नमः अर्घ्यं ॥५०७॥

एक स्थान सु थिर सदा, निश्चय चारत भूप ।
शुध उपयोग प्रभावतें, कर्म खिपावन रूप ॥

ॐ ह्रीं अहं प्राणायामचरणाय नमः अर्घ्यं ॥५०८॥

विषय स्वादसों हट रहैं, इन्द्री मन थिर होय ।
निज आतम लवलीन हैं, शुद्ध कहावैं सोय ॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्धप्रत्याहाराय नमः अर्घ्यं ॥५०९॥

इन्द्री विषय न वश रहैं, निज आतम लवलाय ।
सो जितेन्द्र स्वाधीन हैं, बन्दूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अहं जितेन्द्रियाय नमः अर्घ्यं ॥५१०॥

ध्यान विषैं सो धारणा, निज आतम थिर धार ।
ताके अधिपति हो महा, भये भवार्णव पार ॥

ॐ ह्रीं अहं धारणाधीश्वराय नमः अर्घ्यं ॥५११॥

रागादिक मल नाशिकें, ध्यान सु धर्म लहाय ।
अचल रूप राजैं सदा, बन्दूं मन-वच-काय ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मध्याननिष्ठाय नमः अर्घ्यं ॥५१२॥

निजानन्द में मगन हैं, पर पद राग निवार ।
समदृष्टी राजत सदा, हमें करो भव पार ॥

ॐ ह्रीं अहं समाधिराजे नमः अर्घ्यं ॥५१३॥



वीतराग निर्विकल्प हैं, ज्ञान उदय निरशंस।
समरस भाव परम सुखी, नमत मिटैं दुःख अंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्फुरितसमरसीभावाय नमः अर्घ्यं ॥५१४॥

एकै रूप विराजते, नय विकल्प नहिं ठोर।
वचन अगोचर शुद्धता, पाप विनाशो मोर॥

ॐ ह्रीं अहं एकीभावनयरूपाय नमः अर्घ्यं ॥५१५॥

परम दिगम्बर मुनि महा, समदृष्टी मुनिनाथ ।
ध्यावैं पावैं परम पद, नमूं जोर जुग हाथ ॥

ॐ ह्रीं अहं निर्ग्रन्थनाथाय नमः अर्घ्यं ॥५१६॥

योग साधि योगी भये, तिन को इन्द्र महान ।
ध्यावत पावत परम पद, पूजत निज कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अहं योगीन्द्राय नमः अर्घ्यं ॥५१७॥

शिव मारग सिद्धान्त के, पार भये मुनि ईश।
तारण-तरण जिहाज हो, तुम्हें नमूं नित शीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं ऋषये नमः अर्घ्यं ॥५१८॥

निज स्वरूप को साधि कर, साधु भये जग माहिं ।
निजपर हितकर गुण धरैं, तीन लोक नमि ताहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं साधवे नमः अर्घ्यं ॥५१९॥

रागादिक रिपु जीति के, भये यती शुभ नाम।
धर्म धुरन्धर परम गुरु, जुगपद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं पतये नमः अर्घ्यं ॥५२०॥

पर-संपतिसूं विमुख हो, निजपद रुचि करि नेम ।
मुनि मन रञ्जन पद महा, तुम धारत हो एम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मुनये नमः अर्घ्यं ॥५२१॥



महा श्रेष्ठ मुनिराज हो, निज पद पायौ सार।

महा परम निरग्रन्थ हो, पूजत हूँ मन धार॥

ॐ ह्रीं अहं महर्षिणे नमः अर्घ्यं ॥५२२॥

साधु भार दुर गमन है, ताहि उठावन हार।

शिव-मंदिर पहुँचात हो, महाबली सुखकार॥

ॐ ह्रीं अहं साधुधौरेयाय नमः अर्घ्यं ॥५२३॥

इन्द्री मन-जित जे जती, तिन के हो तुम नाथ।

परम्परा मरजाद धर, देहु हमें निज साथ॥

ॐ ह्रीं अहं यतिनाथाय नमः अर्घ्यं ॥५२४॥

चार संघ मुनिराज के, ईश्वर हो परधान।

पर हित कर सामर्थ्य हो, निज सम करि भगवान॥

ॐ ह्रीं अहं मुनीश्वराय नमः अर्घ्यं ॥५२५॥

गणधरादि सेवक महा, तिन आज्ञा शिरधार।

समकित ज्ञान सु लक्ष्मी, पावत हैं निरधार॥

ॐ ह्रीं अहं महामुनये नमः अर्घ्यं ॥५२६॥

महामुनी सर्वस्व हो, धर्म मूर्ति सरवांग।

तिन को बन्दूं भाव युत, पाऊँ मैं धर्मार्ग॥

ॐ ह्रीं अहं महामौनिने नमः अर्घ्यं ॥५२७॥

इष्टानिष्ट विभाव बिन, समदृष्टी स्वध्यान।

मगन रहैं निज पद विषैं, ध्यान रूप भगवान॥

ॐ ह्रीं अहं महाध्यानिने नमः अर्घ्यं ॥५२८॥

स्व सुभाव नहीं त्याग हैं, नहीं ग्रहण पर माहिं।

पाप कलाप न आप में, परम शुद्ध नमूं ताहि॥

ॐ ह्रीं अहं महाव्रतिने नमः अर्घ्यं ॥५२९॥

क्रोध प्रकृति विनाश के, धरैं क्षमा निज भाव ।

समरस स्वाद सु लहत हैं, बन्दूं शुद्ध स्वभाव ॥

ॐ ह्रीं अहं महाक्षमाय नमः अर्घ्यं ॥५३०॥

मोह रूप सन्तान बिन, शीतल महा स्वभाव ।

पूरण सुख आकुल नहीं, बन्दूं मन धर चाव ॥

ॐ ह्रीं अहं महाशीतलाय नमः अर्घ्यं ॥५३१॥

मन इन्द्रिय के क्षोभ बिन, महा शांति सुख रूप ।

निज पद रमण स्वभाव नित, मैं बन्दूं शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अहं महाशान्ताय नमः अर्घ्यं ॥५३२॥

मन इन्द्रिय को दमन कर, पायो ज्ञान अतीन्द्र ।

स्वाभाविक स्वैशक्ति कर, बन्दूं भये जिनेन्द्र ॥

ॐ ह्रीं अहं महादमाय नमः अर्घ्यं ॥५३३॥

पर पदार्थ को क्लेश तजि, व्यापैं निजपद माहिं ।

स्वच्छ स्वभाव विराजते, पूजत हूँ नित ताहि ॥

ॐ ह्रीं अहं निर्लेपाय नमः अर्घ्यं ॥५३४॥

संशयादि दृष्टी नहीं, सम्यक् ज्ञान मझार ।

सब पदार्थ प्रत्यक्ष लख, महा तुष्ट सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अहं निर्भान्ताय नमः अर्घ्यं ॥५३५॥

शांति रूप निज शांति गुण, सो तुम्हीं में पाय ।

निज मन शांति सुभाव धर, पूजत हूँ युग पाय ॥

ॐ ह्रीं अहं प्रशान्ताय नमः अर्घ्यं ॥५३६॥

मुनि श्रावक द्वै धर्म के, तुम अधिपति शिवनाथ ।

भविजन को आनन्द करि, तुम्हें नवाऊँ माथ ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घ्यं ॥५३७॥



दया नीति बरताइयो, सुखी किये जगजीव ।

कल्पित राग ग्रसत नहीं, जानत मार्ग सदीव ॥

ॐ ह्रीं अहं दयाध्वजाय नमः अर्घ्यं ॥५३८॥

केवल ब्रह्म स्वरूप हो, अन्तर बाह्य अदेह ।

ज्ञान ज्योति घन नमत हूँ, मन-वच-तन धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं अहं ब्रह्मयोनये नमः अर्घ्यं ॥५३९॥

स्वयं बुद्ध अविरुद्ध हो, स्वयं ज्ञान परकाश ।

निज परभाव दिखात हो, दीपक सम प्रतिभास ॥

ॐ ह्रीं अहं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घ्यं ॥५४०॥

रागादिक मल मेटियो, महापवित्र सुखाय ।

शुद्ध स्वभाव धरै करै, सुरनर श्रुति न अघाय ॥

ॐ ह्रीं अहं पूतात्मने नमः अर्घ्यं ॥५४१॥

वीतराग श्रद्धानता, सम्पूरण वैराग ।

द्वेष रहित शुभ गुण सहित, रहूँ सदा पग लाग ॥

ॐ ह्रीं अहं स्नातकाय नमः अर्घ्यं ॥५४२॥

माया मद आदिक हरे, भये शुद्ध सुख खाद ।

निर्मल भाव थकी जजुँ, होत पाप की हान ॥

ॐ ह्रीं अहं अमदभावाय नमः अर्घ्यं ॥५४३॥

अतुल वीर्य जा ज्ञान में, सूर्य समान प्रकाश ।

मोक्षनाथ निज धर्म जुत, स्व ऐश्वर्य विलास ॥

ॐ ह्रीं अहं परमैश्वर्याय नमः अर्घ्यं ॥५४४॥

मत्सर क्रोध जु ईरषा, परम द्वेष परभाव ।

सो तुम नाशो सहज ही, निन्दित दुःखित विभाव ॥

ॐ ह्रीं अहं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं ॥५४५॥



धरम भार सिर धार कर, समाधान परकाज।

तुम सम श्रेष्ठ न धर्म अरु, तारण-तरण जिहाज ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मवृषाय नमः अर्घ्यं ॥५४६॥

क्रोध कर्म जड से नसौ, भयो क्षोभ सब दूर।

महाशान्ति स्वरूप हो, पूजत अघ सब चूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं ॥५४७॥

इष्टमिष्ट बादर झरी, विद्युत विध कर खण्ड।

जिष्णु महाकल्याण कर, शिवमग भाग प्रचण्ड ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाविधिखण्डाय नमः अर्घ्यं ॥५४८॥

अमृतमय तुम जन्म है, लोक तुष्टताकार।

जन्म कल्याणक इन्द्र कर, क्षीर नीर कर धार॥

ॐ ह्रीं अहं अमृतोद्भवाय नमः अर्घ्यं ॥५४९॥

इन्द्री विषय सुविषहरण, काम पिशाच विडार।

मूर्तीक शुभ मन्त्र हो, देव जजैं हित धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं मन्त्रमूर्तये नमः अर्घ्यं ॥५५०॥

सौम्य दशा प्रगटी घनी, जाति विरोधी जीव।

बैर छांड समभाव धर, सेवत चरण सदीव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वेरसौम्यभावाय नमः अर्घ्यं ॥५५१॥

पराधीन इन्द्री बिना, राग विरोध निवार ।

हो स्वाधीन न कर्ण पर, स्वयं सिद्ध सुखकार॥

ॐ ह्रीं अहं स्वतन्त्राय नमः अर्घ्यं ॥५५२॥

ब्रह्मरूप नहीं बाह्य तन, संभव ज्ञान स्वरूप।

स्वयं प्रकाश विलास धर, राजत अमल अनूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मसंभवाय नमः अर्घ्यं ॥५५३॥



आनन्दधार सु मगन है, सब विकल्प दुःख टार।

पर आश्रित नहीं भाव है, पूजूं आनन्द धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रसन्नाय नमः अर्घ्यं ॥५५४॥

परिपूरण गुण सीम हैं, सर्व शक्ति भण्डार।

तुम से सुगुण न शेष हैं, जो न होय सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुणांबुधये नमः अर्घ्यं ॥५५५॥

ग्रहण त्याग को भाव तज, शुभ वा अशुभ अभेद।

व्याधिकार है वस्तु में, तुम्हें नमूं निरखेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यपापनिरोधकाय नमः अर्घ्यं ॥५५६॥

सूक्ष्म रूप अलक्ष है, गणधर आदि अगम्य।

आप गुप्त परमात्मा, इन्द्रिय द्वार अरम्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाअगम्यसूक्ष्मरूपाय नमः अर्घ्यं ॥५५७॥

अन्तर गुप्त स्व आत्मरस, ताको पान करात।

पर प्रवेश नहीं रञ्ज है, केवल मग्न सु जात॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं ॥५५८॥

निज कारक निज कर्णकर, निजपद निज आधार।

सिद्ध कियो निज रस लियो, पूजत हूँ हितकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धात्मने नमः अर्घ्यं ॥५५९॥

नित्य उदै बिन अस्त हो, पूरण दुति घन आप।

ग्रह न राहू जास शशि, सो हो हर सन्ताप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरुपप्लवाय नमः अर्घ्यं ॥५६०॥

लियो अपूरव लाभ को, अचल भये सुखधाम।

पूज रचैं जे भावसों, पूर्ण होइ सब काम॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोदकौय नमः अर्घ्यं ॥५६१॥

ॐ ह्रीं अहं सदायोगाय नमः अर्घ्यं ॥५६९॥



स्वामृत रस को पान करि, भोगत हैं निज स्वाद ।
पर निमित्त चाहैं नहीं, करै न तिन को याद ॥

ॐ ह्रीं अहं सदाभोगाय नमः अर्घ्यं ॥५७०॥

निर उपाधि निज धर्म में, सदा रहैं सुखकार ।
रत्नत्रय की मूरती, अनागार आगार ॥

ॐ ह्रीं अहं सदाधृतये नमः अर्घ्यं ॥५७१॥

रागद्वेष नहिं मूल है, है मध्यस्थ स्वभाव ।
ज्ञाता दृष्टा जगत के, पर सों नहीं लगाव ॥

ॐ ह्रीं अहं परमौदासीत्रे नमः अर्घ्यं ॥५७२॥

आदि अन्त बिन बहत है, परम धाम निरधार ।
अन्तर परत एक छिन, निज सुख परमाधार ॥

ॐ ह्रीं अहं शाश्वताय नमः अर्घ्यं ॥५७३॥

मूल देह आकृति रहैं, हो नहिं अन्य प्रकार ।
सत्याशन इम नाम है, पूजूं भक्ति लगाव ॥

ॐ ह्रीं अहं सत्याशनाय नमः अर्घ्यं ॥५७४॥

परम शांति सुखमय सदा, क्षोभ रहित तिस स्वाम ।
तीनलोक प्रति शांति कर, तुमपद करूँ प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अहं शान्तिनायकाय नमः अर्घ्यं ॥५७५॥

काल अनन्तानन्त करि, रुल्यो जीव जगमाहिं ।
आत्मज्ञान नहिं पाइयो, तुम पायो है ताहि ॥

ॐ ह्रीं अहं अपूर्वविद्याय नमः अर्घ्यं ॥५७६॥

यथाख्यात चारित्र को, जानो मानो भेद ।
आत्मज्ञान केवल थकी, पायो पद निरभेद ॥

ॐ ह्रीं अहं योगज्ञाय नमः अर्घ्यं ॥५७७॥

धर्मरूप सर्वस्व हो, राजत शुद्ध स्वभाव ।

धर्ममूर्ति तुम को नमूं, पाऊं मोक्ष उपाव ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्ममूर्तये नमः अर्घ्यं ॥५७८॥

स्व आत्म परदेश में, अन्य मिलाप न होय ।

आकृति है निज धर्म की, निज विभाव को खोय ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मदेहाय नमः अर्घ्यं ॥५७९॥

स्वामी हो निज आत्म के, अन्य सहाय न पाय ।

स्वयं सिद्ध परमात्मा, हम पर होउ सहाय ॥

ॐ ह्रीं अहं ब्रह्मेशाय नमः अर्घ्यं ॥५८०॥

निज पुरुषारथ करि लियो, मोक्ष परम सुखकार ।

करना था सो करि चुके, तिष्ठैं सुख आधार ॥

ॐ ह्रीं अहं कृतकृतये नमः अर्घ्यं ॥५८१॥

असाधारण तुम गुण धरत, इन्द्रादिक नहीं पाय ।

लोकोत्तम बहु मान्य हो, बन्दूं हूँ युग पाय ॥

ॐ ह्रीं अहं गुणात्मकाय नमः अर्घ्यं ॥५८२॥

तुम गुण परम प्रकाश कर, तीनलोक विख्यात ।

सूर्य समान प्रतापधर, निरावरण उघरात ॥

ॐ ह्रीं अहं निरावरणगुणप्रकाशाय नमः अर्घ्यं ॥५८३॥

समय मात्र नहीं आदि हैं, बहैं अनादि अनन्त ।

तुम प्रवाह इस जगत में, तुम्हें नमैं नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अहं निर्मिमेषाय नमः अर्घ्यं ॥५८४॥

योग द्वार बिन करम रज, चढै न निज परदेश ।

ज्यों बिन छिद्र न जल ग्रहैं, नवका शुद्ध हमेश ॥

ॐ ह्रीं अहं निराश्रवाय नमः अर्घ्यं ॥५८५॥



परम ब्रह्म पद पाइयो, पूरण ज्ञान प्रकाश।
तीनलोक के जीव सब, पूजे चरण निवास॥

ॐ ह्रीं अहं महाब्रह्मपतये नमः अर्घ्यं ॥५८६॥

द्रव्य पर्यार्थिक नय दोऊ, साधत वस्तु स्वरूप।
गुण अनन्त अवरोध कर, कहत सरूप अनूप॥

ॐ ह्रीं अहं सुनयतत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं ॥५८७॥

सूर्य समान प्रकाश कर, कर्म दुष्ट हनि सूर।
शरण गही तुम चरण की, करो ज्ञान दुति पूर॥

ॐ ह्रीं अहं सूरये नमः अर्घ्यं ॥५८८॥

तुम सम और न जगत में, सत्यारथ तत्त्वज्ञ।
सम्यग्ज्ञान प्रभावते, हो अदोष सर्वज्ञ॥

ॐ ह्रीं अहं तत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं ॥५८९॥

तीनलोक हितकार हो, शरणागत प्रतिपाल।
भव्यनि मन आनन्द करि, बन्दूं दीनदयाल॥

ॐ ह्रीं अहं महामित्राय नमः अर्घ्यं ॥५९०॥

समता सुख में मगन हैं, राग-द्वेष संक्लेश।
ताको नाशि सुखी भये, युगयुग जयो जिनेश॥

ॐ ह्रीं अहं साम्यभावधारकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥५९१॥

निरावरण निज ज्ञान में, संशय विभ्रम नाहिं।
सम्यग्ज्ञान प्रकाशते, वस्तु प्रमाण दिखाय॥

ॐ ह्रीं अहं प्रक्षीणबंधाय नमः अर्घ्यं ॥५९२॥

एक रूप परकाश कर, दुविधि भाव विनशाय।
पर निमित्त लवलेश नहीं, बन्दूं तिनके पाय॥

ॐ ह्रीं अहं निर्द्वन्द्वाय नमः अर्घ्यं ॥५९३॥

मुनि विशेष स्नातक कहै, परमात्म परमेश ।
तुम ध्यावत निर्वाणपद, पावै भविक हमेश ॥

ॐ ह्रीं अहं स्नातकपरमर्षये नमः अर्घ्यं ॥५९४॥

पञ्च प्रकार शरीर बिन, दीप्त रूप निजरूप ।
सुर मुनि मन रमणीय हैं, पूजत हूँ शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अहं अनङ्गाय नमः अर्घ्यं ॥५९५॥

द्वय प्रकार बन्धन रहित, बन्दू मोक्ष सरूप ।
भविजन बन्ध विनाश कर, देहो मोक्ष अनूप ॥

ॐ ह्रीं अहं निर्वाणाय नमः अर्घ्यं ॥५९६॥

सुगुण रत्न की राश के, आप महा भण्डार ।
अगम अथाह विराजते, बन्दू भाव विचार ॥

ॐ ह्रीं अहं सागराय नमः अर्घ्यं ॥५९७॥

मुनिजन ध्यावै भावयुत, महा मोक्षपद साध ।
सिद्ध भये मैं नमत हूँ, चहू संघ आराध ॥

ॐ ह्रीं अहं महासाधवे नमः अर्घ्यं ॥५९८॥

ज्ञान ज्योति प्रतिभास में, रागादिक मल नाहिं ।
विशद अनूपम लसत हो, दीप्त ज्योति शिवराहिं ॥

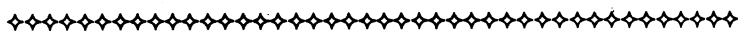
ॐ ह्रीं अहं विमलाभाय नमः अर्घ्यं ॥५९९॥

द्रव्यभाव मल नाश कर, शुद्ध निरञ्जन देव ।
निज आत्म में रमत हो, आश्रय बिन स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्धात्मने नमः अर्घ्यं ॥६००॥

शुद्ध अनन्त चतुष्ट गुण, धरत तथा शिवनाथ ।
श्रीधर नाम कहात हो, हरिहर नावत माथ ॥

ॐ ह्रीं अहं श्रीधराय नमः अर्घ्यं ॥६०१॥



मरणदिक भय ये सदा, रक्षित हैं भगवान।
स्वयं प्रकाश बिलास में, राजत सुख की खान॥

ॐ ह्रीं अहं मरणभयनिवारणाय नमः अर्घ्यं ॥६०२॥

राग-द्वेष नहीं भाव में, शुद्ध निरञ्जन आप।
ज्यों के त्यों तुम धिर रहो, तनक न व्यापै पाप॥

ॐ ह्रीं अहं अमलाभावाय नमः अर्घ्यं ॥६०३॥

भवसागर से पार हो, पहुँचे शिवपद तीर।
भाव सहित तिन नमत हूँ, लहूँ न फुनि भवपीर॥

ॐ ह्रीं अहं उद्धराय नमः अर्घ्यं ॥६०४॥

अग्निदेव या अग्नि दिश, ताके देव विशेष।
ध्यावत हैं तुम चरणयुग, इन्द्रादिक सुर शेष॥

ॐ ह्रीं अहं अग्निदेवाय नमः अर्घ्यं ॥६०५॥

विषय कषाय न रज्ज है, निरावरण निरमोह।
इन्द्री मन को दमन कर, बन्दू सुन्दर सोह॥

ॐ ह्रीं अहं संयमाय नमः अर्घ्यं ॥६०६॥

मोक्षरूप कल्याण कर, सुख-सागर के पार।
महादेव स्वैशक्ति धर, विद्या तिय भरतार॥

ॐ ह्रीं अहं शिवाय नमः अर्घ्यं ॥६०७॥

पुष्प भेंट धर जजत सुर, निज कर अंजुलि जोड़।
कमलापति कर कमल में, धरै लक्ष्मी होड़॥

ॐ ह्रीं अहं पुष्पांजलये नमः अर्घ्यं ॥६०८॥

पूरण ज्ञानानन्द मय, अजर अमर अमलान।
अविनासी ध्रुव अखिलपद, अविकारी सब मान॥

ॐ ह्रीं अहं शिवगुणाय नमः अर्घ्यं ॥६०९॥

रोग शोक भय आदि बिन, राजत नित आनन्द ।
खेद रहित रति अरति बिन, विकसत पूरणचन्द्र ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्साहजिनाय नमः अर्घ्यं ॥६१०॥

जो गुण शक्ति अनन्त है, ते सब ज्ञान मझार ।
एक मिष्ट आकृति विविध, सोहत हैं अविकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥६११॥

परम पूज्य परधान हैं, पर शक्ति आधार ।
परम पुरुष परमात्मा, परमेश्वर सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घ्यं ॥६१२॥

दोष अपोष अरोष हो, सम तन्तोष अलोष ।
पञ्च परमपद धारियत, भविजन को परिपोष ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घ्यं ॥६१३॥

पञ्चकल्याणक युक्त हैं, समोशरण ले आदि ।
इन्द्रादिक नित करत हैं, तुम गुण गण अनुवाद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं यशोधराय नमः अर्घ्यं ॥६१४॥

कृष्ण नाम तीर्थेश हैं, भावी काल कहाय ।
सुमति गोपियन संग रमत, निज लीला दर्शाय ॥

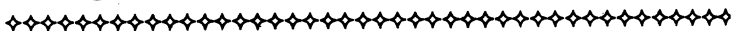
ॐ ह्रीं अर्हं कृष्णाय नमः अर्घ्यं ॥६१५॥

सम्यग्ज्ञान समाधि धर, मिथ्या मोह निवार ।
परहितकर उपदेश है, निश्चय नय व्यवहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानमतये नमः अर्घ्यं ॥६१६॥

वीतराग सर्वज्ञ हैं, उपदेशक हितकार ।
सत्यारथ परमाण कर, अन्य सुमति दातार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धमतये नमः अर्घ्यं ॥६१७॥



मायाचार न शल्य है, शुद्ध सरल परिणाम।
ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत हैं अभिराम॥

ॐ ह्रीं अहं भद्राय नमः अर्घ्यं ॥६१८॥

शील स्वभाव सु जन्म लै, अन्त समय निरवाण।
भविजन आनन्दकार हैं, सर्व कलुषता हान॥

ॐ ह्रीं अहं शान्तिजिनाय नमः अर्घ्यं ॥६१९॥

धरम रूप अवतार हो, लोक पाप को भार।
मृतक स्थल पहुँचाइयो, सुलभ कियो सुखकार॥

ॐ ह्रीं अहं वृषभाय नमः अर्घ्यं ॥६२०॥

अन्तर बाहिर शत्रु को, निमिष पौ नहिं जोर।
विजय लक्ष्मी नाथ हो, पूजुँ द्वय कर जोर॥

ॐ ह्रीं अहं अजिताय नमः अर्घ्यं ॥६२१॥

तीनलोक आनन्द हो, श्रेष्ठ जन्म तुम होत।
स्वर्ग मोक्ष दातार हो, पावत नहीं कुमोत॥

ॐ ह्रीं अहं संभवाय नमः अर्घ्यं ॥६२२॥

परम सुखी तुम आप हो, पर आनन्द कराय।
तुमको पूजत भावसों, मोक्ष लक्ष्मी पाय॥

ॐ ह्रीं अहं अभिनन्दनाय नमः अर्घ्यं ॥६२३॥

सब कुवादि एकान्त को, नाश कियो छिन माहिं।
भविजन मन संशय हरण, और लोक में नाहिं॥

ॐ ह्रीं अहं सुमतये नमः अर्घ्यं ॥६२४॥

भविजन मधुकर कमल हो, धरत सुगन्ध अपार।
तीनलोक में विस्तरी, सुयश नाम की धार॥

ॐ ह्रीं अहं पद्मप्रभाय नमः अर्घ्यं ॥६२५॥

पारस लोहा हेम करि, तुम भव बन्ध निवार।
मोक्ष हेतु तुम श्रेष्ठ गुण, धारत हो हितकार॥

ॐ ह्रीं अहं सुपार्श्वाय नमः अर्घ्यं ॥६२६॥

तीन लोक आताप हर, मुनि मन मोदन चन्द।
लोकप्रिय अवतार हो, पाऊँ सुख तुम बन्द॥

ॐ ह्रीं अहं चन्द्रप्रभाय नमः अर्घ्यं ॥६२७॥

मन मोहन सोहन महा, धारैँ रूप अनूप।
दरशत मन आनन्द हो, पायो निज रस कूप॥

ॐ ह्रीं अहं पुष्पदन्ताय नमः अर्घ्यं ॥६२८॥

भव भव दाह निवार कर, शीतल भए जिनेश।
मानो अमृत सींचियो, पूजत सदा सुरेश॥

ॐ ह्रीं अहं शीतलनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६२९॥

तीर्थङ्कर श्रेयांस हम, देहो श्री शुभ भाग।
श्री सु अनन्त चतुष्ट हो, और सकल दुरभाग॥

ॐ ह्रीं अहं श्रेयांशनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६३०॥

त्रस नाड़ी या लोक में, तुम ही पूज्य प्रधान।
तुमको पूजत भावसों, पाऊँ सुख निरवाण॥

ॐ ह्रीं अहं वासपूज्याय नमः अर्घ्यं ॥६३१॥

द्रव्य भाव मल रहित हैं, महा मुनिन के नाथ।
इन्द्रादिक पूजत सदा, नमूं पदाम्बुज माथ॥

ॐ ह्रीं अहं विमलनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६३२॥

जाको पार न पाइयो, गणधर और सुरेश।
थकित रहे असमर्थ करि, प्रणमें सन्त हमेश॥

ॐ ह्रीं अहं अनन्तनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६३३॥



अनागार आगार के, उद्धारक जिनराज।
धर्मनाथ प्रणमूं सदा, पाऊं शिवसुख साज॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६३४॥

शान्ति रूप पर शान्ति कर, कर्म दाह विनिवार।
शान्ति हेत बन्दूं सदा, पाऊं भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अहं शान्तिनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६३५॥

क्षुद्र वीर्य सब जीव के, रक्षक हैं तीर्थेश।
शरणागत प्रतिपाल कर, ध्यावैं सदा सुरेश॥

ॐ ह्रीं अहं कुन्थुनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६३६॥

पूजनीक सब जगत के, मंगलकारक देव।
पूजत हैं हम भावसों, विनशैं अघ स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अहं अरहनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६३७॥

मोह काम भट जीतियो, जिन जीतो सब लोक।
लोकोत्तम जिनराज के, नमूं चरण दे धोक॥

ॐ ह्रीं अहं मल्लिनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६३८॥

पञ्च पाप को त्याग करि, भव्य जीव आनन्द।
भये जासु उपदेशतें, पूजत हूँ पद वृन्द॥

ॐ ह्रीं अहं मुनिसुव्रताय नमः अर्घ्यं ॥६३९॥

सुरनर मुनि नित नमत करि, जान धरम अवतार।
तिनको पूजूँ भाव युत, लहूँ भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं अहं नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६४०॥

नेम धर्म में नित रमें, धर्मधुरा भगवान।
धर्मचक्र जग में फिरे, पहुँचावैं शिव थान॥

ॐ ह्रीं अहं नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६४१॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रभाय नमः अर्घ्यं ॥६४९॥



आतमीक निज गुण लिये, दीप्ति सरूप अनूप ।
स्वयं ज्योति परकाशमय, वन्दत हूँ शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अर्ह स्वयंप्रभाय नमः अर्घ्य ॥६५०॥

निज शक्ति निज करण हैं, साधन बाह्य अनेक ।
मोह सुभट क्षय करन को, आयुध राशि विवेक ॥

ॐ ह्रीं अर्ह सर्वायुधाय नमः अर्घ्य ॥६५१॥

जयजय सुर धुनि करत हैं, तथा विजय निधिदेव ।
तुम पद जे नर नमत हैं, पावैं सुख स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अर्ह जयदेवाय नमः अर्घ्य ॥६५२॥

तुम सम प्रभा न और में, धरो ज्ञान परकाश ।
नाथ प्रभा जग में भ्रमत, नमत मोहतम नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्ह प्रभादेवाय नमः अर्घ्य ॥६५३॥

रक्षक हो षट्काय के, दया सिन्धु भगवान ।
शशिसम जिय आह्लाद करि, पूजनीक धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्ह उङ्गकाय नमः अर्घ्य ॥६५४॥

समाधान सब के करैं, द्वादश सभा मझार ।
सर्व अर्थ परकाश कर, दिव्य-ध्वनि सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्ह प्रश्नकीर्तये नमः अर्घ्य ॥६५५॥

काहू विधि बाधा नहीं, कबहूँ नहीं व्यय होय ।
उन्नति रूप विराजते, जयवन्तो जग सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्ह जयाय नमः अर्घ्य ॥६५६॥

केवल ज्ञान स्वभाव में, लोकत्रय इक भाग ।
पूरणता को पाइयो, छाँड़ि सकल अनुराग ॥

ॐ ह्रीं अर्ह पूर्णबुद्धाय नमः अर्घ्य ॥६५७॥

पर आलिंगन भाव तज, इच्छा क्लेश विडार ।
निज सन्तोष सुखी सदा, पर सम्बन्ध निवार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कषायाय नमः अर्घ्यं ॥६५८॥

मोहादिक मल नाशकर, अतिशय करि अमलार ।
विमल जिनेश्वर मैं नमूं, तीनलोक परधान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलप्रभाय नमः अर्घ्यं ॥६५९॥

स्वैपद में नित रमत हैं, कभी न आरति होय ।
अतुल वीर्य विधि जीतियो, नमूं जोर कर दोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाबलाय नमः अर्घ्यं ॥६६०॥

द्रव्य भाव मल कर्म हैं, ताको नाश करान ।
शुद्ध निरञ्जन हो रहै, ज्यों बादल बिन भान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मलाय नमः अर्घ्यं ॥६६१॥

तुम चित्राम अरूप है, सुरनर साधु अगम्य ।
निराकार निर्लेप है, धारत भाव असम्य ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगुप्ताय नमः अर्घ्यं ॥६६२॥

मग्न भये निज आत्म में, पर पद में नहीं वास ।
लक्ष अलक्ष विराजते, पूरो मन की आश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं समाधिगुप्तये नमः अर्घ्यं ॥६६३॥

निज गुण आतम ज्ञान है, पर सहाय नहीं चाह ।
स्वयं भाव परकाशियो, नमत मिटै भव दाह ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं ॥६६४॥

मन मोहन सोहन महा, मुनि मन रमण अनन्द ।
महातेज परताप हैं, पूरण ज्योति अमन्द ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कन्दर्पाय नमः अर्घ्यं ॥६६५॥



विजय लक्ष्मी नाथ हैं, जीते कर्म प्रधान।
तिनके पूजै सर्व जग, मैं पूजों धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अहं विजयनाथाय नमः अर्घ्यं ॥६६६॥

गणधरादि योगीश जे, विमलाचारी सार।
तिनके स्वामी हो प्रभु, राग-द्वेष मल जार॥

ॐ ह्रीं अहं विमलेशाय नमः अर्घ्यं ॥६६७॥

दिव्य अनक्षर ध्वनि खिरै, सर्व अर्थ गुणधार।
भविजन मन संशय हरन, शुद्ध बोध आधार॥

ॐ ह्रीं अहं दिव्यवादाय नमः अर्घ्यं ॥६६८॥

नहीं पार जा वीर्य को, स्वाभाविक निरधार।
सो सहजै गुण धरत हो, नमूं लहूं भवपार॥

ॐ ह्रीं अहं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं ॥६६९॥

पुरुषोत्तम परधान हो, परम निजानन्द धाम।
चक्रपती हरिबल नमें, मैं पूजूं निष्काम॥

ॐ ह्रीं अहं महापुरुषदेवाय नमः अर्घ्यं ॥६७०॥

शुभ विधि सब आचरण हैं, सर्व जीव हितकार।
श्रेष्ठ बुद्ध अति शुद्ध हैं, नमूं करो भवपार॥

ॐ ह्रीं अहं सुविधये नमः अर्घ्यं ॥६७१॥

हैं प्रमाण करि सिद्ध जे, ते हैं बुद्धि प्रमाण।
सो विशुद्धमय रूप हैं, संशय तम को भान॥

ॐ ह्रीं अहं प्रज्ञापारप्रमिताय नमः अर्घ्यं ॥६७२॥

समय प्रमाण निमित्त तनी, कभी अन्त नहीं होय।
अविनाशी थिर पद धरैं, मैं प्रणमूं हूं सोय॥

ॐ ह्रीं अहं अव्ययाय नमः अर्घ्यं ॥६७३॥



प्रतिपालक जगदीश हैं, सर्वनाम परमान ।
अधिक शिरोमणि लोक गुरु, पूजत नित कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुराणपुरुषाय नमः अर्घ्यं ॥६७४॥

धर्म सहायक हो प्रभू, धर्म मार्ग की लीक।
शुभ मर्यादा बंध प्रति, करण चलावन ठीक॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मसारथये नमः अर्घ्यं ॥६७५॥

शिव मारग दिखलाय कर, भविजन कियो उद्धार ।
धर्म सुयश विस्तार करि, बतलायो शुभसार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवकीर्तिजिनाय नमः अर्घ्यं ॥६७६॥

मोह अन्ध हन सूर्य हो, जगदीश्वर शिवनाथ ।
मौक्षमार्ग पर परकाश कर, नमूं जोर जुग हाथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोहांधकारविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥६७७॥

मन इन्द्री व्यापार बिन, भाव रूप विध्वंस ।
ज्ञान अतिन्द्रिय धरत हो, नमत नशै अघ वंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रियज्ञानरूपजिनाय नमः अर्घ्यं ॥६७८॥

पर उपदेश परोक्ष बिन, साक्षात् परतक्ष ।
जानत लोकालोक सब, धरैं ज्ञान अलक्ष ॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलज्ञानजिनाय नमः अर्घ्यं ॥६७९॥

व्यापक हो तिहुँलोक में, ज्ञान ज्योति सब ठौर।
तुमको पूजत भावसों, पाऊँ भवदधि और॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतये नमः अर्घ्यं ॥६८०॥

इन्द्रादिक कर पूज्य हो, मुनिजन ध्यान धराय।
तीन लोक नायक प्रभु, हम पर होत सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वनायकाय नमः अर्घ्यं ॥६८१॥



तुम देवन के देव हो, महादेव है नाम।
बिन ममत्व शुद्धात्मा, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अहं दिगम्बराय नमः अर्घ्यं ॥६८२॥

सर्वव्यापी कुमत कहैं, करौ भिन्न विश्राम।
जगसों तजी समीपता, राजत हो शिवधाम॥

ॐ ह्रीं अहं निरन्तरजिनाय नमः अर्घ्यं ॥६८३॥

हितकारी अतिमिष्ट हैं, अर्थ सहित गम्भीर।
पिय वाणी कर पोषते, द्वादश सभा सुतीर॥

ॐ ह्रीं अहं मिष्टादिव्यध्वनिजिनाय नमः अर्घ्यं ॥६८४॥

भवसागर के पार हो, सुख सागर गलतान।
भव्य जीव पूजत चरन, पावै पद निरवान॥

ॐ ह्रीं अहं भवान्तकाय नमः अर्घ्यं ॥६८५॥

नहीं चलाचल भाव हैं, पाप कलाप न लेश।
दृढ़ परणति निज आत्मरति, पूजूं श्री मुक्तेश॥

ॐ ह्रीं अहं दृढ़व्रताय नमः अर्घ्यं ॥६८६॥

असंख्यात नय भेद हैं, यथायोग्य वचद्वार।
तिन सबको जानो सुविध, महानिपुण मति धार॥

ॐ ह्रीं अहं नयोत्तुङ्गाय नमः अर्घ्यं ॥६८७॥

क्रोधादिक सु उपाधि हैं, आत्म विभाव कराय।
तिनको त्यागि विशुद्ध पद, पायो पूजूं पाय॥

ॐ ह्रीं अहं निष्कलङ्काय नमः अर्घ्यं ॥६८८॥

ज्यों शशि किरण उद्योत है, पूरण प्रभा प्रकाश।
कलाधार सोहैं सु इम, पूजत अघ तम नाश॥

ॐ ह्रीं अहं पूर्णकलाधाराय नमः अर्घ्यं ॥६८९॥

जन्म-मरण को आदि ले, जग में क्लेश महान ।
तिसके हन्ता हो प्रभू, भोगत सुख निर्वाण ॥

ॐ ह्रीं अर्ह सर्वक्लेशापहाय नमः अर्घ्य ॥६९०॥

ध्रुव स्वरूप थिर हैं सदा, कभी अन्त नहीं होय ।
अव्याबाध विराजते, पर सहाय को खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्ह ध्रौव्यरूपजिनाय नमः अर्घ्य ॥६९१॥

व्यय उत्पाद सुभाव हैं, ताको गौण कराय ।
अचल अनन्त स्वभाव में, तीनलोक सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्ह अक्षयअनन्तस्वभावात्मकजिनाय नमः अर्घ्य ॥६९२॥

स्व ज्ञानादि चतुष्ट पद, हृदे माह विकसाय ।
सोहत हैं शुभ चिह्न करि, भवि आनन्द कराय ॥

ॐ ह्रीं अर्ह श्रीवत्सलान्छनाय नमः अर्घ्य ॥६९३॥

धर्म रीति परगट कियो, युग की आदि मझार ।
भविजन पोषे सुख सहित, आदि धर्म अवतार ॥

ॐ ह्रीं अर्ह आदिब्रह्मणे नमः अर्घ्य ॥६९४॥

चतुरानन परसिद्ध हैं, दर्श होय चहुँ ओर ।
चउ अनुयोग बखानते, सब दुःख नाशौ मोर ॥

ॐ ह्रीं अर्ह चतुर्मुखाय नमः अर्घ्य ॥६९५॥

जगत जीव कल्याण कर, वृष मर्याद बखान ।
ब्रह्म ब्रह्म भगवान हो, महामुनी सब मान ॥

ॐ ह्रीं अर्ह ब्रह्मणे नमः अर्घ्य ॥६९६॥

प्रजापति प्रतिपाल कर, ब्रह्मा विधि करतार ।
मन्मथ इन्द्री वश करन, बन्दू सुख आधार ॥

ॐ ह्रीं अर्ह विधात्रे नमः अर्घ्य ॥६९७॥



तीन लोक की लक्ष्मी, तुम चरणाम्बुज वास।
श्रीपति श्रीधर नाम शुभ, दिव्यासन सुखरास॥

ॐ ह्रीं अर्हं कमलासनाय नमः अर्घ्यं ॥६९८॥

बहुरि न जग में मण हैं, पंचम गति में वास।
नित्य अमरता पाइयो, जरा मृत्यु को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मिने नमः अर्घ्यं ॥६९९॥

पाँच काय पुद्गलमई तामें एक न होय।
केवल आत्म प्रदेश ही, तिष्ठत हैं दुःख खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मभुवे नमः अर्घ्यं ॥७००॥

लोक शिखर सुखसों रहैं, ये ही प्रभुता जान।
धारत हैं तिहुँलोक में, अधिक प्रभा परधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकशिखरनिवासिने नमः अर्घ्यं ॥७०१॥

अधिक प्रताप प्रकाश है, मोह तिमिर को नाश।
शिवमग दिखलावत सही, सूरजसम प्रतिभास॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूरज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं ॥७०२॥

प्रजापाल हित धार उर, शुभ मारग बतलाय।
सत्यारथ ब्रह्मा कहै, तुमरे बन्दू पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रजापतये नमः अर्घ्यं ॥७०३॥

गर्भ समय षट्मास ही, प्रथम इन्द्र हर्षाय।
रत्नवृष्टि नित करत हैं, उत्तम गर्भ कहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं हिरण्यगर्भाय नमः अर्घ्यं ॥७०४॥

तुमहि चार अनुयोग के, अंग कहै मुनिराय।
तुमसों पूरण श्रुत सही, नान्तर मंगल काय॥

ॐ ह्रीं अर्हं वेदाङ्गाय नमः अर्घ्यं ॥७०५॥

तुम उपदेश थकी कहैं, द्वादशांग गणराज ।
पूरण ज्ञाता तुम्हीं हो, प्रनमूं मैं शिवकाज ॥

ॐ ह्रीं अहं पूर्णवेदज्ञाय नमः अर्घ्यं ॥७०६॥

पार भये भवसिन्धु के, तथा सुवर्ण समान ।
उत्तम निर्मल थुति धरैं, नमत कर्ममल हान ॥

ॐ ह्रीं अहं भवसिन्धुपारगाय नमः अर्घ्यं ॥७०७॥

सुखाभास पर निमित्तें, पर उपाधितें होत ।
स्वतः सुभाव धरो सहि, सत्यानन्द उद्योत ॥

ॐ ह्रीं अहं सत्यानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥७०८॥

मोहादिक परबल महा, सो इकसो तुम जीत ।
औरन की गिनती कहाँ, तिष्ठो सदा अभीत ॥

ॐ ह्रीं अहं अजयाय नमः अर्घ्यं ॥७०९॥

दिव्य रत्नमय ज्योति हो, अमित अकंप अडोल ।
मनवाँछित फलदाय हो, राजत अखय अमोल ॥

ॐ ह्रीं अहं मनवाँछितफलदाय नमः अर्घ्यं ॥७१०॥

देह धार जीवन मुक्त, परमात्म भगवान ।
सूर्य समान सुदीप्तधर, महाऋषीश्वर जान ॥

ॐ ह्रीं अहं जीवनमुक्तजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७११॥

स्व भय आदिक से परे, पर भय आदि निवार ।
पर उपाधि बिन नित सुखी, बन्दूं भाव समहार ॥

ॐ ह्रीं अहं शतानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥७१२॥

ईश्वर हो तिहुँलोक के, परम पुरुष परधान ।
ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत नित अमलान ॥

ॐ ह्रीं अहं विष्णवे नमः अर्घ्यं ॥७१३॥



रत्नत्रय पुरुषार्थ करि, हो प्रसिद्ध जयवन्त ।
कर्मशत्रु को क्षय कियो, शीश नमें नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिविक्रमाय नमः अर्घ्यं ॥७१४॥

सूरज हो शिवराह के, कर्म दलन बल सूर ।
संशयकेतु न ग्रहण ग्रस, महासहज सुखपूर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षमार्गप्रकाशकआदित्यरूपजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७१५॥

सुभग अनन्त चतुष्टपद, सोई लक्ष्मी भोग ।
स्वामी हो शिवनारि के, नमूं जोरि तिहुं योग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपतये नमः अर्घ्यं ॥७१६॥

इन्द्रादिक पूजत जिन्हैं, पञ्चकल्याणक थाप ।
अद्भुत पराक्रम को धरैं, नमत नसैं भव पाप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषोत्तमाय नमः अर्घ्यं ॥७१७॥

निज प्रदेश में बसत हैं, परमात्म को वास ।
आप मोक्ष के नाथ हो, आपहि मोक्ष निवास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वैकुण्ठाधिपतये नमः अर्घ्यं ॥७१८॥

सर्व लोक कल्याणकर, विष्णु नाम भगवान ।
श्री अरहन्त स्वलक्ष्मी, ताके भरता जान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वलोकश्रेयस्करजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७१९॥

मुनिमन कुमुदनि मोदकर, भव सन्ताप विनाश ।
पूरण चन्द्र त्रिलोक में, पूरण प्रभा प्रकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं हर्षिकेशाय नमः अर्घ्यं ॥७२०॥

दिनकर सम परकाश कर, हो देवन के देव ।
ब्रह्मा विष्णु कहात हो, शशि सम दुति स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं हरये नमः अर्घ्यं ॥७२१॥



ॐ ह्रीं अर्हं केशवाय नमः अर्घ्यं ॥७२९॥



सूखे तृण सम जगत की, विभव जान करवास ।
धरें सरलता जोगमें, करै पाप को नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विष्टरश्रवसे नमः अर्घ्यं ॥७३०॥

श्री कहिये आतम विभव, ताकरि हो शुभ नीक ।
सोहत सुन्दर बदन करि, सज्जन चित रमणीक ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्सलांछनाय नमः अर्घ्यं ॥७३१॥

सर्वोत्तम अति श्रेष्ठ हैं, जिन सन्मति थुति योग ।
धर्म मोक्ष मारग कहैं, पूजत सज्जन लोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रमते नमः अर्घ्यं ॥७३२॥

अविनाशी अविकार हैं, नहीं चिगे निज भाव ।
स्वयं सुआश्रय रहत हैं, मैं पूजूँ धर चाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अच्युताय नमः अर्घ्यं ॥७३३॥

नाशौ लौकिक कामना, निर इच्छुक योगीश ।
नारि शृंगार न मन बसै, वन्दत हूँ लोकीश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं नरकान्तकाय नमः अर्घ्यं ॥७३४॥

व्यापक लोकालोक में, विष्णुरूप भगवान ।
धर्मरूप तरु लहत है, पूजत हूँ धर ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वसेनाय नमः अर्घ्यं ॥७३५॥

धर्म चक्र सन्मुख चलै, मिथ्यामति रिपु घात ।
तीन लोक नायक प्रभू, पूजत हूँ दिन-रात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चक्रपाणये नमः अर्घ्यं ॥७३६॥

सुभग सुरूपी श्रेष्ठ अति, जन्म धर्म अवतार ।
तीन लोक की लक्ष्मी, है एकत्र उदार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनाभाय नमः अर्घ्यं ॥७३७॥



ॐ ह्रीं अर्हं विरूपाक्षाय नमः अर्घ्यं ॥७४५॥



सुन्दर रूप मनोज्ञ है, मुनिजन मन वशंकार।

असाधारण शुभ अणु लगै, केवलज्ञान मँझार॥

ॐ ह्रीं अहं कामदेवाय नमः अर्घ्यं ॥७४६॥

सम्पदर्शन ज्ञान अरु, चारित एक सरूप।

धर्म मार्ग दरशात हैं, लोकत रूप अनूप॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिलोचनाय नमः अर्घ्यं ॥७४७॥

निजानन्द स्व लक्ष्मी, ताके हो भरतार।

शिव कामिन नित भोगते, परमरूप सुखकार॥

ॐ ह्रीं अहं उमापतये नमः अर्घ्यं ॥७४८॥

जे अज्ञानी जीव हैं, नित प्रति बोध करान।

रक्षक हो षट् काय के, तुम सम कौन महान॥

ॐ ह्रीं अहं पशुपतये नमः अर्घ्यं ॥७४९॥

रमण भाव निज शक्ति सों, धरैं तथा दुति काम।

कामदेव तुम नाम है, महाशक्ति बल धाम॥

ॐ ह्रीं अहं शम्बरारये नमः अर्घ्यं ॥७५०॥

कामदाह को दम कियो, ज्यों अगनी जलधार।

निज आतम आचरण नित, महाशील श्रिय सार॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिपरान्तकाय नमः अर्घ्यं ॥७५१॥

निज सन्मति शुभ नारसों, मिले रहे अरधांग।

ईश्वर हो परमात्मा, तुम्हें नमूं सर्वांग॥

ॐ ह्रीं अहं अर्द्धनारीश्वराय नमः अर्घ्यं ॥७५२॥

नहीं चिगे उपयोग से, महा कठिन परिणाम।

महावीर्य धारक नमूं, तुम को आठो याम॥

ॐ ह्रीं अहं रुद्राय नमः अर्घ्यं ॥७५३॥



गुण पर्याय अनन्त युत, वस्तु स्वयं परदेश।
स्वयं काल स्व क्षेत्र हो, स्वयं सुभाव विशेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं भावाय नमः अर्घ्यं ॥७५४॥

सूक्ष्म गुप्त स्वगुण धरै, महा शुद्धता धार।
चार ज्ञानधर नहीं लखै, मैं पूजूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं गर्भकल्याणकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७५५॥

शिव तिय संग सदा रमें, काल अनन्त न और।
अविनाशी अविकार हो, महादेव शिरमौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाशिवाय नमः अर्घ्यं ॥७५६॥

जगत कार्य तुमसों सरै, सब तुमरे आधीन।
सब के तुम सरदार हो, आप धनी जग दीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्कर्त्रे नमः अर्घ्यं ॥७५७॥

महा घोर अँधियार है, मिथ्या मोह कहाय।
जग में शिव मगर लुप्त था, ताको तुम दरशाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अन्धकारन्तकाय नमः अर्घ्यं ॥७५८॥

सन्तति पक्ष जुदी नहीं, नहीं आदि नहीं अन्त।
सदा काल बिन काल तुम, राजत हो जयवन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनादिनिधनाय नमः अर्घ्यं ॥७५९॥

तीन लोक आराध्य हो, महा यज्ञ को ठाम।
तुम को पूजत पाइये, महा मोक्ष सुख धाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं हराय नमः अर्घ्यं ॥७६०॥

महा सुभट गुणरास हो, सेवत हैं तिहुँ लोक।
शरणागत प्रतिपाल कर, चरणाम्बुज दूँ धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं महासेनाय नमः अर्घ्यं ॥७६१॥



गणधरादि सेवें चरण, महा गणपती नाम।
पाप करो भवसिन्धुतें, मंगल कर सुख धाम॥

ॐ ह्रीं अहं महागणपतिजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७६२॥

चार संघ के नाथ हो, तुम आज्ञा शिर धार।
धर्म मार्ग प्रवर्त्त कर, बन्दूं पाप निवार॥

ॐ ह्रीं अहं गणनाथाय नमः अर्घ्यं ॥७६३॥

मोह सर्प के दमन को, गरुड़ समान कहाय।
सब के आदरकार हो, तुम गणपति सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अहं महाविनायकाय नमः अर्घ्यं ॥७६४॥

जे मोही अल्पज्ञ हैं, तिनसों हो प्रतिकूल।
धर्माधर्म विरोध कर, धरूं शीश पग धूल॥

ॐ ह्रीं अहं विरोधविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७६५॥

जितने दुःख संसार में, तिनको वार न पार।
इक तुमही जानौ सही, ताहि तजो दुःख भार॥

ॐ ह्रीं अहं विपदविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७६६॥

सब विद्या के बीज हो, तुम वाणी परकाश।
सकल अविद्या मूलतें, इक छिन में हो नाश॥

ॐ ह्रीं अहं द्वादशात्मने नमः अर्घ्यं ॥७६७॥

पर निमित्त से जीव को, रागादिक परिणाम।
तिनको त्याग सुभाव में, राजत है सुखधाम॥

ॐ ह्रीं अहं रहिताय नमः अर्घ्यं ॥७६८॥

अन्तर बाहिर प्रबल रिपु, जीत सके नहीं कोय।
निर्भय अचल सुथिर रहैं, कोटि शिवालय सोय॥

ॐ ह्रीं अहं दुर्जयाय नमः अर्घ्यं ॥७६९॥

घन सम गर्जत वचन हैं, भागे कुनय कुवादि ।

प्रबल प्रचण्ड सुवीर्य है, धरै सुगुण इत्यादि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं बृहद्भावाय नमः अर्घ्यं ॥७७०॥

पाप सघन वन दाह दव, महादेव शिव नाम ।

अतुल प्रभा धारी महा, तुम पद करूँ प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रभानवे नमः अर्घ्यं ॥७७१॥

तुम अजन्म बिन मृत्यु हो, सदा रहो अविकार ।

ज्योंके त्यों मणि दीप सम, पूजत हूँ धन धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजरामरजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७७२॥

संस्करादि स्वगुण सहित, तिन करि हो आराध्य ।

तुम को बन्दों भावसों, मिटे सकल दुःख व्याध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्विजाराध्याय नमः अर्घ्यं ॥७७३॥

निज आतम निज ज्ञान है, तामें रुचि परतीत ।

पर पद सोहै अरुचिता, आई अक्षय जीत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुधाशोचिषे नमः अर्घ्यं ॥७७४॥

जन्म-मरण को आदि ले, सकल रोग को नाश ।

दिव्य औषधि तुम धरो, अमर करन सुखरास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं औषधीशाय नमः अर्घ्यं ॥७७५॥

पूरण गुण परकाश कर, ज्यों शशि किरण उद्योत ।

मिथ्या तप निरवारतै, दर्शत आनन्द होत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कमलानिधये नमः अर्घ्यं ॥७७६॥

सूर्य प्रकाश धरै सही, धर्म मार्ग दिखलाय ।

चार संघ नायक प्रभू, वन्दूँ तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं नक्षत्रनाथाय नमः अर्घ्यं ॥७७७॥



भव तप-हर हो चन्द्रमा, शीतलकार कपूर।
तुम को जो नर सेवते, पाप कर्म हो दूर॥

ॐ ह्रीं अहं शुभ्रांशवे नमः अर्घ्यं ॥७७८॥

स्वर्गादिक लक्ष्मी, तासों भी जु ग्लान।
स्व पद में आनन्द है, तीन लोक भगवान॥

ॐ ह्रीं अहं सौम्यभावरताय नमः अर्घ्यं ॥७७९॥

पर पदार्थ को इष्ट लिखि, होत नहीं अभिमान।
हो अबन्ध इस कर्मते, स्व आनन्द निधान॥

ॐ ह्रीं अहं कुमुदबांधवाय नमः अर्घ्यं ॥७८०॥

सब विभाव को त्याग करि, हैं स्वधर्म में लीन।
ताते प्रभुता पाइयो, हैं नहिं बन्धाधीन॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मरतये नमः अर्घ्यं ॥७८१॥

आकुलता नहीं लेश है, नहीं रहै चित भंग।
सदा सुखी तिहुँलोक में, चरण नमूं सब अंग॥

ॐ ह्रीं अहं आकुलतारहितजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७८२॥

शुभ परिणति प्रगटाय के, दियो स्वर्ग को दान।
धर्म ध्यान तुम से चले, सुमिरत हो शुभ ध्यान॥

ॐ ह्रीं अहं पुण्यजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७८३॥

भविजन करत पवित्र अति, पाप मैल प्रक्षाल।
ईश्वर हो परमात्मा, नमूं चरण निज भाल॥

ॐ ह्रीं अहं पुण्यजिनेश्वराय नमः अर्घ्यं ॥७८४॥

श्रावक या मुनिराज हो, धर्म आप से होय।
धर्मराज शुभ नीति करि, उन्मार्गन को खोय॥

ॐ ह्रीं अहं धर्मराजाय नमः अर्घ्यं ॥७८५॥



स्वयं स्व आत्म रस लहो, ताही कहिये भोग ।

अन्य कुपरिणति त्यागियो, नमूं पदाम्बुज योग ॥

ॐ ह्रीं अहं भोगराजाय नमः अर्घ्यं ॥७८६॥

दर्शन ज्ञान सुभाव धरि, ताही के हो स्वाम ।

सब मलीनता त्यागियो, भये शुद्ध परिणाम ॥

ॐ ह्रीं अहं दर्शनज्ञानचारित्रात्मजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७८७॥

सत्य उचित शुभ न्याय में, है आनन्द विशेष ।

सब कुनीति को नाश कर, सर्व जीव सुख देख ॥

ॐ ह्रीं अहं भूतानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥७८८॥

पर पदार्थ के संग से, दुःखित होत सब जीव ।

ताके भयसों भय रहित, भोगें मोक्ष सदीव ॥

ॐ ह्रीं अहं सिद्धिकान्तजिनाय नमः अर्घ्यं ॥७८९॥

जाको कभी न नाश हो, सो पायो आनन्द ।

अचलरूप निज आत्ममय, भाव अभावी द्वन्द ॥

ॐ ह्रीं अहं अक्षयानन्दाय नमः अर्घ्यं ॥७९०॥

शिव मारग परगट कियो, दोष रहित वरताय ।

दिव्यध्वनि करि गर्ज सम, सर्व अर्थ दिखलाय ॥

ॐ ह्रीं अहं बृहतांपतये नमः अर्घ्यं ॥७९१॥

चौपाई छन्द

हितकारक अपूर्व उपदेश, तुम सम और नहीं देवेश ।

सिद्धसमूह जजूं मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अपूर्वदेवोपदेष्टे नमः अर्घ्यं ॥७९२॥



कर्म विषैं संस्कार विधान, तीन लोक में विस्तर जान।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं सिद्धसमूहेभ्यो नमः अर्घ्य ॥७९३॥

धर्म उपदेश देत सुखकार, महाबुद्ध तुम हो अवतार।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्धबुद्धाय नमः अर्घ्य ॥७९४॥

तीनलोक में हो शशि सूर, निज कर्णावलि करि तम चूर।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं तमोभेदिने नमः अर्घ्य ॥७९५॥

धर्ममार्ग उद्योत करान, सब कुवाद की करि हो हान।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं धर्ममार्गदर्शकजिनाय नमः अर्घ्य ॥७९६॥

सर्व शास्त्र मिथ्या वा साँच, तुम निज दृष्टि लियो है जाँच।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं सर्वशास्त्रनिर्णायकजिनाय नमः अर्घ्य ॥७९७॥

पञ्चमगति बिन श्रेष्ठन और, सो तुम पाय त्रिजग शिर मौर।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं पञ्चमगतिजिनाय नमः अर्घ्य ॥७९८॥

श्रेष्ठ सुमति तुमहीं हो एक, शिवमारग की जानो टेक।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं श्रेष्ठसुमतिदात्रीजिनाय नमः अर्घ्य ॥७९९॥

वृष मर्जाद भली विधि थाप, भविजन मेटो सब सन्ताप।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं सुगताय नमः अर्घ्य ॥८००॥

श्रेष्ठ करै कल्याण सु ज्ञान, सम्पूरण सङ्कल्प निशान ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं श्रेष्ठकल्याणकारकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८०१॥

निज ऐश्वर्य धरो सम्पूर्ण, पर विभूति बिन हो अघ चूर्ण ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं परमेश्वरीयसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं ॥८०२॥

श्रेष्ठ शुद्ध परब्रह्म रमाय, मंगलमय पर मंगलदाय ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं परब्रह्मणे नमः अर्घ्यं ॥८०३॥

श्री जिनराज कर्म रिपु जीत, पूजनीक हैं सब के मीत ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं कर्मारिजिते नमः अर्घ्यं ॥८०४॥

षट् पदार्थ नव तत्त्व कहाय, धर्म अधर्म भली विधि गाय ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं सर्वशास्त्रज्ञजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८०५॥

है शुभलक्षण मय परिणाम, पर उपाधिको नहिं कछु काम ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं शुभलक्षणजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८०६॥

सत्य ज्ञानमय है तुम बोध, हेय अहेय बतायो सोध ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं सर्वबोधसत्त्वाय नमः अर्घ्यं ॥८०७॥

इष्टानिष्ट न राग न द्वेष, ज्ञाता दृष्टा हो अविशेष ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं निर्विकल्पाय नमः अर्घ्यं ॥८०८॥

दूजो तुम सम नहीं भगवान, धर्माधर्म रीति बतलान ।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं अद्वितीयबोधजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८०९॥

महादुःखी संसारी जान, तिन के पालक हो भगवान ।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं लोकपालाय नमः अर्घ्यं ॥८१०॥

जग विभूति निर इच्छुक होय, मान रहित आतम रत सोय ।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं आत्मरसरतजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८११॥

ज्यों शशि ताप हरै अनिवार, अतिशय सहित शान्ति करतार ।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं शान्तिदात्रे नमः अर्घ्यं ॥८१२॥

हो निरभेद अछेद अशेष, सब इकसार स्वयं परदेश ।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं अभेद्याछेद्यजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८१३॥

मायाकृत सम पाँचो काय, निजसों भिन्न लखो मत भाय ।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं पञ्चस्कन्धमयात्मदृशे नमः अर्घ्यं ॥८१४॥

बीती बात देख संसार, भवतन भोग विरक्त उदार ।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं भूतार्थभावनासिद्धाय नमः अर्घ्यं ॥८१५॥

धर्माधर्म जान सब ठीक, मोक्षपुरी दिखलायो लीक ।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं चतुराननजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८१६॥

वीतराग सर्वज्ञ सु देव, सत्यवाक वक्ता स्वयमेव ।
सिद्धसमूह जजुं मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं सत्यवक्त्रे नमः अर्घ्यं ॥८१७॥

मन-वच-काय जोग परिहार, कर्मवर्गणा नाहिं लगार ।
सिद्धसमूह जजुं मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं निराश्रवाय नमः अर्घ्यं ॥८१८॥

चौ अनुयोग कियो उपदेश, भव्य जीव सुख लहत हमेश ।
सिद्धसमूह जजुं मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं चतुर्भूमिकशासनाय नमः अर्घ्यं ॥८१९॥

काहू पदसों मेल न होय, अन्वय रूप कहावै सोय ।
सिद्धसमूह जजुं मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं अन्वयाय नमः अर्घ्यं ॥८२०॥

हो समाधि में नित लवलीन, बिन आश्रय नित ही स्वाधीन ।
सिद्धसमूह जजुं मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं समाधिनिमग्नजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८२१॥

लोक भाल हो तिलक अनूप, हो लोकोत्तम शेष स्वरूप ।
सिद्धसमूह जजुं मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं लोकभालतिलकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८२२॥

अक्षाधीन हीन है शक्त, तिसको नाश करा निज व्यक्त ।
सिद्धसमूह जजुं मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं तुच्छभावभिदे नमः अर्घ्यं ॥८२३॥

जीवादिक द्रव्य षट् सुजान, तिनको भली भान्ति है ज्ञान ।
सिद्धसमूह जजुं मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं षट्द्रव्यदृशे नमः अर्घ्यं ॥८२४॥



विकल्प नय सकल प्रमाण, वस्तु भेद जानो स्वज्ञान ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं सकलवस्तुविज्ञात्रे नमः अर्घ्यं ॥८२५॥

सब पदार्थ दर्शत तुम बैन, संशय हरण करण सुख चैन ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं षोडशपदार्थवादिने नमः अर्घ्यं ॥८२६॥

वर्णन करि पञ्चास्तिजुकाय, भव्य जीव संशय विनशाय ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं पञ्चास्तिकायबोधकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८२७॥

प्रतिबिम्बत हो आरसि माहि, ज्ञानाध्यक्ष जान हो ताहि ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं ज्ञानाध्यक्षजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८२८॥

जामें ज्ञान जीव को एक, सो परकाशो शुद्ध विवेक ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं समवायसार्थकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८२९॥

भक्तनि के हो साध्य सु कर्म, अन्तिम पौरुष साध्य सुशर्म ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं भक्तैकसाधकधर्माय नमः अर्घ्यं ॥८३०॥

बाकी रहो न गुण शुभ एक, ताको स्वाद न हो प्रत्येक ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं निरवशेषगुणामृताय नमः अर्घ्यं ॥८३१॥

नय सुपक्ष करि सांख्य कुवाद, तुम निरवाद पक्ष कर वाद ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं सांख्यादिपक्षविध्वंसकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८३२॥

सम्यग्दर्शन है तुम बैन, वस्तु परीक्षा भाषो ऐन ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं सम्यग्दर्शनरूपजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८३३॥

धर्मशास्त्र के हो कर्तार, आदि पुरुष धारो अवतार ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं आदिपुरुषजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८३४॥

नय साधत नैयायक नाम, सो तुम पक्ष धरो अभिराम ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं पञ्चविंशतितत्त्ववेत्रे नमः अर्घ्यं ॥८३५॥

स्वपर चतुष्क वस्तु को भेव, व्यक्ताव्यक्त करो निरखेद ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं व्यक्ताव्यक्तज्ञानविदे नमः अर्घ्यं ॥८३६॥

दर्शन ज्ञान भेद उपयोग, चेतनता मय है शुभ योग ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं ज्ञानचैतन्यभेददृशे नमः अर्घ्यं ॥८३७॥

स्वैसंवेदन शुद्ध धराय, अन्य जीव हैं मलिन कुभाय ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं स्वसंवेदनज्ञानवादिने नमः अर्घ्यं ॥८३८॥

द्वादश सभा करै सतकार, आदर योग बैन सुखकार ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं समवशरणद्वादशसभापतये नमः अर्घ्यं ॥८३९॥

आगम अक्ष अनक्ष प्रमान, तीन भेद कर तुम पहचान ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं त्रिप्रमाणाय नमः अर्घ्यं ॥८४०॥

विशद शुद्ध मति हो साकार, तुम को जानत है सु विचार।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं अक्षप्रमाणाय नमः अर्घ्य ॥८४१॥

नयसापेक्षक शुभ बैन, हैं अशंस सत्यारथ ऐन।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं स्याद्वादवादिने नमः अर्घ्य ॥८४२॥

लोकालोक क्षेत्र के मांहि, आप ज्ञान है सब दरशाहिं।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं क्षेत्रज्ञाय नमः अर्घ्य ॥८४३॥

अन्तर बाह्य लेश नहिं और, केवल आतम मई अघोर।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्धात्मजिनाय नमः अर्घ्य ॥८४४॥

अन्तिम पौरुष साध्यो सार, पुरुष नाम पायो सुखकार।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं पुरुषात्मजिनाय नमः अर्घ्य ॥८४५॥

चहुँगति में नरनेह मँझार, मोक्ष होत तुम नर आकार।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं नराधिपाय नमः अर्घ्य ॥८४६॥

दर्श ज्ञान चेतन की लार, निरावर्ण तुम हो अविकार।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं निरावरणचेतनाय नमः अर्घ्य ॥८४७॥

भाव न वेद वेद नरदेह, मोक्ष रूप है नहिं सन्देह।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं मोक्षरूपजिनाय नमः अर्घ्य ॥८४८॥

सत्य यथारथ हो सब ठीक, स्वयं सिद्ध राजो शुभ नीक ।
सिद्धसमूह जजुँ मनलाय, भव भव में सुख सम्पति दाय ॥

ॐ ह्रीं अहं अकृत्रिमजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८४९॥

दोहा

जाकरि तुम को जानिये, सो है अगम अलक्ष ।
निर्गुण यातैं कहत हैं, भव भयतैं हम रक्ष ॥

ॐ ह्रीं अहं निर्गुणाय नमः अर्घ्यं ॥८५०॥

चेतनमय हैं अष्ट गुण, सो तुम में इक नाम ।
शुद्ध अमूरत देव हो, स्व प्रदेश चिदराम ॥

ॐ ह्रीं अहं अमूर्ताय नमः अर्घ्यं ॥८५१॥

उमापती त्रिभुवन धनी, राजत भू भरतार ।
निजानन्द को आदि ले, महा तुष्ट निरधार ॥

ॐ ह्रीं अहं उमापतये नमः अर्घ्यं ॥८५२॥

व्यापक लोकालोक में, ज्ञान ज्योति के द्वार ।
लोकशिखर तिष्ठत अचल, करो भक्त उद्धार ॥

ॐ ह्रीं अहं सर्वगताय नमः अर्घ्यं ॥८५३॥

योग प्रबन्ध निवारियो, राग-द्वेष निरवार ।
देह रहित निष्कम्प हो, भये अक्रिया सार ॥

ॐ ह्रीं अहं अक्रियाय नमः अर्घ्यं ॥८५४॥

सर्वोत्तम अति उच्च गति, जहाँ रहो स्वयमेव ।
देव वास है मोक्ष थल, हो देवन के देव ॥

ॐ ह्रीं अहं देवष्टजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८५५॥



भवसागर के तीर हो, अचलरूप अस्थान ।
फिर नहीं जग में जन्म है, राजत हो सुख थान ॥

ॐ ह्रीं अहं तटस्थाय नमः अर्घ्यं ॥८५६॥

ज्यों के त्यों नित थिर रहो, अचल रूप अविनाश ।
स्वैपदमय राजत सदा, स्वयं ज्योति परकाश ॥

ॐ ह्रीं अहं कूटस्थाय नमः अर्घ्यं ॥८५७॥

तत्त्व अतत्त्व प्रकाशियो, ज्ञाता हो सब भास ।
ज्ञान मूर्ति हो ज्ञान धन, ज्ञान ज्योति अविनाश ॥

ॐ ह्रीं अहं ज्ञात्रे नमः अर्घ्यं ॥८५८॥

पर निमित्त के योगतें, व्यापै नहीं विकार ।
निज स्वरूप में थिर सदा, हो अबाध निरधार ॥

ॐ ह्रीं अहं निरबाधाय नमः अर्घ्यं ॥८५९॥

चारवाक वा सांख्यमत, झूठी पक्ष धरात ।
अल्प मोक्ष नहीं होत है, राजत हो विख्यात ॥

ॐ ह्रीं अहं निराभावाय नमः अर्घ्यं ॥८६०॥

तारण-तरण जहाज हो, अतुल शक्ति के नाथ ।
भव वारिधि से पार कर, राखो अपने साथ ॥

ॐ ह्रीं अहं भववारिधिपारकाय नमः अर्घ्यं ॥८६१॥

बन्ध मोक्ष की कहन है, सो भी है व्यवहार ।
तुम विवहार अतीत हो, शुद्ध वस्तु निरधार ॥

ॐ ह्रीं अहं बन्धमोक्षरहिताय नमः अर्घ्यं ॥८६२॥

चारों पुरुषारथ विषैं, मोक्ष पदारथ सार ।
तुम साधो परधान हो, सब में सुख आधार ॥

ॐ ह्रीं अहं मोक्षसाधनप्रधानजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८६३॥

कर्ममैल पक्षाल के, निज आतम लवलाय ।
हो प्रसन्न शिवथल विषैं, अंतरमल विनशाय ॥

ॐ ह्रीं अहं कर्मव्याधिविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८६४॥
निजसुभाव निज वस्तुता, निज सुभाव मैं लीन ।
बन्दूं शुद्ध स्वभावमय, अन्य कुभाव मलीन ॥

ॐ ह्रीं अहं निजस्वाभावस्थितजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८६५॥
निज स्वरूप परकाश है, निरावर्ण ज्यों सूर ।
तुम को पूजत भावसों, मोहकर्म को चूर ॥

ॐ ह्रीं अहं निरावरणसूर्यजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८६६॥
निज भावनतें मोक्ष हो, ते हो भाव रहात ।
स्वैगुण स्वै परजाय में, धिरता भाव धरात ॥

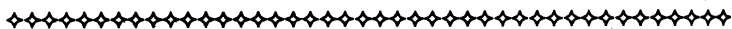
ॐ ह्रीं अहं स्वरूपआरूढजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८६७॥
सब कुभाव को जीतियो, शुद्ध भये निरमूल ।
शुद्धातम कहलात हो, नमत नशे अघ शूल ॥

ॐ ह्रीं अहं प्रकृतिप्राप्ताय नमः अर्घ्यं ॥८६८॥
निज सन्मति के सन्मति, निज बुध के बुधवान ।
शुभ ज्ञाता शुभ ज्ञान हो, पूजत मिथ्या हान ॥

ॐ ह्रीं अहं विशुद्धसम्पतिजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८६९॥
कर्म प्रकृति को अंश बिन, उत्तर हो या मूल ।
शुद्धरूप अति तेज घन, ज्यों रविबिम्ब अधूल ॥

ॐ ह्रीं अहं शुद्धरूपजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८७०॥
आदि पुरुष आदीश जिन, आदि धर्म अवतार ।
आदि मोक्ष दातार हो, आदि कर्म हरतार ॥

ॐ ह्रीं अहं आद्येवेधसे नमः अर्घ्यं ॥८७१॥



नहिं विकार आवै कभी, रहो सदा सुखरूप।

रोग शोक व्यापै नहीं, निवसे सदा अनुप॥

ॐ ह्रीं अहं निर्विकृतये नमः अर्घ्यं ॥८७२॥

निज पौरुष करि सूर्य सम, हरो तिमिर मिथ्यात।

तुम पुरुषारथ सफल है, तीनलोक विख्यात॥

ॐ ह्रीं अहं मिथ्यातिमिरविनाशक नमः अर्घ्यं ॥८७३॥

वस्तु परीक्षा तुम बिना, और झूठ करखेद।

अन्धकूप में आप सर, डारत हैं निरभेद॥

ॐ ह्रीं अहं मीमांसकाय नमः अर्घ्यं ॥८७४॥

होनहार या लई, या पईये इस काल।

अस्तिरूप सब वस्तु हैं, तुम जानौ यह हाल॥

ॐ ह्रीं अहं अस्तिसर्वज्ञाय नमः अर्घ्यं ॥८७५॥

जिनवाणी जिन सरस्वती, तुम गुण सों परिपूर।

पूज्य योग तुम को कहैं, करैं मोह मद चूर॥

ॐ ह्रीं अहं श्रुतपूज्याय नमः अर्घ्यं ॥८७६॥

स्वयं स्वरूपनानन्द हो, निज पद रमण सुभाव।

सदा विकाशित ही रहै, बन्दूं सहज सुभाव॥

ॐ ह्रीं अहं सदोत्सवाय नमः अर्घ्यं ॥८७७॥

मन इन्द्री जानत नहीं, जाको शुद्ध स्वरूप।

वचनातीत स्वगुण सहित, अमल अकाय अरूप॥

ॐ ह्रीं अहं परोक्षज्ञानागम्याय नमः अर्घ्यं ॥८७८॥

जो श्रुतज्ञान कला धरै, तिनको हो तुम इष्ट।

तुमको निज प्रतिध्यावते, नाशे सकल अनिष्ट॥

ॐ ह्रीं अहं इष्टपाठकाय नमः अर्घ्यं ॥८७९॥

निज समरथ कर साधियो, निज पुरुषारथ सार ।

सिद्ध भये सब काम, तुम सिद्ध नाम सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धकर्मक्षया नमः अर्घ्यं ॥८८०॥

पृथ्वी जल अगनी पवन, जानत इनके भेद ।

गुण अनन्त पर्याय सब, सो विभाग परिछेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चार्चकादिमिथ्यामतनिवारकाय नमः अर्घ्यं ॥८८१॥

निज संवेदन ज्ञान में, देखत हौ प्रत्यक्ष ।

रक्षक हो, तिहुँलोक के, हम शरणागत पक्ष ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षैकप्रमाणाय नमः अर्घ्यं ॥८८२॥

विद्यमान शिवलोक में, स्वैगुण पर्य समेत ।

कहैं अभाव कुमत मती, निज पर धोका देत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिमुक्ताय नमः अर्घ्यं ॥८८३॥

तुम आगम के मूल हो, अपर गुरू है नाम ।

तुम वाणी अनुसार ही, भये शास्त्र अभिराम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुरुश्रुतये नमः अर्घ्यं ॥८८४॥

तीन लोक के नाथ हो, ज्यों सुरगण में इन्द्र ।

निजपद रमन स्वभाव धर, नमें तुम्हैं देवेन्द्र ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घ्यं ॥८८५॥

सब स्वभाव अविरोद्ध हैं, निजपर घातक नाहिं ।

सहचारी परिणाम हैं, निवसत हैं तुम माहिं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्वभावाविरोद्धजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८८६॥

ब्रह्म ज्ञान को वेद कर, भये शुद्ध अविकार ।

पूरण ज्ञानी हो नमूं, लहो वेद की सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मदिवे नमः अर्घ्यं ॥८८७॥



शब्द ब्रह्म के ज्ञानतें, आतम-तत्त्व विचार।
शुक्लध्यान में लय भए, हो अतर्क अविचार॥

ॐ ह्रीं अहं शब्दाद्वैतब्रह्मणे नमः अर्घ्यं ॥८८८॥

सूक्ष्म तत्त्व प्रकाश कर, सूक्ष्म कर्म उच्छेद।
मोक्षमार्ग परगट कियो, कहो सु अन्तर भेद॥

ॐ ह्रीं अहं सूक्ष्मतत्त्वप्रकाशकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८८९॥

तीन शतक त्रेसठ जु हैं, सब मानै पाखण्ड।
धर्म यथार्थ तुम कहो, तिन सब को करि खण्ड॥

ॐ ह्रीं अहं पाखण्डघ्नाय नमः अर्घ्यं ॥८९०॥

कर्णरूप करतार हो, कोईक नय के द्वार।
सुर मुनि करि पूजत भए, माननीक सुखकार॥

ॐ ह्रीं अहं नयौघयुजे नमः अर्घ्यं ॥८९१॥

केवलज्ञान उपाइकें, तदनन्तर हो मोक्ष।
साक्षात् बड़ भागतैं, पूजूँ इहाँ परोक्ष॥

ॐ ह्रीं अहं अन्तकृते नमः अर्घ्यं ॥८९२॥

शरणागत को पार कर, देत मोक्ष अभिराम।
तारण-तरण सु नाम है, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अहं पारकृते नमः अर्घ्यं ॥८९३॥

भव समुद्र गम्भीर हैं, कठिन जास को पार।
निज पुरुषारथ करि तिरै, गहो किनारो सार॥

ॐ ह्रीं अहं तीरप्राप्ताय नमः अर्घ्यं ॥८९४॥

एक बार जो शरण गहि, ताको हो हितकार।
यातें सब जग जीव के, हो आनन्द दातार॥

ॐ ह्रीं अहं परिहितस्थिताय नमः अर्घ्यं ॥८९५॥

रत्नत्रय निज नेत्रसों, मोक्षपुरी पहुँचात ।
महादेव हो जगत पितु, तीनलोक विख्यात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं रत्नत्रयनेत्रजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८९६॥

तीन लोक के नाथ हो, महा ज्ञान भण्डार ।
सरल भाव बिन कपट हो, शुद्धबुद्ध अविकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८९७॥

निश्चय वा व्यवहार के, हो तुम जाननहार ।
वस्तुरूप निज साधियो, पूजत हूँ निरधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानकर्मसमुच्चयिने नमः अर्घ्यं ॥८९८॥

सुरनर पशु न अघावते, सभी ध्यावते ध्यान ।
तुमको नित ही ध्यावते, पावैं सुख निर्वाण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं नित्यतृप्तजिनाय नमः अर्घ्यं ॥८९९॥

कर्म मैल प्रक्षाल करि, तीनों योग संभार ।
पापशैल चकचूर कर, भये अयोग सुखार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पापमलनिवारकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९००॥

सूरज हो निज ज्ञान घन, ग्रहण उपद्रव नाहिं ।
बेखटके शिवपंथ सब, दीखत है जिस माहिं ॥

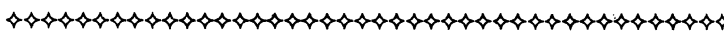
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणज्ञानघनजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९०१॥

जोग योग सङ्कल्प सब, हरो देह के साथ ।
रहो अकम्पित थिर सदा, मैं नाऊँ निज माथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं उच्छिन्नयौगाय नमः अर्घ्यं ॥९०२॥

जो सुथिरता को हरै, करै आगमन कर्म ।
तुम तासों निर्लेप हो, नाशौ मोह मद शर्म ॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगकृतनिर्लेपाय नमः अर्घ्यं ॥९०३॥



निज आतम में स्वस्थ हैं, स्वैपद योग रमाय।
निर्भय तुम निरङ्कु हो, नमूं जोर कर पाँय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्थयोगरतजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९०४॥

महादेव गिरिराज पर, जन्म समै जिन सूर।
योगकिरण विकसात हो, शोक तिमिरकर दूर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं गिरिसंयोगजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९०५॥

सूक्ष्म निज परदेश तन, सूक्ष्म किया परिणाम।
चितवत मन नहिं वच चलै, राजत हो शिवधाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मीकृतवपुःक्रियाय नमः अर्घ्यं ॥९०६॥

सूक्ष्म तत्व परकाश हैं, शुभ प्रिय वचनन द्वार।
भविजन को आनंद करि, तीन जगत गुरु सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मवाङ्मितयोगाय नमः अर्घ्यं ॥९०७॥

कर्म रहित शुद्धात्मा, निश्चल किया रहात।
स्वप्रदेशमय थिर सदा, कृतकृत्य सुखपात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कर्मशुद्धात्मजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९०८॥

विद्यमान प्रत्यक्षा है, चेतनराय प्रकाश।
कर्म कालिमासों रहित, पूजत हो अघ नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतामिव्यक्तचेतनाय नमः अर्घ्यं ॥९०९॥

गृहस्थाचरण सुभेद करि, धर्मरूप रसराराश।
एक तुम्हीं हो धर्म करि, पायो शिवपुर वास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरासजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९१०॥

सूर्य प्रकाशन मोहतम, हरता हो शुभ पन्थ।
पाप किया बिन राजते, महायती निरग्रन्थ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमहंसाय नमः अर्घ्यं ॥९११॥

बन्ध रहित सर्वस्व करि, निर्मल हो निर्लेप ।
शुद्ध सुवर्ण दिपै सदा, नहिं मोह मल लेप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमसंवराय नमः अर्घ्यं ॥९१२॥

मेघ पटल बिन सूर्य जिम, दीप्त अनन्त प्रताप ।
निरावर्ण तुम शुद्ध हो, पूजत मिट है पाप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावर्णाय नमः अर्घ्यं ॥९१३॥

कर्म अंश सब झर गिरे, रहो न एक लगार ।
परम शुद्धता धारकै, तिष्ठत ही अविकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमनिर्जराय नमः अर्घ्यं ॥९१४॥

तेज प्रचण्ड प्रभाव है, उदय रूप परताप ।
अन्य कुदेव कुआरिया, जुगजुग धरत कलाप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलितप्रभाय नमः अर्घ्यं ॥९१५॥

भये निरर्थक कर्म सब, शक्ति भई है हीन ।
तिनको जीति छिनक में, भये सुखी स्वाधीन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं समस्तकर्मक्षयजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९१६॥

कर्म प्रकृति को रोग सम, जानो हो क्षयकार ।
निज स्वरूप आनंद में, कहो विगार निहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मविस्फोटकाय नमः अर्घ्यं ॥९१७॥

हीन शक्ति परमाद को, आप कियो है अन्त ।
निज पुरुषारथ सुवीर्यसों, सुखी भए सुअनन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्यजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९१८॥

एक रूप रस स्वाद में, निर आकुलित रहाय ।
विविधरूप रस पर निमित्त, ताको त्याग कराय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ऐकाकाररसास्वादाय नमः अर्घ्यं ॥९१९॥



इन्द्री मन के सब विषय, त्याग दिये इक लार।

निजानन्द में मगन हैं, छाँड़ो जग व्यापार॥

ॐ ह्रीं अहं विश्वाकाररसाकुजिताय नमः अर्घ्यं ॥९२०॥

पर सम्बन्धी प्राण बिन, निज प्राणनि आधार।

सदा रहै जीतव्यता, जरा मृत्यु को टार॥

ॐ ह्रीं अहं सदाजीविते नमः अर्घ्यं ॥९२१॥

निज रस के सागर धनी, महाप्रिय स्वादिष्ट।

अमर रूप राजै सदा, सुर मुनि के हो इष्ट॥

ॐ ह्रीं अहं अमृताय नमः अर्घ्यं ॥९२२॥

पूरण निज आनन्द में, सदा जागते आप।

नहिं प्रमाद में लिप्त हैं, पूजत विनशो पाप॥

ॐ ह्रीं अहं जाग्रते नमः अर्घ्यं ॥९२३॥

क्षीण ज्ञान ज्ञानावरण, करै जीव को नित्य।

सो आवर्ण विनाशियो, रहो अस्वप्न सुवित्य॥

ॐ ह्रीं अहं असुप्ताय नमः अर्घ्यं ॥९२४॥

स्व प्रमाण में थिर सदा, स्वयं चतुष्टय सत्य।

निराबाध निर्भय सुखी, त्यागत भाव असत्य॥

ॐ ह्रीं अहं स्वप्रमाणस्थिताय नमः अर्घ्यं ॥९२५॥

श्रम करि नहिं आकुलित हो, सदा रहो निरखेद।

स्वस्थरूप राजो सदा, वेदो ज्ञान अभेद॥

ॐ ह्रीं अहं निराकुलितजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९२६॥

मन-वच-तन व्यापार था, तावत रहो शरीर।

ताको नाश अकम्प हो, बन्दूं मन धर धीर॥

ॐ ह्रीं अहं अयोगिने नमः अर्घ्यं ॥९२७॥



ॐ ह्रीं अर्हं अणीयशे नमः अर्घ्यं ॥९३५॥



कर्म प्रबन्ध सुघन-पटल, ताकी छाँय निवार ।

रवि वन ज्योति प्रगट भई, पूरणता विधि धार ॥

ॐ ह्रीं अर्ह अनणुपर्याय नमः अर्घ्य ॥९३६॥

निज प्रदेश में थिर सदा, योग निमित्त निवार ।

अचल शिवालय के विषैं, तिष्ठैं सिद्ध अपार ॥

ॐ ह्रीं अर्ह स्थेयसे नमः अर्घ्य ॥९३७॥

सन्त नमन प्रिय हो अती, सज्जन वल्लभ जान ।

मुनि जन मन प्यारे सही, नमत होत कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अर्ह प्रेष्ठाय नमः अर्घ्य ॥९३८॥

काल अनन्तानन्त लौं, करैं शिवालय पास ।

अव्यय अविनाशी सुथिर, स्वयं जोति परकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्ह स्थिरजिनाय नमः अर्घ्य ॥९३९॥

स्वै आतम में वास है, रुलत नहीं संसार ।

ज्यों के त्यों निश्चल सदा, बन्दत भव दधि पार ॥

ॐ ह्रीं अर्ह निजात्मतत्त्वनिष्ठाय नमः अर्घ्य ॥९४०॥

सुभग सरावन योग्य हैं, उत्तम भाव धराय ।

तीनलोक में सार है, मुनिजन वन्दित पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्ह श्रेष्ठभावधारकजिनाय नमः अर्घ्य ॥९४१॥

सब के अग्रेसर भये, सब के हो सिरताज ।

तुम से बड़ा न और है, सब के कर हो काज ॥

ॐ ह्रीं अर्ह जेष्ठाय नमः अर्घ्य ॥९४२॥

स्वप्रदेश निष्कम्प हैं, द्रव्य भाव विधि नाश ।

इष्टानिष्ट निमित्त धरैं, निज आनन्द विलास ॥

ॐ ह्रीं अर्ह निष्कंप्रदेशजिनाय नमः अर्घ्य ॥९४३॥



उचित क्षमादिक अर्थ सब, सत्य सुन्यास सुलब्ध ।

तिन सबके स्वामी नमूं, पूरण सुखी सुअब्ध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं उत्तमक्षमादिगुणाब्धिजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९४४॥

महा कठिन दुःशक्य हैं, यह संसार निकाश।

तुम पायो पुरुषार्थ करि, लहो स्वलब्धि अवास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यपादजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९४५॥

परमारथ निज गुण कहें, मोक्ष प्राप्ति में होय।

स्वारथ इन्द्रिय जन्य है, सो तुम इनको खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगुणनिधानाय नमः अर्घ्यं ॥९४६॥

पर निमित्त या भेद करि, या उपचरित कहाय।

सो तुम में सब भय भए, मानो सुत कहाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्यवहारसूक्ष्माय नमः अर्घ्यं ॥९४७॥

स्वै पद में नित रमन है, अप्रमाद अधिकाय।

निज गुण सदा प्रकाश है, अतुल बली नमूं पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतिजागरूकाय नमः अर्घ्यं ॥९४८॥

सकल उपद्रव मिटि गये, जे थे पर के साथ।

निर्भय सदा सुखी भये, बन्दू नमि निज माथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतिसूस्थिताय नमः अर्घ्यं ॥९४९॥

कहै हवे हो नेमसै, परमाराध्य अनादि ।

तुम महात्मा जगत के, और कृदेव कृवादि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं उदितोदितमाहात्म्याय नमः अर्घ्यं ॥१५०॥

तत्त्वज्ञान अनुकूल सब, शब्द प्रयोग विचार।

तिसके तुम अध्याय हो, अर्थ प्रकाशनहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वज्ञानानुकूलजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९५१॥



ना काहूँसो जन्म हो, ना काहूँसो नाश।
स्वयंसिद्ध बिन पर निमित्त, स्वयंस्वरूप प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिमाय नमः अर्घ्यं ॥९५२॥

अप्रमाण अत्यन्त है, तुम सन्मति परकाश।
तेजरूप उत्सवमई, पाप-तिमिर को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमेयमहिम्ने नमः अर्घ्यं ॥९५३॥

रागादिक मल को हरै, तनक नहीं अनवास।
महाविशुद्ध अत्यन्त हैं, हरो पाप-अहि-डॉस॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तशुद्धाय नमः अर्घ्यं ॥९५४॥

स्वयं सिद्ध भरतार हो, शिव कामिनी के संग।
रमण भाव निज योग में, मानो अति आनन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धिस्वयंवराय नमः अर्घ्यं ॥९५५॥

विविध प्रकार न धरत हैं, हैं अजन्म अव्यक्त।
सूक्ष्म सिद्ध समान हैं, स्वयं स्वभाव सुव्यक्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धानुजाय नमः अर्घ्यं ॥९५६॥

मोक्षरूप शुभ वास के, आप मार्ग निरखेद।
भविजन सुलभ गमन करैं, जगत वास को छेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवपुरीपंथाय नमः अर्घ्यं ॥९५७॥

गुणसमूह अत्यन्त है, कोई न पावै पार।
थकित रहे श्रुतकेवली, निजबल कथन अगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तगुणसमूहजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९५८॥

इक अवगाह प्रदेश में, हो अवगाह अनन्त।
पर उपाधि निग्रह कियो, मुख्य प्रधान अनन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं परउपाधिनिग्रहकारकजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९५९॥

स्वयं सिद्ध निज वस्तु हो, आगम इन्द्रिय ज्ञान ।
कर्त्तादिक लक्षण नहीं, स्वयं स्वभाव प्रमान ॥

ॐ ह्रीं अहं स्वयंसिद्धजिनाय नमः अर्घ्य ॥९६०॥

हो प्रछन्न इन्द्रिय अगम, प्रगट न जाने कोश ।
सकल अगुण को लय कियो, निज आत्म से खोय ॥

ॐ ह्रीं अहं इन्द्रियागम्यजिनाय नमः अर्घ्य ॥९६१॥

निज गुण करि किज पोषियो, सकल क्षुद्रता त्याग ।
पूरण निजपद पाय करि, तिष्ठत हो बड़ भाग ॥

ॐ ह्रीं अहं पुष्टाय नमः अर्घ्य ॥९६२॥

ब्रह्मचर्य पूरण धरें, निजपद समता धार ।
सहस अठारह भेद करि, शील सुभाव सुसार ॥

ॐ ह्रीं अहं अष्टादशसहस्रशीलेश्वराय नमः अर्घ्य ॥९६३॥

महा पुण्य शिवपद कमल, ताके दल विकसान ।
मुनि मन भ्रमर रमण सुथल, गन्धानन्द महान ॥

ॐ ह्रीं अहं पुण्यसंकुलाय नमः अर्घ्य ॥९६४॥

मति श्रुत अवधि विज्ञान युत, स्वयं बुद्ध भगवान ।
कृतयुग में मुनि व्रत धरो, शिवसाधक परधान ॥

ॐ ह्रीं अहं व्रताग्रयुयाय नमः अर्घ्य ॥९६५॥

परम शुक्ल शुभ ध्यान में, तुम सेवन हितकार ।
सन्त उपासक आपके, कर्मबन्ध छुटकार ॥

ॐ ह्रीं अहं परमशुक्लध्यानने नमः अर्घ्य ॥९६६॥

खारवारि इस जलधि को, शीघ्र कियो तुम अन्त ।
गोखुरकार उलंघियो, धरो स्वभुज बलवन्त ॥

ॐ ह्रीं अहं संसारसमुद्रतारकजिनाय नमः अर्घ्य ॥९६७॥



एक समय में गमन कर, कियो शिवालय वास ।
काल अनन्त अचल रहो, मेटो जग भ्रम त्रास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं क्षेपिष्ठाय नमः अर्घ्यं ॥९६८॥

पञ्चाक्षर लघु जाप में, जितना लागे काल ।
अन्तिम पाया शुक्ल का, ध्याय वसै जग भाल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चलघुअक्षरस्थितये नमः अर्घ्यं ॥९६९॥

प्रकृति त्रयोदश शेष हैं, जबतक मोक्ष न होय ।
सब प्रकृति स्थित मेटकें, पहुँचे शिवपुर सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशप्रकृति नमः अर्घ्यं ॥९७०॥

तेरह विधि चारित्र के, तुम हो पूरण शूर ।
निज पुरुषारथ करि लियो, शिवपुर आनन्द पूर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशचारित्रपूर्णाय नमः अर्घ्यं ॥९७१॥

निज सुख में अन्तर नहीं, परसों हानि न होय ।
स्वस्वरूप परदेश जिन, तिन पूजत हूँ सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टेष्टाभेद्यजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९७२॥

निज पूजनतें देत हो, शिव सम्पति अधिकाय ।
यातें पूजन योग्य हो, पूजूँ मन-वच-काय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवदातृजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९७३॥

मोह महा परचण्ड बल, सकै न तुमको जीत ।
नमूँ तुम्हें जयवन्त हो, धार सु उर में प्रीति ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजयजिनाय नमः अर्घ्यं ॥९७४॥

यज्ञ विधान में जजत ही, आप मिले निधि रूप ।
तुम समान नहीं और धन, हरत दरिद दूःख कूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं याज्याय नमः अर्घ्यं ॥९७५॥

लोकोत्तर सम्पद विभव, है सर्वस्व अघाय।
तुम से अधिक न और हैं, सुख विभूति शिवराय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घपरिग्रहाय नमः अर्घ्यं ॥९७६॥

तुमरो आह्वानन यजन, प्रासुक विधि से योग।
त्रिजग अमोलिक निधि सही, देत परम सुख भोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घहेतवे नमः अर्घ्यं ॥९७७॥

एक देश मुनिराज हैं, सर्व देश जिनराज।
भवतन भोग विरक्तता, निर्ममत्त्व सुखसाज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमनिस्पृहाय नमः अर्घ्यं ॥९७८॥

पर दुःख में दुःख हो जहाँ, मोह प्रकृति के द्वार।
दया कहैं तिसको सुमति, सो तुम मोह निवार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तनिर्मोहाय नमः अर्घ्यं ॥९७९॥

स्वयं बुद्ध भगवान हो, सुर मुनि पूजन योग।
बिन शिक्षा शिवमार्ग को, साधो हो धरि योग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अशिष्याय नमः अर्घ्यं ॥९८०॥

तुम एकत्व अन्यत्व हो, परसों सहीं सम्बन्ध।
स्वयं सिद्ध अविबुद्ध हो, नाशो जगत प्रबन्ध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परसम्बन्धरहिताय नमः अर्घ्यं ॥९८१॥

काहू को नहीं यजन करि, गुरु का नहीं उपदेश।
स्वयं बुद्ध स्व शक्ति हो, राजो शुद्ध हमेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षाय नमः अर्घ्यं ॥९८२॥

तुम त्रिभुवन के पूज्य हो, यजो न काहू और।
निज हित में रत हो सदा, पर निमित्त को छोर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनपूज्याय नमः अर्घ्यं ॥९८३॥



अरहन्तादि उपासना, मोह उदय सो होय ।

स्वयं ज्ञान में लय भए, मोह कर्म को खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षकाय नमः अर्घ्यं ॥९८४॥

गौण रूप परिणाम है, मुख ध्रुवता गुणधार ।

अक्षय अवनीश्वर स्वपद, स्वस्थ सुथिर अविचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयाय नमः अर्घ्यं ॥९८५॥

सूक्ष्म शुद्ध स्वभाव है, लहै न गणधर पार ।

इन्द्र तथा अहमिन्द्र सब, अभिलाषित उर धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगम्याय नमः अर्घ्यं ॥९८६॥

अचल शिवालय के विषैं, टङ्कोत्कीर्ण समान ।

सदा विराजो सुख सहित, जगत भ्रमण को हान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगमकाय नमः अर्घ्यं ॥९८७॥

रमण योग छद्मस्थ के, नाहिं अलिङ्ग सरूप ।

पर प्रवेश बिन शुद्धता, धारत सहज अनूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरम्याय नमः अर्घ्यं ॥९८८॥

पर पदार्थ इच्छुक नहीं, इष्टानिष्ट निवार ।

सुथिर रहो निज आत्म में, बन्दत हूँ हित धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमरकाय नमः अर्घ्यं ॥९८९॥

जाको पार न पाइयो, अवधि रहित अत्यन्त ।

सो तुम ज्ञान महान है, आशा राखे सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञाननिर्भराय नमः अर्घ्यं ॥९९०॥

मुनिजन जिन सेवन करैं, पावै निज पद सार ।

महा शुद्ध उपयोगमय, वरतत हैं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महायोगीश्वराय नमः अर्घ्यं ॥९९१॥

भाव शुद्ध परमात्मा, द्रव्य शुद्ध बिन देह ।

कर्म वर्गणा नहिं लिपे, पूजत हूँ धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं अहं द्रव्यशुद्धाय नमः अर्घ्यं ॥९९२॥

पञ्च प्रकार शरीर को, सूल कियो विध्वंश ।

स्व प्रदेशमय राजते, पर मिलाप नहीं अंश ॥

ॐ ह्रीं अहं अदेहाय नमः अर्घ्यं ॥९९३॥

जाको फेर न जन्म है, फिर नाहीं संसार ।

सो पञ्चमगति शिवमई, पायो तुम निरधार ॥

ॐ ह्रीं अहं अपुनर्भवाय नमः अर्घ्यं ॥९९४॥

सकल इन्द्रियाँ व्यर्थ करि, केवलज्ञान सहाय ।

सब द्रव्यन को ज्ञान हैं, गुण अनन्त पर्याय ॥

ॐ ह्रीं अहं ज्ञानैकविदे नमः अर्घ्यं ॥९९५॥

जीव मात्र निज धन सहित, गुण समूह मणि खान ।

अन्य विभाव विभव नहीं, महाशुद्ध अमलान ॥

ॐ ह्रीं अहं जीवधनाय नमः अर्घ्यं ॥९९६॥

सिद्ध भये परसिद्ध तुम, निज पुरुषारथ साथ ।

महाशुद्ध निज आत्ममय, सदा रहो निरवाद ॥

ॐ ह्रीं अहं सिद्धपरमात्मने नमः अर्घ्यं ॥९९७॥

लोक शिखर पर थिर भए, ज्यों मन्दिर मणिकुम्भ ।

निज शरीर अवगाह में, अचल सुथान अलुम्भ ॥

ॐ ह्रीं अहं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घ्यं ॥९९८॥

सहज निरामय भेद बिन, निराबाध निस्संग ।

एक रूप सामान्य हो, निज विशेषमई अंग ॥

ॐ ह्रीं अहं निर्द्वन्दाय नमः अर्घ्यं ॥९९९॥



जे अविभाव प्रछेद है, इक गुण के सु अनन्त ।
तुम में पूरण गुण सही, धरो अनन्तानन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्ह अनन्तानन्तगुणाय नमः अर्घ्य ॥१०००॥

पर मिलाप नहीं लेश है, स्वप्रदेशमय रूप ।
क्षयोपसम ज्ञानी तुम्हें, जानत नहीं स्वरूप ॥

ॐ ह्रीं अर्ह आत्मरूपाय नमः अर्घ्य ॥१००१॥

क्षमा आत्म को भाव है, क्रोध कर्मसो घात ।
सो तुम कर्म खिपाड़यो, क्षमासु भाव धरात ॥

ॐ ह्रीं अर्ह महाक्षमाय नमः अर्घ्य ॥१००२॥

शील सुभाव सु आत्म को, क्षोभ रहित सुखदाय ।
निर-आकुलता धार है, बन्दूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्ह महाशीलाय नमः अर्घ्य ॥१००३॥

शशि स्वभाव ज्यों शांति धर, और न शांति धराय ।
आप शांति पर शांति कर, भव दुःख दाह मिटाय ॥

ॐ ह्रीं अर्ह महाशान्ताय नमः अर्घ्य ॥१००४॥

तुम सम को बलवान है, जीत्यो मोह प्रचण्ड ।
धरो अनन्त स्ववीर्य को, निजपद सुथिर अमण्ड ॥

ॐ ह्रीं अर्ह अनन्तवीर्यात्मकाय नमः अर्घ्य ॥१००५॥

लोकालोक विलोकियो, संशय बिन इकवार ।
खेदरहित निश्चल सुखी, स्वच्छ आरसीसार ॥

ॐ ह्रीं अर्ह लोकालोकज्ञाय नमः अर्घ्य ॥१००६॥

निरावर्ण स्वै गुण सहित, निजानन्द रस भोग ।
अव्यय अविनाशी सदा, अजर अमर शुभ योग ॥

ॐ ह्रीं अर्ह निरावर्णाय नमः अर्घ्य ॥१००७॥

परम मुनीश्वर ध्यान धर, पावैं निज पद सार ।
ज्यों रविबिंब प्रकाश कर, घटपट सहज निहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ध्येयगुणाय नमः अर्घ्यं ॥१००८॥

कवलाहारी कहत हैं, महामूढ़ मतिमन्द ।
अशन असाता पीर बिन, आप भये सुख कन्द ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अशनदग्धाय नमः अर्घ्यं ॥१००९॥

लोक शीश छबि देत हो, धरो प्रकाश अनूप ।
बुधदन आदर जोग हो, सहज अकम्प सरूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकमणये नमः अर्घ्यं ॥१०१०॥

महागुणन की रास हो, लोकालोक प्रजन्त ।
सुर मुनि पार न पावते, तुम्हें नमें नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तगुणप्राप्ताय नमः अर्घ्यं ॥१०११॥

परम सु गुण परिपूर्ण हो, मलिन भाव नहिं लेश ।
जगजीवन आराध्य हो, हम तुम यही विशेष ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं ॥१०१२॥

केवल ऋद्धि महान है, अतिशय युत तप सार ।
सो तुम पायो सहज ही, मुनिगण वन्दनहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाऋषये नमः अर्घ्यं ॥१०१३॥

भूत भविष्यत् काल को, कभी न होवे अन्त ।
नितप्रति शिवपद पाय कर, होत अनन्तानन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ॥१०१४॥

निर्भय निर आकुलित हो, स्वयं स्वस्थ निरखेद ।
काहू विधि घबराहट नहीं, निज आनन्द अभेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं ॥१०१५॥



सो गुण गुणी सुभेद करि, सो जड़मती अजान।
निज गुण गुणीसु एकता, स्वयंबुद्ध भगवान॥

ॐ ह्रीं अहं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घ्यं ॥१०१६॥

निरावरण निज ज्ञान में, सर्व स्पष्ट दिखाय।
संशय बिन नहीं भरम है, सुथिर रहो सुख पाय॥

ॐ ह्रीं अहं निरावरणज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥१०१७॥

राग-द्वेष के अंश में, मत्सर भाव कहात।
सो तुम नासो मूल ही, रहै कहाँसो पात॥

ॐ ह्रीं अहं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं ॥१०१८॥

अणुवत लोकालोक है, जाके ज्ञान मँझार।
सो तुम ज्ञान अथाह है, बन्दू में चित धार॥

ॐ ह्रीं अहं अनन्तानन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं ॥१०१९॥

हस्तरेख सम देख हो, लोकालोक सरूप।
सो अनन्तदर्शन धरो, नमत मिटै भ्रम कूप॥

ॐ ह्रीं अहं अनन्तानन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं ॥१०२०॥

तीनलोक का पूज्यपन, प्रगट कहै दिखलाय।
तीनलोक शिरवास है, लोकोत्तम सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अहं लोकशिखरवासिये नमः अर्घ्यं ॥१०२१॥

निज पद में लवलीन हैं, निज रस स्वाद अघाय।
पर सों इह रस गुप्त है, कोटि यत्न नहीं पाय॥

ॐ ह्रीं अहं सुगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं ॥१०२२॥

कर्म प्रकृति को मूल नहीं, द्रव्य रूप यह भाव।
महास्वच्छ निर्मल दिपै, ज्यों रवि मेघ अभाव॥

ॐ ह्रीं अहं पूतात्मने नमः अर्घ्यं ॥१०२३॥



दोहा

जयमाला - दोहा

बार-बार श्रुति करन में, नहीं पुनरुक्त भनन्त ॥

पद्धती छन्द मात्रा-१६

जय स्वयं विकास आभार भास, जय स्वयं सिद्ध निज पद निवास ॥

जय स्वयं बुद्ध सङ्कल्प टार, जय स्वयं शुद्ध रागादि जार ।
 जय स्वयं स्वगुण आचार धार, जय स्वयं सुखी अक्षय अपार ॥
 जय स्वयं चतुष्टय राजमान, जय स्वयं अनन्त सुगुण निधान ।
 जय स्वयं स्वस्थ सुस्थिर अयोग, जय स्वयं स्वरूप मनोग योग ॥
 जय स्वयं स्वच्छ निज ज्ञान पूर, जय स्वयं वीर्य रिपु वज्र चूर ।
 जय महामुनिन आराध्य जान, जय निपुणमती तत्त्वज्ञ मान ॥
 जय सन्तति मन आनन्दकार जय सज्जन चित वल्लभ अपार ।
 जय सुरगण गावत हर्ष पाय, जय कवियश कथन न करि अघाय ॥
 तुम महा तीर्थ भवि तरण हेत, तुम महा धर्म उद्धार देत ।
 तुम महामन्त्र विष विघ्न जार, अघ रोग रसायन कहो सार ॥
 तुम महाशास्त्र के मूल ज्ञेय, तुम महा तत्त्व हो उपादेय ।
 तिहुँलोक महामंगल सु रूप, लोकत्रय सर्वोत्तम अनूप ॥
 तिहुँलोक शरण अघ हर महान, भवि देत परम पद सुख निधान ।
 संसार महासागर अथाह, नित जन्म-मरण धारा प्रवाह ॥
 सो काल अनन्त दियो बिताय, तामें झकोर दुःख रूप खाय ।
 मो दुःखी देख उर दया आन, इम पार करो कर ग्रहण पान ॥
 तुम ही हो इस पुरुषार्थ जोग, अरु है अशक्त करि विषय रोग ।
 सुर नर पशु दास कहैं अनन्त, इन में से भी इक जान "सन्त" ॥

घत्ता-कवित्त

जय विघन जलधि जल, हनन पवन बल,
 सकल पाप मल जारन हो ।
 जय मोह उपल हन, वज्र असल दुःख,
 अनिल ताप जल कारन हो ॥

ज्यूँ पंगु चढ़ै गिरि, गूँग भरे सुर,
अभुज सिन्धु तर कष्ट भरै ।
त्यों तुम थुति काम, महा लज ठाम,
सु अन्त सन्त परिणाम करै ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विंशत्यधिकसहस्रगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।
इति पूर्णार्घ्यं ।

दोहा

तीन लोक चूड़ामणी, सदा रहो जयवन्त ।
विघ्नहरण मंगल करन, तुहँ नमें नित सन्त ॥

इत्याशीर्वादः ।

अथ पूर्ण आशीर्वादः

अडिल्ल छन्द

पूरण मंगल रूप महा यह पाठ है,
सरस सुरुचि सुखकार भक्ति की ठाठ है ।
शब्द अर्थ में चूक होय तो हो कहीं,
थुति वाचक सब शब्द अर्थ यामें सही ॥
जिन गुणकरण आरंभ हास्य को धाम है,
वायसका नहिं सिन्धु उतीरण काम है ।
यै भक्तनि की रीति सनातन है यही,
क्षमा करो भगवन्त शान्ति पूरण मही ॥

इति पूर्णाशीर्वादः -- परिपुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ।

इति श्री सिद्धचक्र पाठ भाषा--कवि सन्तलालजी कृत समाप्त ।



जाप्य मन्त्र - ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा नमः ॥१०८॥

इसके पीछे चौबीस तीर्थङ्कर पूजा अथवा सरस्वती पूजा करनी चाहिये फिर शांतिपाठ विसर्जन करके पाठ समाप्त करे।

◆ हवन विधि ◆

हवन के लिए किसी लम्बे-चौड़े स्थान में कुण्ड बनावे। वे इस प्रकार के हों--प्रथम तीर्थङ्कर कुण्ड एक अरत्ति (मुष्टि बन्धे हाथ को अरत्ति कहते हैं) लम्बा, इतना ही चौड़ा चौकोर हो और इतना ही गहरा हो। इसकी तीन कटनी हों--पहली ५ अंगुली की ऊँची चौड़ी, दूसरी ४ अंगुल की, तीसरी ३ अंगुल की हो। इस कुण्ड के दक्षिण की ओर त्रिकोण कुण्ड उसी प्रमाण से लम्बा, चौड़ा, गहरा हो तथा उत्तर की ओर गोल कुण्ड उतनी ही लम्बाई, चौड़ाई और गहराईवाला हो। प्रत्येक कुण्ड का एक दूसरे से अन्तर चार-चार अंगुल का होना चाहिये। इन कुण्डों के चारों ओर कटनियों पर ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं लिखना चाहिये।

ये कुण्ड कच्ची ईंटों से एक दिन पहले तैयार करा लेने चाहिये और इन्हें अच्छे सुन्दर रङ्गों से रंग देना चाहिये। भीतर का भाग पीली या सफेद मिट्टी से पोत देना चाहिये-- कुण्डों की तीन कटनियों पर चार-चार पतली खूँटी गाड़ें या छोटे-छोटे गिलास रखें जिनमें कलावा (मौली) लपेटा जा सके। कलावा लपेटते समय यह मन्त्र बोलना चाहिये--

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चवर्णसूत्रेण त्रान् वारान् वेष्टयामि।

इस प्रकार एक खूँटी से दूसरी खूँटी और दूसरी खूँटी से तीसरी तथा तीसरी से चौथी खूँटी तक कलावा (मौली) लपेटे।

कुण्डों के पास दक्षिण या पश्चिम में एक वेदी बनावे जैसे पाठ के मांडने के पास बनाई थी। उसमें सिद्धयन्त्र बिराजमान करें। वेदी

ॐ ह्रीं वायुकुमाराय सर्व विघ्नविनाशाय कुरु कुरु
फट् स्वाहा ।

फिर डाभ दूब का पूबा जल में भिगो कर पृथ्वी पर छिड़के, तब यह मंत्र पढ़े
 ॐ ह्रीं मेघकुमारायधरांप्रक्षालयप्रक्षालयं अं हं तं झं
 झं यं क्षः फट् स्वाहा।

फिर यन्त्र का प्रक्षालन करे, तब यह मंत्र पढ़े--

ॐ ह्रीं भूभुवः स्वरिह एतद्विघ्नौघवारकं यन्त्रमहं
 परिषिंचयामि स्वाहा।

फिर यन्त्र की पूजा करे। इसके बाद अग्निकुण्ड में साथिये बनायें
 या ॐ लिखे। पीछे कुण्ड में कपूर और डाभ दूब के पूले से अग्नि
 स्थापन करे, तब यह मंत्र पढ़े--

ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं अग्नि संस्थापयामि स्वाहा।

फिर कुण्डों में एक-एक अर्घ्य दे। प्रथम चतुष्कोण की पूजा।

श्री तीर्थनापरिनिवृत्तिपूज्यकाले,

आगत्य वह्निसुरपा मुकुटोल्लसद्दिग्।

वह्निव्रजैर्जिनपदेऽहमुदारभक्त्या,

देहु ष्टदग्निमहर्चयितुं ददधामि॥

ॐ ह्रीं प्रथमे चतुरस्रे तीर्थङ्करकुण्डे गार्हपत्याग्नयेर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

गणाधिपानां शिवयातिकाऽले,

ग्नीन्द्रोत्तमांगस्तफुरदग्निरेषः।

संस्थाप्य पूज्यः स मयाह्वनीयो,

विधानशांतौ विधिनाहुताशः।

ॐ ह्रीं द्वितीये वृते गणधरकुण्डे आग्नीयाग्नये निर्वपामीति स्वाहा।

श्री दक्षिणाग्निः परकेवलिस्व-

शरीरनिर्वाणनुताग्निदेव-।

किरीटसंस्फुर्यदसौ मयापि, संस्थाप्य पूज्योहि विधानशान्त्यै ॥

ॐ ह्रीं त्रिकोणे सामान्यकेवलीलकुण्डे दक्षिणाग्नये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
इसके पश्चात् निम्नलिखित मंत्रों की आहुति देनी चाहिये ।

◆ पीठिका मन्त्र ◆

ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥२॥ ॐ परमजाताय नमः ॥३॥ ॐ अनुपमजाताय नमः ॥४॥ ॐ स्वप्रधानाय नमः ॥५॥ ॐ अचलाय नमः ॥६॥ ॐ अक्षयाय नमः ॥७॥ ॐ अव्याबधाय नमः ॥८॥ ॐ अनन्तज्ञानाय नमः ॥९॥ ॐ अनन्तदर्शनाय नमः ॥१०॥ ॐ अनन्तवीर्याय नमः ॥११॥ ॐ अनन्तसुखाय नमः ॥१२॥ ॐ नीरजसे नमः ॥१३॥ ॐ निर्मलाय नमः ॥१४॥ ॐ अछेद्याय नमः ॥१५॥ ॐ अभेद्याय नमः ॥१६॥ ॐ अजराय नमः ॥१७॥ ॐ अमराय नमः ॥१८॥ ॐ अप्रमेयाय नमः ॥१९॥ ॐ अगर्भवासाय नमः ॥२०॥ ॐ अक्षोभाय नमः ॥२१॥ ॐ अविलीनाय नमः ॥२२॥ ॐ परमधनाय नमः ॥२३॥ ॐ परमकाष्ठायोगरूपाय नमः ॥२४॥ ॐ लोकाग्रवासिने नमो नमः ॥२५॥ ॐ परमसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२६॥ ॐ अर्हत्सिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२७॥ ॐ केवलसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२८॥ ॐ अन्तकृत्सिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२९॥ ॐ परम्परासिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३०॥ ॐ अनादिपरम्परासिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३१॥ ॐ अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३२॥ ॐ सम्यग्दृष्टे आसन्नभव्यनिर्वाणपूजार्ह अग्नीदाय स्वाहा ॥३३॥

सेवाफलं षट्परमस्थ नं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

◆ जाति मन्त्र ◆

ॐ सत्यजन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥१॥ ॐ अर्हज्जन्मः शरणं प्रपद्ये ॥२॥ ॐ अर्हन्मातुः शरणं प्रपद्ये ॥३॥ ॐ अर्हत्सुतस्य शरणं प्रपद्ये ॥४॥ ॐ



अनादिगमनस्य शरणं प्रपद्ये ॥५॥ ॐ अनुपमजन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥६॥ ॐ
रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये ॥७॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे ज्ञानमूर्ते ज्ञानमूर्ते
सरस्वती सरस्वती स्वाहा ॥८॥

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं
भवतु स्वाहा ।

◆ निस्तारक मन्त्र ◆

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ
षट्कर्मणे स्वाहा ॥३॥ ॐ ग्रामपतये स्वाहा ॥४॥ ॐ अनादिश्रोत्रिकाय
स्वाहा ॥५॥ ॐ स्नातकाय स्वाहा ॥६॥ ॐ श्रावकाय स्वाहा ॥७॥ ॐ
देवब्राह्मणाय स्वाहा ॥८॥ ॐ सुब्राह्मणाय स्वाहा ॥९॥ ॐ अनुपमाय
स्वाहा ॥१०॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे निधिपते निधिपते वैश्रवण वैश्रवण
स्वाहा ॥११॥

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं
भवतु स्वाहा ।

◆ ऋषि मन्त्र ◆

ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥२॥ ॐ निर्ग्रन्थाय
नमः ॥३॥ ॐ वीतरागाय नमः ॥४॥ ॐ महाव्रताय नमः ॥५॥ ॐ त्रिगुप्ताय
नमः ॥६॥ ॐ महायोगाय नमः ॥७॥ ॐ विविधयोगाय नमः ॥८॥ ॐ
विविधर्द्धये नमः ॥९॥ ॐ अङ्गधराय नमः ॥१०॥ ॐ पूर्वधराय नमः ॥११॥
ॐ गणधराय नमः ॥१२॥ ॐ परमर्षिभ्यो नमो नमः ॥१३॥ ॐ
अनुपमजाताय नमो नमः ॥१४॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे भूपते भूपते
नगरपते नगरपते कालश्रमण कालश्रमण स्वाहा ॥१५॥

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं
भवतु स्वाहा ।

◆ सुरेन्द्र मन्त्र ◆

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ दिव्यजाताय स्वाहा ॥३॥ ॐ दिव्यार्चिजाताय स्वाहा ॥४॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥५॥ ॐ सौधर्माय स्वाहा ॥६॥ ॐ कल्पाधिपतये स्वाहा ॥७॥ ॐ अनुचराय स्वाहा ॥८॥ ॐ परम्परेन्द्राय स्वाहा ॥९॥ ॐ अहमिन्द्राय स्वाहा ॥१०॥ ॐ परमार्हताय स्वाहा ॥११॥ ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥१२॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे कल्पपते कल्पपते दिव्यमूर्ते दिव्यमूर्ते वज्रनाभन् वज्रनाभन् स्वाहा ॥१३॥

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

◆ परमराजादि मन्त्र ◆

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ अनुपमेन्द्राय स्वाहा ॥३॥ ॐ विजयाचर्यजाताय स्वाहा ॥४॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥५॥ ॐ परमजाताय स्वाहा ॥६॥ ॐ परमार्हताय स्वाहा ॥७॥ ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥८॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे उग्रतेजः उग्रतेजः दिशांजन दिशांजन नेमिविजय नेमिविजय स्वाहा ॥९॥

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

◆ परमेष्ठि मन्त्र ◆

ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥२॥ ॐ परमजाताय नमः ॥३॥ ॐ परमार्हताय नमः ॥४॥ ॐ परमरूपाय नमः ॥५॥ ॐ परमतेजसे नमः ॥६॥ ॐ परमगुणाय नमः ॥७॥ ॐ परमस्थानाय नमः ॥८॥ ॐ परमयोगिने नमः ॥९॥ ॐ परमभाग्याय नमः ॥१०॥ ॐ परमर्द्धये नमः ॥११॥ ॐ परमप्रसादाय नमः ॥१२॥ ॐ परमकांक्षिताय नमः ॥१३॥ ॐ परमविजयाय नमः ॥१४॥ ॐ परमविज्ञानाय नमः ॥१५॥ ॐ



परमदर्शनाय नमः ॥१६॥ ॐ परमवीर्याय नमः ॥१७॥ ॐ परमसुखाय
नमः ॥१८॥ ॐ परमसर्वज्ञाय नमः ॥१९॥ ॐ अर्हन्ते नमः ॥२०॥ ॐ
परमेष्ठिने नमः ॥२१॥ ॐ परमनेत्रे नमो नमः ॥२२॥ ॐ सम्यग्दृष्टे
सम्यग्दृष्टे त्रैलोक्यविजय त्रैलोक्यविजय धर्ममूर्ते धर्ममूर्ते धर्मनेमे
स्वाहा ॥२३॥

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु,

अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं स्वाहा ।

धूपैः सन्धूपितानेक कर्मभिर्धूपदायिनः,

अर्चयामि जिनाधीश-सदागमगुरुम् गुरुन् ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीमज्जिनश्रुतगुरुभ्यो नमः धूपं ।

सुरभीकृतदिग्वातै धूपधूमैर्जगतप्रियैः

यजामि जिनसिद्धेश-सूर्युपाध्यायसद्गुरुन् ॥२॥

ॐ ह्रीं पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः धूपं ।

मृद्वग्निसंगमसमुज्ज्वलितोरुधुमैः,

कृष्णागुरुप्रभृतिसुन्दरवस्तुधूपैः ।

प्रीत्या नटद्भिरिव ताण्डवनृत्यमुच्चैः,

कर्मारिदारुदहनं जिनमर्चयामि ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिने नमः धूपं ।

गोत्रक्षयसंभवसन्ततसंभव-सद्गुरुलघुतारूपरम् ।

सर्गमसर्गमपीतमनुक्षण-मुज्झितसर्गासर्गभरम् ।

कृष्णागुरुधूपैः सुरभितभूपैर्धूमैः स्पष्टहरिदूपै-

र्यायज्म सिद्धम् सर्व विशुद्धम् बुद्धमरुद्धम् गुणरूढम् ॥४॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने नमः धूपं ।

हुत्वास्वमप्यगुरुभिः सुरभीकृताशै-

रग्नौ समुच्छलितसंभृतवृन्दधूपैः ।

संधूपयामि चरणं शरणं शरण्यं,

पुण्यं भवभ्रमहरै र्गणिनाम् मुनिनाम् ॥५॥

ॐ ह्रीं आचार्यपरमेष्ठिने नमः धूपं ।

संधूपिताखिलदिशो घनशङ्कयेह,

वहिव्रजं स्वनटनादिव नर्तयद्भिः ।

मृद्वग्निसंगतिततागुरुधूपधूमै,

श्रीपाठकं क्रमयुगं वयमाह्वयायः ॥६॥

ॐ ह्रीं उपाध्यायपरमेष्ठिने नमः धूपं ।

स्वमग्नौ विनिक्षिप्य दौर्गध्यबन्धम्,

दशाशास्यमुच्चैः करोति त्रिसंध्यम् ।

तदुद्दामकृष्णागुरुद्रव्यधूपैः,

यजे साधुसंघं नटद्रव्यक्तरूपैः ॥७॥

ॐ ह्रीं साधुपरमेष्ठिने नमः धूपं ।

धूपैः संधूपितानेककर्मभिर्धू पदायिनः

वृषभादिजिनाधीशान्, वर्द्धमानान्तकान्यजे ॥८॥

ॐ ह्रीं वृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो नमः धूपं ।

इसके पश्चात् जिस मंत्र की जितनी जाप की है, उसके दशमांश उस मंत्र की आहुति देनी चाहिये ।

◆ शान्तिधारा ◆

आचार्य हाथ में कलश देकर जल की धारा देते हुए नीचे लिखा पुण्याहवाचन पढ़े--

ॐ पुण्याहं पुण्याह । लोकोद्योतनकरा अतीतकालसंजाता निर्वाणसागर महासाधुविमलप्रभशुद्धाभश्रीधरसुदत्तामलप्रभोद्धराग्निसन्मतिशिवकुसुमांजलि-
शिवगणोत्साहज्ञानेश्वरपरमेश्वरविमलेश्वरयशोधरकृष्णमतिज्ञानमतिशुद्धममिश्र-
भद्रकान्ता श्रेति चतुर्विंशतिभूतपरमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां । धारा ॥१॥

ॐ संप्रतिकालश्रेयस्करस्वर्गावतरणजन्माभिषेकपरिनिष्क्रमणकेवलज्ञान-
निर्वाणकल्याणविभूतिविभूषितमहाभ्युदयाः श्रीवृषभाजितशंभवाभिन्दनसुमति-
पद्मप्रभूसुपाश्वचन्द्रप्रभुपुष्पदन्तशीतलश्रेयोवासुपूज्यविमलानन्तधर्मशान्ति-
कुन्ध्वरमल्लिमुनिसुव्रतनमनेमिपाश्ववर्द्धमानाश्चेति वर्तमानचतुर्विंशतिपरमदेवाश्च वः
प्रीयन्तां प्रीयन्तां । धारा ॥२॥

ॐ भविष्यत्कालाभ्युदयप्रभवाः महापद्मसुरदेवसुप्रभस्वयंप्रभसर्वायुध-
जयदेवोदयदेवप्रभादेवोदङ्कदेवप्रश्नकीर्तिजयकीर्तिपूर्णबुद्धनिःकषायविमलप्रभ-
वहलनिर्मलचित्रगुप्तसमाधिगुप्तस्वयंभूकंदर्पजयनाथविमलनाथदिव्यवागनन्त-
वीर्याश्चेतिचतुर्विंशतिभविष्यत्परादेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां । धारा ॥३॥

ॐ त्रिकालवर्तिपरमधर्माभ्युदयाःसीमंधरयुगमंधराबाहुसुबाहुसंजातकस्वयं-
प्रभरुषभेश्वरानन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचन्द्राननचन्द्रबाहुभुजंगेश्वर-
नेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रजयदेवाजितवीर्याश्चेतिपञ्चविदेहक्षेत्रविहरमाणा
विंशतिपरमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां । धारा ॥४॥

ॐ वृषभसेनादिगणधरदेवाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां । धारा ॥५॥

ॐ कोष्ठबीजापादानुसारिबुद्धिसंभ्रन्नश्रोतृप्रज्ञावणाश्च वः प्रीयन्तां
प्रीयन्तां । धारा ॥६॥

ॐ आमसंक्षेडजल्लविडुत्सर्गसर्वोधिऋद्धयश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां ।
धारा ॥७॥



ॐ जलफलजंघातन्तुपुष्पश्रेणिपत्राग्निशिखाकाशचारणाश्च वः प्रीयन्तां
प्रीयन्तां । धारा ॥८॥

ॐ आहाररसवदक्षीणमहानसालयाश्च व प्रीयन्तां प्रीयन्तां । धारा ॥९॥

ॐ उग्रदीप्ततप्तमहाधोरानुपमतपश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां । धारा ॥१०॥

ॐ मनोवाक्कायबलिनश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां । धारा ॥११॥

ॐ क्रियाविक्रियाधारिणश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां । धारा ॥१२॥

ॐ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञाननिनश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां ।
धारा ॥१३॥

ॐ अष्टाङ्गबाह्यज्ञानदिवाकराः कुन्दकुन्दाद्यनेकदिगम्बरदेवाश्च वः
प्रीयन्तां प्रीयन्तां । धारा ॥१४॥

इह वाऽन्यनगरग्रामदेवतामनुजाः सर्वे गुरुभक्ताः जिनधर्मपरायणा भवन्तु ।
धारा ॥१५॥

दानतपोवीर्यानुष्ठानं नित्यमेवास्तु धारा ॥१६॥

मातृपितृभ्रातृपुत्रपौत्रकलत्रसुहृत्स्वजनसंबंधिसहितस्य अमुकस्य ते
धनाधान्यैश्वर्यबलद्युतियशःप्रमोदोत्सवा---प्रवर्द्धतां । धारा ॥१७॥

तुष्टिरस्तु । पुष्टिरस्तु । वृद्धिरस्तु । कल्याणमस्तु । अविग्नमस्तु ।
आयुष्वमस्तु । आरोग्यमस्तु । कर्मसिद्धिरस्तु । इष्टसम्पत्तिरस्तु ।
काममांगल्यौत्सवा सन्तु । पापनि शाम्यन्तु । घोराणि शाम्यन्तु । पुण्यं वर्द्धतां ।
धर्मो वर्द्धतां । श्री वर्द्धतां । कुलंगोत्रं चाभिवर्धेतां । स्वस्ति भद्रं चास्तु क्ष्वीं
क्ष्वीं हं सः स्वाहा । श्रीमज्जिनेन्द्रचरणारविदेष्वानन्द भक्तिः सदास्तु ।

इति हवनविधान समाप्त ।



◆ श्री मङ्गलाष्टक ◆

श्रीमनम्रसुरासुरेन्द्रमुकुटप्रद्योतरत्नप्रभाः,

भास्वत्पादनखेन्दवः प्रनचनाम्भोधधींदवः स्थायिनः ।

ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते घाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥१॥

सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नक्रयं पावनं,
मुक्तिश्रीनगराधिनाथजिनपत्युक्तोपवर्गप्रदः ।
धर्मः सूक्तिमूढा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्रयालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधमसी कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥२॥

ये सर्वोषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिगता पञ्चये,
ये चाष्टांगमहानिमित्तकुशला येष्टाविधाश्चरणाः ।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोपि बलिनो ये बुद्धिवद्धीश्वराः
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥३॥

कैलाश वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वासुपूज्यसज्जिनपतेः सम्पेदशैलेर्हतां ।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वररयार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवा कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥४॥

ज्योतिर्व्यन्तरभावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिता,
जम्बूशाल्मलचैत्यशाखिषु तथा वक्षाररूप्याद्रिषु ।
इष्वाकारगिरो च कुण्डलनशरे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मानुषोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥५॥

यो गर्भावरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परनिक्रमेण विभवो य केवलज्ञानभाक् ।

जय सिद्धचक्र देवा जय सिद्धचक्र देवा, करत तुम्हारी निशादिन मन से सुरनर मुनि सेवा ॥ जय सिद्ध ज्ञानवर्ण दर्शनावरणी मोह अन्तराया, नाम गोत्र वेदनी आयु को नाशि मोक्ष पाया ॥ जय सिद्ध ज्ञान अनन्त अनन्त दर्श सुख बल अनन्तधारी, अव्याबाध अमूर्ति अगुरुलघु अवगाहन धारी । जय सि. तुम अशरीर शुद्ध चिन्मूर्ति स्वातम रसभोगी, तुम्हें जपें आचार्योंपाध्याय सर्वसाधु योगी । जय सिद्ध ब्रह्मा विष्णु महेश सुरेश गणेश तुम्हें ध्यावें, भवि अलि तुम चरणाम्बुज सेवत निर्भयपद पावें । जय सिद्ध सङ्कट टारन अधम उधारन भव सागर तरणा, अष्टदुष्ट रिपु कर्म नष्ट करि जन्म-मरण हरणा । जय सिद्ध दीन दुःखी असमर्थ दरिद्री निर्धन तन रोगी, सिद्धचक्र को ध्यान भये ते सुरनर सुख भोगी । जय सिद्ध डाकिनी शाकिनी भूत पिशाचिनि व्यन्तर उपसर्गा, नाम लेत भगि जायें छिनक में सब देवी दर्गा । जय.

वन रन शत्रु अग्निजल पर्वत विषधर पञ्चानन, मिटें सकल भय कष्ट करैं जे सिद्धचक्र सुमिरन । जय.
मैनासुन्दरि कियो पाठ यह पर्व अठाइनि में, पति युत सात शतक कोढ़िन का गया कुष्ठ छिन में । जय.
कातिक फागुन साढ आठ दिन सिद्धचक्र पूजा, करैं शुद्ध भावों से 'मक्खन' लहैं न भव दूजा । जय.

◆ भजन ◆

श्री सिद्धचक्र का पाठ करो दिन आठ, ठाठ से प्राणी, फल पायो मैना रानी ॥ टेक ॥

मैनासुन्दरी एक नारी थी, कोढ़ी पति लिख दुःखियारी थी ।

नहिं पड़े चैन दिन रैन व्यथित अकुलानी ॥ फल ॥

जो पति का कष्ट मिटाऊँगी, तो उभयलोक सुख पाऊँगी ।

नहिं अजागलस्तनवत निष्फल जिन्दगानी ॥ फल ॥

इक दिवस गई जिनमंदिर में, दर्शन करि अति हर्षी उर में ।

फिर लखे साधु निर्ग्रन्थ दिग्गम्बर ज्ञानी ॥ फल ॥

बैठी मुनि को करि नमस्कार, निज निंदा करती बार-बार ।

भरि अश्रुनयन कही मुनिसों दुःखद कहानी ॥ फल ॥

बोले मुनि पुत्री धैर्य धरो, श्री सिद्धचक्र का पाठ करो ।

नहिं रहे कुष्ठ की तन में नाम निशानी ॥ फल ॥

सुनि साधु वचन हर्षी मैना, नहिं होंय झूठ मुनि के बैना ।

करि के श्रद्धा श्री सिद्धचक्र की ठानी ॥ फल ॥

जब पर्व अठाई आया है, उत्सवयुत पाठ कराया है ।

सब के तन छिड़का यन्त्र न्हवन का पानी ॥ फल ॥

गन्धोदक छिड़कत वसुदिन में नहिं रहा कुष्ठ किंचित् तन में ।

भई सातशतक की काया स्वर्ण समानी ॥ फल ॥

भव भोगि-भोगि योगेश भये, श्रीपाल कर्म हनि मोक्ष गये ।

दूजे भव मैना पावै शिव रजधानी ॥ फल ॥

जो पाठ करै मनवचतन से, वे छूटि जायें भवबन्धन से ।

'मक्खन' मत करो विकल्प कहा जिनवानी ॥ फल ॥

॥ समाप्त ॥



परस्पररोपग्रहो जीवानाम्

सभी तरहके
दिगम्बर जैन धार्मिक ग्रन्थ
मंगानेका पता



दिगम्बर जैन पुस्तकालय

खपाटिया चकला, गांधीचौक, सूरत-३.

फोन नं. (०२६१) ४२७६२१